साहित्य अमृत

मासिक

ज्येष्ठ-आषाढ, संवत्-२०७९ ❖ जून २०२२

वर्ष-२७ ❖ अंक-११ ❖ पृष्ठ ८४ | यू.जी.सी.-केयर लिस्ट में उल्लिखित | ISSN 2455-1171

संस्थापक संपादक

पं. विद्यानिवास मिश्र

निवर्तमान संपादक

डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी

श्री त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी

संस्थापक संपादक (प्रबंध)

श्री श्यामसुंदर

प्रबंध संपादक

पीयूष कुमार

संपादक

लक्ष्मी शंकर वाजपेयी

संयुक्त संपादक

डॉ. हेमंत कुकरेती

उप संपादक

उर्वशी अग्रवाल 'उर्वी'

कार्यालय

४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-०२

फोन : ०११-२३२८९७७७

०८४४८६१२२६९

इ-मेल : sahityaamrit@gmail.com

शुल्क

एक अंक—₹ ३०

वार्षिक (व्यक्तियों के लिए)—₹ ३००

वार्षिक (संस्थाओं/पुस्तकालयों के लिए)—₹ ४००

विदेश में

एक अंक—चार यू.एस. डॉलर (US$4)

वार्षिक—पैंतालीस यू.एस. डॉलर (US$45)

साहित्य अमृत के बैंक खाते का विवरण

बैंक ऑफ इंडिया

खाता सं. : **600120110001052**

IFSC : **BKID0006001**

प्रकाशक, मुद्रक तथा स्वत्वाधिकारी पीयूष कुमार द्वारा ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२ से प्रकाशित एवं न्यू प्रिंट इंडिया प्रा.लि., ८/४-बी, साहिबाबाद इंडस्ट्रियल एरिया, साइट-IV, गाजियाबाद-२०१०१० द्वारा मुद्रित।

✍ **संपादकीय**

जीवन रक्षा के लिए… ४

✍ **प्रतिस्मृति**

खेल/ *जैनेंद्र कुमार* ६

✍ **कहानी**

असलियत ने खोली आँखें/ *आचार्य मायाराम पतंग* ८

अनमोल/ *अमिता दुबे* १४

अनोखा मिलन/ *वीरेंद्र बहादुर सिंह* ४०

गिरगिट/ *संजय कुमार मालवीय* ४८

पानी की आत्मकथा/ *राकेश चक्र* ५६

✍ **लघुकथा**

लघुकथाएँ/ *सुरेंद्र कुमार अरोड़ा* ३४

पॉकेटमनी का दंश/ *सत्य शुचि* ४७

✍ **आलेख**

बालमन की खुशबू से महकती लय-ताल में गुँथी बाल-कविताएँ/ *शकुंतला कालरा* १०

'आवारा' उग्र का अद्‌भुत नाटक/ *राजशेखर व्यास* १८

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ और हिंदी/ *विजय कुमार* २५

स्वतंत्रता आंदोलन में हिंदी कवियों की भूमिका/ *पुरुषोत्तम पाटील* ५२

बायाँ-दायाँ हाथ/ *एम.एल. खरे* ७१

✍ **कविता**

ग़ज़लें/ *दीक्षित दनकौरी* १३

द्रौपदी की ऊहापोह : 'व्यथा कहे पांचाली' से.../ *उर्वशी अग्रवाल 'उर्वी'* २२

तीन गीत/ *बनज कुमार बनज* २९

उम्र के इस पड़ाव पर/ *कर्नल कौशल मिश्र* ३३

ग़ज़लें/ *पंडित सुरेश नीरव* ३९

मजदूर और कवि/ *चंद्रकांत गुप्ते* ५५

तेरा गीत गाऊँ, माँ/ *चंद्रमणि झा* ६२

यह मेरा दर्द है/ *केदारनाथ 'सविता'* ६३

सूखी टोंटी पर चिड़िया/ *बी.एल. आच्छा* ७०

✍ **जिन्होंने जगाई स्वाधीनता की अलख**

रानी चेन्नम्मा, लाला लाजपतराय ३०

✍ **राम झरोखे बैठ के**

शिक्षा 'गुरुकुल' से लेकर 'गृहकुल' तक/ *गोपाल चतुर्वेदी* ३६

✍ **संस्मरण**

पर्थ-प्रवास के कुछ संस्मरण/ *श्रीधर द्विवेदी* २६

विष्णु प्रभाकरजी के साथ शांतिनिकेतन में कुछ दिन/ *रति सक्सेना* ६०

✍ **ललित-निबंध**

हिमगिरि, तुम मौन ही रहना! *नीता चौबीसा* ४४

✍ **साहित्य का भारतीय परिपार्श्व**

पाँच मराठी कविताएँ/ *वृषाली किन्हाळकर* ५९

✍ **व्यंग्य**

आपका शुभचिंतक, यमराज!/ *अशोक गौतम* ६४

✍ **लोक-साहित्य**

लोकभाषाओं में लोकजीवन/ *आस्था तिवारी* ६६

✍ **साहित्य का विश्व परिपार्श्व**

लघु कविताएँ/ *डेला हिक्स-विल्सन* ६९

✍ **यात्रा-वृत्तांत**

हंपी, जहाँ शिलाओं पर खुदी है रामकथा/ *अरुणा गुप्ता* ७४

✍ **बाल-संसार**

घोंसला/ *पवन चौहान* ७२

नम्रता की मुस्कान/ *दिनेश विजयवर्गीय* ७६

✍ पाठकों की प्रतिक्रियाएँ ७७

✍ वर्ग-पहेली ७८

✍ साहित्यिक गतिविधियाँ ७९

साहित्य अमृत में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। संपादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

जीवन रक्षा के लिए...

जून के महीने में एक दिवस ऐसा मनाया जाता है, जो पूरे विश्व के लगभग ८०० करोड़ मनुष्यों के लिए सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है—'विश्व पर्यावरण दिवस'। यदि यह कहा जाए कि पूरे विश्व में लगभग हर दिन कोई-न-कोई दिवस मनाया जाता है, उनमें इस दिवस को किसी भी धार्मिक, सांस्कृतिक, सामाजिक पर्व से अधिक महत्त्व मिलना चाहिए, क्योंकि इस दिवस पर पूरी मनुष्य जाति का अस्तित्व टिका हुआ है, तो अनुचित न होगा।

क्या इतना पर्याप्त है कि संयुक्त राष्ट्र इस दिवस के लिए एक 'थीम' दे दे, उस थीम के आधार पर कुछ विमर्श तथा अन्य आयोजन कर लिये जाएँ! क्या यह दिवस मात्र सरकारों अथवा सरकारी संस्थाओं तक ही सीमित रहना चाहिए! यदि इस दिवस पर धरती के समस्त मनुष्यों ने ध्यान नहीं दिया तो यह निश्चय ही अनर्थकारी होगा।

आज पर्यावरण के बिगड़ते संतुलन को महसूस करना एक आम इनसान के लिए भी कितना आसान हो गया है। दशहरा महोत्सव मनाने के लिए जब रामलीलाएँ शुरू होती थीं तो प्राय: लोग एक चादर, शॉल अथवा कंबल लेकर जाया करते थे, क्योंकि दशहरा सर्दी की आहट लेकर आता था। अब दशहरा क्या, दीवाली निकल जाती है, सर्दी का दूर-दूर तक पता नहीं होता। उधर मार्च-अप्रैल में ऐसी गरमी पड़ने लगती है कि मई-जून फीके पड़ जाएँ। ऐसा क्यों हो रहा है?

बड़ा सीधा सा उत्तर है 'जलवायु परिवर्तन'। जलवायु परिवर्तन, जिसने पूरे विश्व में हाहाकार मचा रखा है। विश्व का तापमान बढ़ता जा रहा है। ग्लेशियर पिघल रहे हैं। भू-जल का स्तर निरंतर घटता जा रहा है। जिन क्षेत्रों में पहले ३० फीट खोदने पर पानी मिल जाता था, वहाँ अब १२० से १४० फीट नीचे पानी मिलता है। फसलों पर जलवायु परिवर्तन का भयानक असर पड़ना शुरू हो गया है। गेहूँ-चावल या अन्य फसलों का उत्पादन पहले के मुकाबले कम होता जा रहा है। कई देशों के कई क्षेत्र जल-समाधि लेने के कगार पर हैं। भारतीय शास्त्रों में वर्णित 'प्रलय' शायद इसी जलवायु परिवर्तन की अग्रिम चेतावनी है। हाल ही की असम की भयावह बाढ़ की कड़वी समृतियाँ दशकों तक आहत करेंगी। १५०० गाँवों का जलमग्न हो जाना, फसलों का नष्ट हो जाना, लाखों लोगों का घर छोड़कर शरणार्थी बन जाना, करोड़ों की संपदा का नष्ट हो जाना अत्यंत दुखद त्रासदी है। ऐसी आक्रामक वर्षा हुई कि पूरी-की-पूरी रेलगाड़ी उलट गई। भयावह जलवृष्टि, बाढ़ एवं सूखा दोनों ही जलवायु परिवर्तन के कारण निरंतर बढ़ते जा रहे हैं। वर्षा के दिनों में वर्षा न होना, और अनपेक्षित वर्षा का होना भी जलवायु परिवर्तन का ही रूप है। अब एक कुचक्र को समझने का प्रयास करते हैं।

दिल्ली महानगर का ही उदाहरण लें तो कई दशक पहले लाखों लोग छतों पर सोते थे। बच्चों को कहानियाँ सुनने को मिलती थीं, आसमान के तारे देखने, पहचानने का सुख मिलता था। अब कानून व्यवस्था के बिगड़े हालात तथा भौतिक सुविधाओं के वर्चस्व के कारण छतों पर सोने और प्राकृतिक हवा का आनंद लेने का रिवाज समाप्त हो गया। अब एक-एक घर में दो-दो, तीन-तीन एयर कंडीशनर चलना आम बात हो गई। जहाँ ए.सी. नहीं, वहाँ कूलर या पंखे...। सोचिए कि बिजली की खपत कितनी बढ़ गई। बिजली का उत्पादन अभी भी सबसे अधिक कोयले से हो रहा है। तो सारी कहानी समझना कितना आसान है। ए.सी. एक कमरे को भले ही ठंडा कर दे, लेकिन आसपास कितनी गरमी फेंकता है। हम सब जानते हैं कि यह पर्यावरण को बुरी तरह क्षतिग्रस्त करता है। यह भी विचारणीय है कि दुनिया के सर्वाधिक तापमान वाले १५ नगरों में १२ नगर भारत के हैं। जी हाँ, २०० देशों में सर्वाधिक तापमान वाले सर्वाधिक नगर भारत में हैं! नगरों की संख्या भी बढ़ती जा रही है, नगरों की ओर पलायन भी बढ़ रहा है। नगरों की आबादी असंतुलित ढंग से बढ़कर नई-नई चुनौतियों को जन्म दे रही है।

पूरे विश्व के देशों ने मिल-बैठकर कार्बन उत्सर्जन कम करने की प्रतिज्ञा की है। विडंबना यह है कि जब यह प्रतिज्ञा की गई, उसके

दस साल बाद के कार्बन उत्सर्जन में १० से ११ प्रतिशत की बढ़ोतरी पाई गई। कारण सीधा-सादा है कि सरकारें भी खानापूरी करती रहती हैं और आम लोग सबकुछ सरकारों के भरोसे छोड़कर निश्चिंत हो जाते हैं। पॉलीथीन पर्यावरण के लिए बेहद नुकसानदायक है किंतु बहुत सारी जद्दोजहद के बावजूद पॉलीथीन ही पॉलीथीन दैनिक जीवन पर हावी है। भारत सरकार ने कुछ बरस पहले 'पर्यावरण मंत्रालय' के नाम में बदलाव कर 'पर्यावरण एवं जलवायु परिवर्तन' मंत्रालय कर दिया, ताकि जलवायु परिवर्तन पर विशेष ध्यान दिया जा सके। सी.एन.जी. बसों का चलना, ई-रिक्शा का चलन, विद्युत् कारों की संख्या बढ़ाने का प्रयास जैसे अनेक उपाय भी उल्लेखनीय रहे हैं। 'सिंगल यूज प्लास्टिक' पर रोक लगाने का प्रयास आदि अनेक कदम उठाए जा रहे हैं, किंतु अभी रास्ता बहुत लंबा है और मंजिल दूर है। जलवायु परिवर्तन का सबसे दु:खद पहलू है इसके कारण होनेवाले रोग तथा उससे होनेवाली मौतें। पिछले दिनों एक वैश्विक संस्था के सर्वेक्षण के परिणाम हमें डराते हैं। २०२१ में पूरी दुनिया में जलवायु परिवर्तन से होनेवाले रोगों से लगभग ७० लाख लोगों ने दम तोड़ा और इनमें भी भारत में होनेवाली मौतें सर्वाधिक हैं।

अब यह समझना कठिन नहीं कि जलवायु परिवर्तन की समस्या कितनी भयानक, कितनी गंभीर है। मात्र सरकारों के भरोसे इसका समाधान छोड़ देना उचित नहीं होगा। सामाजिक संस्थाओं को, मीडिया को, बुद्धिजीवियों, साहित्यकारों तथा आम नागरिकों को अपनी-अपनी जिम्मेदारियाँ निभानी होंगी। भारत में लगभग ८०० टी.वी. चैनल हैं, लेकिन जलवायु परिवर्तन पर कोई चर्चा आपको याद पड़ती है! अपवादों को छोड़कर शायद ही किसी चैनल ने इस पर सोचा भी हो—जबकि यह करोड़ों के जीने-मरने से जुड़ा विषय है। इसी प्रकार पर्यावरण की चिंता पर कितनी कहानियाँ, कितने उपन्यास आपको याद आते हैं। हाँ, कविताओं में अवश्य उल्लेख एवं संकेत मिलते रहते हैं। लेकिन चैनलों पर कविताओं के जो कार्यक्रम होते हैं, वहाँ ऐसे विषय नदारद मिलेंगे। हम सभी को स्वच्छ हवा, पानी चाहिए। वायु प्रदूषण नगरों के लिए चिंता का विषय बन गया है। हम सभी को यदि धरती को बचाना है, जीवन को बचाना है तो जलवायु परिवर्तन के खतरों को गंभीरता से समझना होगा।

अमृत महोत्सव की पुकार

बात कुछ वर्ष पुरानी है। अमरीका के एक नगर में तेजी से बढ़ रही कार को अचानक रोकना पड़ा था। सारा का सारा ट्रैफिक रुक गया था। मैंने उत्सुकतावश पूछा था, क्या यहाँ भी 'वी.आई.पी. रूट' लगता है, जैसे भारत में किसी अति महत्त्वपूर्ण व्यक्ति के लिए ट्रैफिक रोक दिया जाता है। पता चला कि ऐसा कुछ नहीं है। एक स्कूल बस रुकी थी। बच्चे के साथ एक अध्यापिका भी उतरी थी और बच्चे को सड़क पार कर उसके घर के दरवाजे तक सुरक्षित पहुँचाया था। स्कूल बस के चलते ही ट्रैफिक वापस चल पड़ा था। यह थी सरकार एवं संस्था के स्तर पर गहरी मानवीय संवेदना की एक झलक। इसी प्रकार वहाँ कोई भी ऐसी पार्किंग नहीं दिखी, जहाँ दिव्यांगों (विकलांगों) के लिए आरक्षित स्थान न हो। किसी भी मॉल अथवा अन्य दर्शनीय इमारतों में बच्चों के लिए विशेष कक्ष, विशेष सुविधाएँ नि:शुल्क उपलब्ध रहती हैं। इसी प्रकार कई देशों में महिलाओं के शौचालयों में नि:शुल्क सैनिटरी पैड रखे मिल जाएँगे, ताकि उनकी विशेष आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके। कुछ देशों में एक कैबिनेट मंत्री 'हैप्पीनेस मिनिस्ट्री' (प्रसन्नता मंत्रालय) सँभालता है ताकि वह जनता के लिए आवश्यक उन सुविधाओं पर ध्यान दे सके, जो जनता की परेशानियाँ दूर कर खुशियाँ दें। कुछ देशों में आम लोगों को स्वस्थ बनाने के लिए आवश्यक उपकरण सार्वजनिक स्थलों पर नि:शुल्क उपलब्ध कराए जाते हैं। कुल मिलाकर सरकारें जनकल्याण के लिए प्रयास करती हैं तथा 'संवेदना' को संस्थागत स्वरूप देती हैं।

भारत में दो माह बाद स्वतंत्रता के ७५ वर्ष पूरे हो रहे हैं। अमृत महोत्सव की एक पुकार यह भी है कि अंग्रेजों द्वारा भारत के दमन के लिए बनाई गई 'व्यवस्था' और 'नौकरशाही के चरित्र' में आमूलचूल बदलाव किया जाए। यह कोई चुटकला नहीं है कि बीमारी के कारण जुलाई में जीवित होने का प्रमाण-पत्र न दे पानेवाले बुजुर्ग से अगस्त में भी जुलाई का प्रमाण-पत्र जमा करने की माँग की गई। आज भी कोई छोटा-बड़ा नौकरशाह अच्छे-भले काम में कोई कमी निकालकर, रोड़ा अटकाकर ही अपनी ताकत, अपना रुतबा प्रदर्शित करता है तथा अपने लिए भ्रष्टाचार का द्वार खोलता है। आज भी एक सीधा-सादा आम नागरिक पुलिस थाने में जाने से डरता है। पुलिस की क्रूरता, दुर्व्यवहार की कहानियाँ आए दिन देखने-सुनने को मिलती हैं। अमृत महोत्सव में अनेकानेक सांस्कृतिक आयोजनों का अपना महत्त्व है, किंतु यह भी महत्त्वपूर्ण है कि हर भारतवासी को 'सम्मान' एवं 'गरिमा' तथा किसी भी प्रकार के शोषण-उत्पीड़न से मुक्ति मिले एवं पूरा तंत्र मानवीय संवेदना से परिपूर्ण हो। 'संवेदना' को संस्थागत रूप दिया जाए। बच्चों, महिलाओं, दिव्यांगों, बुजुर्गों पर विशेष ध्यान दिया जाए। केंद्र सरकार अथवा प्रांतीय सरकारों ने समय-समय पर कुछ प्रयास किए भी हैं, किंतु इसे गहरे सोच-विचार के साथ संगठित रूप दिया जाए। आखिर हम एक महान् संस्कृति के वाहक हैं।

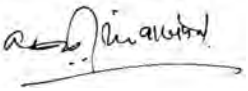

(लक्ष्मी शंकर वाजपेयी)

खेल

● जैनेंद्र कुमार

मौन-मुग्ध संध्या स्मित प्रकाश से हँस रही थी। उस समय गंगा के निर्जन बालुका-स्थल पर एक बालक और एक बालिका अपने को और सारे विश्व को भूल, गंगा तट के बालू और पानी को अपना एकमात्र आत्मीय बना, उनसे खिलवाड़ कर रहे थे।

प्रकृति इन निर्दोष परमात्मा-खंडों को निस्स्तब्ध और निर्निमेष निहार रही थी। बालक कहीं से एक लकड़ी लाकर तट के जल को छटा-छट उछाल रहा था। पानी मानो चोट खाकर भी बालक से मित्रता जोड़ने के लिए विह्वल हो उछल रहा था। बालिका अपने एक पैर पर रेत जमाकर और थोप-थोपकर एक भाड़ बना रही थी।

बनाते-बनाते भाड़ से बालिका बोली, "देख, ठीक नहीं बना तो मैं तुझे फोड़ दूँगी।" फिर बड़े प्यार से थपका-थपकाकर उसे ठीक करने लगी। सोचती जाती थी—इसके ऊपर मैं एक कुटी बनाऊँगी। वह मेरी कुटी होगी। और मनोहर?···नहीं, वह कुटी में नहीं रहेगा, बाहर खड़ा-खड़ा भाड़ में पत्ते झोंकेगा। जब वह हार जाएगा, बहुत कहेगा, तब मैं उसे अपनी कुटी के भीतर ले लूँगी।

मनोहर उधर अपने पानी से हिल-मिलकर खेल रहा था। उसे क्या मालूम कि यहाँ अकारण ही उस पर रोष और अनुग्रह किया जा रहा है।

बालिका सोच रही थी—मनोहर कैसा अच्छा है, पर वह दंगई बड़ा। हमें छेड़ता ही रहता है। अबके दंगा करेगा तो हम उसे कुटी में साझी नहीं करेंगे। साझी होने को कहेगा तो उससे शर्त करवा लेंगे, तब साझी करेंगे। बालिका सुरबाला सातवें वर्ष में थी। मनोहर कोई दो साल उससे बड़ा था।

बालिका को अचानक ध्यान आया—भाड़ की छत तो गरम होगी। उस पर मनोहर रहेगा कैसे? मैं तो रह जाऊँगी। पर मनोहर तो जलेगा। फिर सोचा—उससे मैं कह दूँगी भई, छत बहुत तप रही है, तुम जलोगे, तुम मत आओ। अगर नहीं माना? मेरे पास वह बैठने को आया ही—तो मैं कहूँगी—भाई, ठहरो, मैं ही बाहर आती हूँ। पर वह मेरे पास आने की जिद करेगा क्या? जरूर करेगा, वह बड़ा हठी है। पर मैं उसे आने नहीं दूँगी। बेचारा तपेगा। भला कुछ ठीक है! ज्यादा कहेगा, मैं धक्का दे दूँगी और कहूँगी—अरे, जल जाएगा मूरख? यह सोचने पर उसे बड़ा मजा सा आया, पर उसका मुँह सूख गया। उसे मानो सचमुच ही धक्का खाकर मनोहर के गिरने का हास्योत्पादक और करुण दृश्य सत्य की भाँति प्रत्यक्ष हो गया।

बालिका ने दो-एक पक्के हाथ भाड़ पर लगाकर देखा—भाड़ अब बिल्कुल बन गया है। माँ जिस सतर्क-सावधानी के साथ अपने नवजात शिशु को बिछौने पर लेटाने को छोड़ती है, वैसे ही सुरबाला ने अपना पैर धीरे-धीरे भाड़ के नीचे से खींच लिया। इस क्रिया में वह सचमुच भाड़ को पुचकारती सी जाती थी। उसके पैर ही पर तो भाड़ टिका है, पैर का आश्रय हट जाने पर बेचारा कहीं टूट न पड़े! पैर साफ निकालने पर भाड़ जब ज्यों-का-त्यों टिका रहा, तब बालिका एक बार आह्लाद से नाच उठी।

बालिका एकबारगी ही बेवकूफ मनोहर को इस अलौकिक चातुर्य से परिपूर्ण भाड़ के दर्शन के लिए दौड़कर खींच लाने को उद्यत हो गई! मूर्ख लड़का पानी से उलझ रहा है, यहाँ कैसी जबरदस्त कारगुजारी हुई है—सो नहीं देखता! ऐसा पक्का भाड़ उसने कहीं देखा भी है!

पर सोचा—अभी नहीं; पहले कुटी तो बना लूँ। यह सोचकर बालिका ने रेत की एक चुटकी ली और बड़े धीरे से भाड़ के सिर पर छोड़ दी। फिर दूसरी, फिर तीसरी, फिर चौथी। इस प्रकार चार चुटकी रेत धीरे-धीरे छोड़कर सुरबाला ने भाड़ के सिर पर अपनी कुटी तैयार कर ली।

भाड़ तैयार हो गया। पर पड़ोस का भाड़ जब बालिका ने पूरा-पूरा याद किया तो पता चला एक कमी रह गई। धुआँ कहाँ से निकलेगा? तनिक सोचकर उसने एक सींक टेढ़ी करके उसमें गाड़ दी। बस, ब्रह्मांड का सबसे संपूर्ण भाड़ और विश्व की सबसे सुंदर वस्तु तैयार हो गई।

वह उस उजड्ड मनोहर को इस अपूर्व कारीगरी का दर्शन कराएगी, पर अभी जरा थोड़ा देख तो और ले। सुरबाला मुँह बनाए आँखें स्थिर करके इस भाड़-श्रेष्ठ को देख-देखकर विस्मित और पुलकित होने लगी। परमात्मा कहाँ बिराजते हैं, कोई इस बाला से पूछे तो वह बताए—इस भाड़ के जादू में।

मनोहर अपनी 'सुरी-सुरो-सुर्री' की याद कर पानी से नाता तोड़, हाथ की लकड़ी को भरपूर जोर से गंगा की धारा में फेंककर जब मुड़ा, तब श्रीसुरबाला देवी एकटक अपनी परमात्मा लीला के जादू को बूझने और सुलझाने में लगी हुई थीं।

मनोहर ने बाला की दृष्टि का अनुसरण कर देखा—श्रीमतीजी बिल्कुल अपने भाड़ में अटकी हुई हैं। उसने जोर से कहकहा लगाकर एक लात में का काम तमाम कर दिया।

न जाने क्या किला फतह किया हो, ऐसे गर्व से भरकर निर्दयी पर चिल्लाया, "सुर्रो रानी!"

सुर्रो रानी मूक खड़ी थी। उनके मुँह पर जहाँ अभी एक विशद्ध रस वहाँ अब एक शून्य फैल गया। रानी के सामने एक स्वर्ग आ खड़ा हुआ था। वह उन्हीं के हाथ का बनाया हुआ था और वह एक व्यक्ति को अपने साथ लेकर उस स्वर्ग की एक-एक मनोरमता और स्वर्गीयता को दिखलाना चाहती थीं। हा हंत! वही व्यक्ति आया और उसने अपनी लात से उसे तोड़-फोड़ डाला! रानी हमारी बड़ी व्यथा से भर गई।

हमारे विद्वान् पाठकों में से कोई होता तो उन मूर्खों को समझाता—"यह संसार क्षण-भंगुर है। इसमें दु:ख क्या और सुख क्या! जो जिससे बनता है, वह उसी में लय हो जाता है—इसमें शोक और उद्वेग की क्या बात है? यह संसार जल का बुदबुदा है, फूटकर किसी रोज जल में ही मिल जाएगा। फूट जाने में ही बुदबुदे की सार्थकता है। जो यह नहीं समझते, वे दया के पात्र हैं। री, मूर्खा लड़की, तू समझ। सब ब्रह्मांड ब्रह्म का है और उसी में लीन हो जाएगा। इससे तू किसलिए व्यर्थ व्यथा सह रही है? रेत का तेरा भाड़ क्षणिक था, क्षण में लुप्त हो गया, रेत में मिल गया। इस पर खेद मत कर, इससे शिक्षा ले। जिसने लात मारकर उसे तोड़ा है, वह तो परमात्मा का केवल साधन-मात्र है। परमात्मा तुझे नवीन शिक्षा देना चाहते हैं। लड़की, तू मूर्ख क्यों बनती है? परमात्मा की इस शिक्षा को समझ और परमात्मा तक पहुँचने का प्रयास कर। आदि-आदि।"

पर बेचारी बालिका का दुर्भाग्य, कोई विज्ञ धीमान् पंडित तत्त्वोपदेश के लिए उस गंगातट नहीं पहुँच सका। हमें तो यह भी संदेह है कि सुर्री एकदम इतनी जड़-मूर्खा है कि यदि कोई परोपकाररत पंडित परमात्मा-निर्देश से वहाँ पहुँचकर उपदेश देने भी लगते तो वह उनकी बात को न सुनती और समझती। पर अब तो वहाँ निर्बुद्धि शठ मनोहर के सिवा कोई नहीं है और मनोहर विश्वतत्त्व की एक भी बात नहीं जानता। उसका मन न जाने कैसा हो रहा है। कोई जैसे उसे भीतर-ही-भीतर मसोस डाल रहा है। लेकिन उसने बनकर कहा, "सुर्रो, दुत् पगली! रूठती है?"

सुरबाला वैसी ही खड़ी रही।

"सुरी, रूठती क्यों है?" बाला तनिक न हिली।

"सुरी! सुरी!···ओ, सुरो!"

अब बनना न हो सका। मनोहर की आवाज हठात् कँपी सी निकली।

सुरबाला अब और मुँह फेरकर खड़ी हो गई। स्वर के इस कंपन का सामना शायद उससे न हो सका।

"सुरी···ओ सुरिया! मैं मनोहर हूँ···मनोहर! मुझे मारती नहीं।"

यह मनोहर ने उसके पीठ पीछे से कहा और ऐसे कहा, जैसे वह यह प्रकट करना चाहता है कि वह रो नहीं रहा है।

"हम नहीं बोलते।" बालिका से बिना बोले न रहा गया। उसका भाड़ शायद स्वर्गविलीन हो गया। उसका स्थान और बाला की सारी दुनिया का स्थान काँपती हुई मनोहर की आवाज ने ले लिया।

मनोहर ने बड़ा बल लगाकर कहा, "सुरी, मनोहर तेरे पीछे खड़ा है। वह बड़ा दुष्ट है। बोल मत, पर उस पर रेत क्यों नहीं फेंक देती, मार क्यों नहीं देती! उसे एक थप्पड़ लगा—वह अब कभी कसूर नहीं करेगा।"

बाला ने कड़ककर कहा, "चुप रहो जी!"

"चुप रहता हूँ, पर मुझे देखोगी भी नहीं?"

"नहीं देखते।"

"अच्छा मत देखो। मत ही देखो। मैं अब कभी सामने न आऊँगा, मैं इसी लायक हूँ।"

"कह दिया तुमसे, तुम चुप रहो। हम नहीं बोलते।"

बालिका में व्यथा और क्रोध कभी का खत्म हो चुका था। वह तो पिघलकर बह चुका था। यह कुछ और ही भाव था। यह एक उल्लास था, जो व्याज-कोप का रूप धर रहा था। दूसरे शब्दों में यह स्त्रीत्व था।

मनोहर बोला, "लो सुरी, मैं नहीं बोलता। मैं बैठ जाता हूँ। यहीं बैठा रहूँगा। तुम जब तक न कहोगी, न उठूँगा, न बोलूँगा।"

मनोहर चुप बैठ गया। कुछ क्षण बाद हारकर सुरबाला बोली, "हमारा भाड़ क्यों तोड़ा जी? हमारा भाड़ बनाकर दो!"

"लो, अभी लो।"

"हम वैसा ही लेंगे।"

"वैसा ही लो, उससे भी अच्छा!"

"उसपै हमारी कुटी थी, उसपै धुएँ का रास्ता था।"

"लो, सब लो। तुम बताती जाओ, मैं बनाता जाऊँ।"

"हम नहीं बताएँगे। तुमने क्यों तोड़ा? तुमने तोड़ा, तुम्हीं बनाओ।"

"अच्छा, पर तुम इधर देखो तो।"

"हम नहीं देखते, पहले भाड़ बनाकर दो।"

मनोहर ने एक भाड़ बनाकर तैयार किया। कहा, "लो, भाड़ बन गया।"

"बन गया?"

"हाँ।"

"धुएँ का रास्ता बनाया। कुटी बनाई?"

"सो कैसे बनाऊँ—बताओ तो?"

"पहले बनाओ, तब बताऊँगी।"

भाड़ के सिर पर एक सींक लगाकर और एक-एक पत्ते की ओट लगाकर कहा, "बना दिया।"

तुरंत मुड़कर सुरबाला ने कहा, "अच्छा, दिखाओ।"

'सींक ठीक नहीं लगी जी', 'पत्ता ऐसा लगेगा' आदि-आदि संशोधन कर चुकने पर मनोहर को हुक्म हुआ—

"थोड़ा पानी लाओ, भाड़ के सिर का डालेंगे।"

मनोहर पानी लाया।

गंगाजल से कर-पात्रों द्वारा यह भाड़ का अभिषेक करना ही चाहता था कि सुर्रो रानी ने एक लात से भाड़ के सिर को चकनाचूर कर दिया।

सुरबाला रानी हँसी से नाच उठी। मनोहर उत्फुल्लता से कहकहा लगाने लगा। उस निर्जन प्रांत में वह निर्मल शिशु-हास्यारव लहरें लेता हुआ व्याप्त हो गया। सूरज महाराज बालकों जैसे लाल-लाल मुँह से गुलाबी-गुलाबी हँसी हँस रहे थे। गंगा मानो जानबूझकर किलकारियाँ मार रही थी और···और वे लंबे ऊँचे-ऊँचे दिग्गज पेड़ दार्शनिक पंडितों की भाँति, सब हास्य की सार-शून्यता पर मानो मन-ही-मन गंभीर तत्त्वालोचन कर, हँसी में भूले हुए मूर्खों पर थोड़ी दया बख्शना चाह रहे थे।

□

कहानी

असलियत ने खोली आँखें

● **आचार्य मायाराम पतंग**

मैं लक्ष्मी जनरल स्टोर का मालिक हूँ। मेरे पास चार नौकर सेल्समैन के नाते काम करते हैं। एक चौकीदार है। मैंने बी.कॉम. दिल्ली विश्वविद्यालय से पास किया है। मैं किसी बड़ी फर्म में नौकरी की तलाश में था। साल भर भागदौड़ करके थक गया तो पिताजी ने कहा, "बेटा, क्यों परेशान होते हो, यह स्टोर भी तो तुम्हारा ही है। कल से तुम इसकी गद्दी को सँभालो। वैसे भी मैं अब ७० से ऊपर का हो गया हूँ। एक-दो महीने मैं भी तुम्हारे साथ बैठूँगा। जब तुम ठीक से सँभाल लोगे तो मैं घर ही रहा करूँगा।" पिताजी की बात आसानी से समझ में आ गई। मुझे अगर नौकरी मिल भी जाती तो नौकर ही तो कहलाता। अब मैं मालिक हूँ। नौकर मेरे आदेश का पालन करते हैं। बार-बार मुझे मालिक और सर कहते हैं। ग्राहक मुझे लालाजी कहते हैं।

अब तो मैं कहता हूँ, ईश्वर जो करता है, अच्छा ही करता है। मुझे नौकरी नहीं मिली तो ठीक ही हुआ। किसी की जी-हुजूरी करता। सारे दिन काम करता और महीने भर वेतन का इंतजार करता। अब मैं मालिक हूँ। काम वे करते हैं। मैं आदेश देता हूँ। महीने भर का लेखा-जोखा भी मुनीम करता है। सब काम करने वालों का वेतन देकर भी बहुत बचता है।

एक पढ़ी-लिखी लड़की से मेरे पिताजी ने मेरा विवाह कर दिया। लड़की वालों से मेरे पिताजी ने कोई दान-दहेज नहीं माँगा। यद्यपि मैं चाहता था कि एक बार ही तो विवाह होना है, जो शान से हो। ससुराल से भी कुछ याद रखने योग्य मिले। परंतु पिताजी ने ही मना कर दिया तो मैं क्या करता। विवाह हो गया। पत्नी सुंदर थी। सब शिकायत मिट गई। थोड़ी खर्चीली भी थी, कोई बात नहीं। मेरी आमदनी भी कम नहीं थी। उसके फैशन के खर्चे झेलने में मुझे कोई कठिनाई नहीं हुई।

दो वर्ष बाद मेरी पत्नी ने एक पुत्र को जन्म दिया। मेरे पिताजी ने खुशी मनाने में कोई कसर नहीं छोड़ी। मैंने अपने दोस्तों, रिश्तेदारों तथा पड़ोसियों की दावत की। ससुराल से भी सब आए। खूब नाच-गाना हुआ। बेटे का नाम सुरेश रखा गया। रमेश का बेटा सुरेश नाम जँचता है। सुरेश को सभी प्यार करते थे। मेरे पिताजी तो दिन-रात उसे खिलाने में लगे रहते थे। अब तो स्टोर पर जाने का नाम भी नहीं लेते थे। मेरी पत्नी से भी अधिक सुरेश की पालना पिताजी ही करते थे। उसे दूध पिलाना, फल, मीठा खिलाना, उँगली पकड़कर चलना, लोरी सुनाकर सुलाना, सबकुछ पिताजी करते।

मुझे याद नहीं, मेरी माँ कब रामजी को प्यारी हुई थीं। उनका नाम था लक्ष्मी। लक्ष्मी जनरल स्टोर दुकान का नाम उन्हीं के नाम पर था। उनकी

जाने-माने साहित्यकार। तीन कविता-संग्रह, पाँच नैतिक शिक्षा, छह पुस्तकें शिक्षण साहित्य पर, दो गद्य-संग्रह, दो खंडकाव्य, चार संपादित पुस्तकें, छह गीत-संकलन। हिंदी अकादमी तथा दिल्ली राज्य सरकार द्वारा सम्मानित। संप्रति 'सेवा समर्पण' मासिक में लेखन तथा परामर्शदाता; राष्ट्रवादी साहित्यकार संघ (दि.प्र.) के अध्यक्ष; संपादक 'सविता ज्योति'।

एक फोटो फ्रेम में मढ़ी हुई कमरे की दीवार पर टँगी थी। पिताजी कभी-कभी उस तसवीर के सामने खड़े होकर मौन देखते रहते। कभी-कभी मैं भी माँ की तसवीर को श्रद्धापूर्वक देखता।

एक दिन मेरी पत्नी बोली, "क्यों जी, अब तो स्टोर के मालिक आप हैं। जब मालिक पिताजी थे तो स्टोर का नाम लक्ष्मी स्टोर था। उन्होंने अपनी पत्नी के नाम पर यह नाम रखा था। अब आप मालिक हैं तो दुकान का नाम मीना रख लो।" मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। मैं बोला, "ये नाम यों ही नहीं रखे जाते। कई शुभ-अशुभ विचार किए जाते हैं। फिर लक्ष्मी मेरी भी तो माँ थी। मैं उनका नाम क्यों बदलूँ?" मीना (पत्नी) बोली, "मैं तुम्हारी कुछ नहीं लगती क्या? मीना नाम भी कोई बुरा तो नहीं है।" मैं बोला, "बाजार में ऐसी दुकानें हैं, जिनके नाम उनके दादा के नाम पर हैं। उसी नाम से फर्म चल रही है। मालिक तीसरी पीढ़ी में आ गए, परंतु दुकान उसी नाम से चल रही है। कई बार नाम बदलने से काम बढ़ने की जगह ठप भी हो जाता है।" मीना नहीं मानी, बोली, "एक बार पिताजी से बात करके देखो, शायद उन्हें कोई एतराज ही न हो।" परंतु सच बात यह है कि मेरी हिम्मत ही नहीं हुई। हो सकता है, वह मान ही जाते, परंतु मैं चलते नाम और चलते काम में बाधा डालना नहीं चाहता था।

अब तो मीना पिताजी पर रोज कोई-न-कोई आरोप लगाने लगी। कभी कहती, पता नहीं कहाँ चले गए? घर में इतने काम हैं। कम-से-कम बाजार के काम तो कर ही सकते हैं। एक दिन जब रात का खाना खाने बैठे तो सब्जी ही नहीं थी। केवल दाल थी। मैं रात को दाल-चावल नहीं खाता। रात को तो कोई बढ़िया सब्जी होनी ही चाहिए। मीना ने बिना मेरे पूछे ही कहा, "पिताजी ने सब्जी लाकर ही नहीं दी। सब्जी लाने को जो रुपए ले गए थे, उससे किसी बच्चे की सहायता कर आए। उन्हें अपना घर तो दिखता नहीं है। सहायता करने वाले महान् संत बन जाते हैं। अभी अगले महीने सुरेश का जन्मदिन आ रहा है। बच्चा पाँचवें वर्ष में लगेगा।

जन्मदिन अच्छे से मनाना पड़ेगा। फिर वह स्कूल जाने लगेगा। फीस और ड्रेस का खर्च बढ़ेगा। पिताजी दान-पुण्य करने में लगे हैं।" मीना बहुत देर तक जाने क्या-क्या कहती रही, मुझे याद नहीं। परंतु अपना घर न देखकर दान-पुण्य करने की बात मुझे भी ठीक नहीं लगी। मैंने भी पिताजी से कहा, "बुढ़ापे में दान करने की भावना जग रही है। सारे दिन खाली पड़े रहते हो। कुछ देर को दुकान पर ही आ जाया करो, ताकि मुझे भी आराम मिल जाए। सुबह का गया अब रात को घर आया हूँ। ठीक से स्वादिष्ट खाना भी न मिले तो कितना मन दु:खी होता है।

एक दिन की बात है, रात को जब मैं खाने बैठा तो मीना पिताजी की अच्छाइयों को बुराई के नमक-मिर्च लगाकर सुनाती रहती। मुझे सुनने से ज्यादा वह जोर से बोलकर पिताजी को सुना रही होती। एक दिन पिताजी ने एक थैले में माताजी की तसवीर रखी और बोले, "बेटा, मैं आप लोगों को कोई सुख नहीं दे पाया। रोज-रोज जाने-अनजाने मुझसे कोई गलती हो जाती है। बहू तुम्हें सुनाती है। फिर तुम्हें भी कष्ट होता है। अत: मैं अब तुम लोगों को और कष्ट नहीं देना चाहता। आज दुकान की छुट्टी है। चल सको तो मुझे नोएडा सेक्टर ५५ तक छोड़ आओ। वहाँ एक वृद्ध आश्रम है। अब मैं वही रहूँगा।" मैं कहने वाला था कि घर में जी नहीं लगता तो मंदिर चले जाया करो। दुकान पर आ बैठा करो, परंतु मेरे बोलने से पूर्व ही मीना बोली, "पिताजी का निर्णय ठीक ही है। सारा दिन अकेले पलंग तोड़ने से तो यही अच्छा है। वहाँ बराबर के साथी होंगे। इनका भी मन लगा रहेगा और दान-पुण्य के चक्कर में घर का कोई नुकसान भी नहीं करेंगे।" पिताजी फिर बोले, "यदि तुम्हें फुरसत नहीं है तो मैं स्वयं ही बस से चला जाऊँगा। वैसे तो बरसों से बस में नहीं चढ़ा हूँ। भय लगता है। कहीं चढ़ने-उतरने के चक्कर में गिर न जाऊँ?"

मीना फिर बोली, "ठीक तो कह रहे हैं, आप जाकर छोड़ आओ न। और यह थैले में क्या ले जा रहे हो?" कहते-कहते मीना ने थैला स्वयं उठाकर देख लिया। सास का फोटो देखकर बोली, "अच्छा, ठीक ही किया। इसे देखकर सुरेश पूछता, अम्मा का फोटो यहाँ है तो बाबा कहाँ हैं? अब वह न देखेगा, न पूछेगा। जाओ जी छोड़ आओ न, मैं तब तक खाना बना लूँगी। सुरेश को भी तो स्कूल से लेते आना।"

मैं चुपचाप खड़ा हो गया। अपनी समझ ने तो काम करना ही बंद कर दिया। पत्नी का आदेश समझकर उठा। गाड़ी की चाबी ली और बोला, "चलो, मैं गाड़ी निकालता हूँ।" गाड़ी निकाली ही थी कि मीना की आवाज आई, पिताजी से कह देना, सुरेश के जन्मदिन पर भी न आएँ। हम जन्मदिन पर कोई पार्टी नहीं करेंगे। सुरेश को साथ ले जाकर वहीं मिला लाएँगे। पिताजी गाड़ी का दरवाजा खोलकर पीछे की सीट पर बैठ गए थे। मैं अपनी सीट पर बैठा और गाड़ी स्टार्ट कर दी। मीना देखती रही। सेक्टर ५५ के वृद्धाश्रम पहुँचे तो पता चला, यहाँ बच्चे भी हैं। एक सुरक्षाकर्मी से पूछा, यहाँ बच्चे भी दिखाई पड़ रहे हैं। सुरक्षाकर्मी ने कहा, बाबूजी एक ही भवन में बाई ओर वृद्धाश्रम है तथा दाएँ ओर के पाँच कमरे मातृछाया के हैं। मैंने पूछा, वहाँ माताएँ रहती हैं क्या? सुरक्षाकर्मी बोला, नहीं, वहाँ नवजात शिशु से ५ वर्ष तक के बच्चे पाले जाते हैं। यहीं से लोग इन्हें गोद ले जाते हैं। सुरक्षाकर्मी से संकेत पाकर हम कार्यालय में पहुँच गए। मैंने पिताजी के पंजीकरण का फॉर्म भरा और कार्यालय में जमा करवाया। पिताजी तब तक एक सज्जन से घुल-मिलकर बातें करने लगे। मैंने कार्यालय में बैठे सचिव से पूछा, यह सज्जन कौन हैं, जो मेरे पिताजी से वार्त्तालाप कर रहे हैं? तो उन्होंने बताया कि वे इस संस्था के मुख्य प्रबंधक हैं। स्थापना के समय से ही इसकी देखरेख यही कर रहे हैं।

फार्म जमा करके बाहर निकला तो प्रबंधक महोदय भी बाहर निकले। मैंने उनसे पूछा, "आप मेरे पिताजी से बड़े घुल-मिलकर बातें कर रहे थे, क्या आप उनसे पहले भी मिले हैं?" प्रबंधक महोदय बोले, "बेटा! मैं इन्हें ३० वर्ष से जानता हूँ। इनके कोई संतान नहीं थी। तब ये यहीं से एक बच्चे को गोद लेकर गए थे। वह तुम्हीं हो।" प्रबंधक शायद आगे भी कुछ कहता, परंतु मैं कुछ भी न सुन सका। गाड़ी में बैठते ही स्टार्ट की और घर जा पहुँचा। दरवाजा खोलते ही मीना ने पूछा, "छोड़ आए?" और मैं कुछ कहने की जगह रो पड़ा। मीना बोली, "क्यों, क्या हुआ? पिताजी की याद आ रही है क्या?" मैं और जोर से रोने लगा। मीना बोली, "कुछ तो बताओ, क्या हुआ?" तब मैंने कहा, "मीना, आज असलियत आई सामने। मुझे भी पिताजी अनाथालय से लाए थे। मुझे पाला-पोसा, पढ़ाया-लिखाया। अपनी दुकान, मकान, धन-संपत्ति, सिर उठाकर जीने लायक बनाया। परंतु कभी नहीं पता लगने दिया कि मैं उनका असली पुत्र नहीं हूँ। यहाँ तक कि हमें सुखी करने के लिए स्वयं वृद्धाश्रम चले गए और हम उन्हें सम्मानपूर्वक दो रोटी नहीं दे सके। हमने कितना बड़ा पाप कर दिया।" मीना को भी असलियत जानकर सचमुच दु:ख हुआ। उसने बताया कि पिताजी की शिकायत वह बढ़ा-चढ़ाकर करती रही है। उन्हें सुनाकर कहती रही, फिर भी उन्होंने मुझे झूठ सिद्ध करने का कभी प्रयत्न नहीं किया। फिर बोली, "सुरेश का स्कूल से लाने का समय हो गया, जाओ उसे ले आओ।"

मैं स्कूल पहुँचा, सुरेश को लिया। उसने पूछा, "आज बाबा क्यों नहीं आए?" मैं चुपचाप आश्रम की ओर मुड़ गया। वहाँ जाकर पिताजी के पैरों में गिरकर क्षमा माँगी और उन्हें वापस घर ले आया। घर पहुँचे तो मीना ने भी पैर पकड़कर क्षमा-याचना की।

फिर हमने एक निश्चित राशि पिताजी को हर महीने देनी निश्चित की, जिससे वे पुण्य-दान कर सकें। अब माताजी की तसवीर फिर वहीं टाँग दी गई।

साअ

एफ-६३, पंचशील गार्डन,
नवीन शाहदरा, दिल्ली-११००३२
दूरभाष : ९८६८५४४१९६

बालमन की खुशबू से महकती लय-ताल में गुँथी बाल-कविताएँ

● शकुंतला कालरा

उत्तम बालसाहित्य की कसौटी है, उसका बालकों से जुड़ाव। यह जुड़ाव जितना गहरा होगा, जितना अंतरंग होगा, उतनी ही रचना उत्कृष्ट होगी और बच्चों के मन में हमेशा बस जाने वाली। उसकी लोकप्रियता ही उसे सार्थक बनाती है। कौतूहल और जिज्ञासा शांत करने वाली कविताएँ बच्चों को बहुत पसंद आती हैं। जिसमें उनकी समस्या और समाधान हों, ऐसी कविताएँ बच्चे सबसे पहले पढ़ते हैं। स्थापित गीत, गजलकार बालस्वरूप राहीजी ने प्रौढ़ होते हुए भी बालकों की मानसिकता को ग्रहण किया है। उससे जुड़ते हुए उनके सरल मनोभाव, रंगीन सपने, छोटी-छोटी आशाएँ, आकांक्षाएँ, भोले शिकवे, ऊँची कल्पनाएँ, उनके संवेग सबको नजदीक से देखा-समझा और महसूस किया है, ये सब उनकी धड़कन और आँखों की चमक बनकर कागज पर उतर आए हैं। दादी-अम्मा मुझे बताओ, हम जब होंगे बड़े, बंद कटोरी मीठा जल, हम सबसे आगे निकलेंगे, गाल बने गुब्बारे, सूरज का रथ सहित बालस्वरूप राहीजी की अनेक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। अब ये सभी कविताएँ बच्चों के लिए एक जिल्द 'संपूर्ण बाल कविताएँ' में संकलित हैं। ये कविताएँ बाल पाठकों को रिझाती हैं। उनके मन को ऐसे छूती हैं कि बच्चे इन कविताओं को कभी भूल ही नहीं पाते। राहीजी की ये कविताएँ उत्कृष्ट हैं। ये बच्चों के मन की और बच्चों के मन में हमेशा बस जाने वाली कविताएँ हैं। ये बच्चों के करीब उनके मन में पैठ कर लिखी गई कविताएँ हैं।

सच बात यह है कि बाल-प्रकृति को जाने बिना, उनके साथ खेलते-बतियाते बिना, सहज, स्वाभाविक और श्रेष्ठ कविता लिखी ही नहीं जा सकती। बच्चे किस स्थिति-परिस्थिति में क्या सोचते हैं, क्या करते हैं। उनकी क्रियात्मकता के पीछे कौन सा मनोविज्ञान है, इसे बालस्वरूप राहीजी जैसा कोई बालमनोविज्ञान का कुशल चितेरा ही पढ़ सकता है। उसके लिए बालक की दृष्टि चाहिए, बालमन चाहिए और बालबुद्धि चाहिए। ये तीनों राहीजी के पास हैं, जिन्होंने उन्हें बच्चों का सिद्धहस्त रचनाकार बनाया है। उन्होंने शिशु वर्ग, बाल वर्ग और किशोर वर्ग तीनों के लिए उनकी रुचि के अनुकूल मनोरंजक, ज्ञानवर्धक, प्रेरक शिशुगीत और बाल-कविताएँ देकर बालसाहित्य को समृद्ध किया है। बालस्वरूप राहीजी ने शिशुओं के लिए सरलतम भाषा में चित्रात्मकता लिये मजेदार, चटपटे, हास्य विनोद के मधुर गीत लिखे हैं। वहीं बालकों और किशोरों के लिए मनोरंजन के साथ मीठी सहज ही समझ आ जाने वाली सीधी उनके हृदय में उतर जाने वाली कविताएँ भी लिखी हैं, जिनमें लय और गुनगुनाहट का जादुई गुण है, जो उन्हें सम्मोहित करता है। राहीजी की 'स्कूल ड्रेस' कविता देखिए, जिसमें बेचारे गप्पूजी बेमतलब ही पिट जाते हैं एक तरह की ड्रेस पहनकर—

सुपरिचित लेखिका। कहानी, कविता, निबंध, बाल-कहानी, बाल-कविता आदि के विविध संकलनों एवं स्कूल के विविध पाठ्यक्रमों में रचनाएँ संकलित। पत्र-पत्रिकाओं में पाँच सौ से अधिक रचनाएँ प्रकाशित। आकाशवाणी से निरंतर रचनाएँ, साक्षात्कार व वार्त्ताएँ प्रसारित। साहित्य मंडल श्रीनाथद्वारा से श्री भगवती प्रसाद देवपुरा बालसाहित्य भूषण सम्मान प्राप्त।

एक तरह की ड्रेस पहनकर, लगे दूर से एक बराबर।
शोर मचाते हैं पप्पूजी, पर पिट जाते हैं गप्पूजी॥

संदेश के रेशमी धागों में पिरोए राहीजी के छोटे-छोटे मनभावन शिशुगीत देखिए। बारिश ने क्या रंग दिखाया बेचारे मोनूजी की सारी अकड़ ही निकल गई—

बादल गरजे बिजली कड़की, बूँदें बरसी छम-छम-छम।
बड़े अकड़ के निकले घर से, नटखट मोनू फिसले धम॥

अकड़ और अहंकार तो मुर्गे राजा का भी नहीं रहा, जब भाँग पीकर वह यह फैसला करता है—

एक रोज मुर्गेजी जाकर, कहीं चढ़ा आए कुछ भाँग,
सोचा—चाहे कुछ हो जाए, आज नहीं देंगे हम बाँग।
आज न बोलेंगे कुकड़ू-कूँ, देखें होगी कैसे भोर,
किंतु नशा उतरा तो देखा, धूप खिली थी चारों ओर।

बच्चों का संसार भी कितना नटखट है, देखिए बालस्वरूप राहीजी की आँखों से शिशुगीत 'दीदी' में—

दीदी के जिम्मे दो भाई, दीदी की तो शामत आई।
दोनों छोटे दोनों चंचल, करते रहते हाथापाई।
तोड़-फोड़ करते जब दोनों, दीदी उनकी करे पिटाई।

बच्चों का अपना खिलौनों का अद्‌भुत संसार है, जिसमें वे रम जाते हैं। गुड्डे-गुड़ियों का संसार बच्चों को कभी झूठा नहीं लगता। तभी तो वे उनका ब्याह रचाते हैं। मोटरकार हो, छुक-छुक गाड़ी हो, हवाई जहाज हो, वह उसका आनंद वैसे ही लेते हैं, जैसे सब सचमुच की है। वे उनमें बैठकर धरती, आकाश सब जगह की सैर कर लेते हैं। देखिए, अपनी कार का गुणगान करते बच्चे की खुशी—

पापाजी की कार बड़ी है, नन्ही-मुन्नी मेरी कार।
टाँय टाँय फिस उनकी गाड़ी, मेरी कार धमाकेदार।

बच्चों की खाने-पीने की माँगें चाहे कितनी भी बढ़ जाएँ, पर माँ कभी थकने का नाम ही नहीं लेती। उन्हें अनोखी तृप्ति होती है और फिर अगर नानी हो तो कहना ही क्या। मूल से सूद अधिक प्रिय होता है। बच्चों की माँगें पूरी करते-करते हलवाई बनी नानी की खुशी देखिए—

गरमी की छुट्टियाँ मनाने, नानी के घर पलटन आई।
कोई माँगे गरम पकौड़े, कोई माँगे दूध-मलाई।
माँगें पूरी करते-करते, नानी बन बैठी हलवाई।

इन कविताओं में राष्ट्रीयता का स्वर भी देखा जा सकता है। ये बच्चों में राष्ट्रप्रेम के संस्कार रोपित करती हैं। जिनके मन में देश के लिए कुछ करने का जज्बा भरा है, वे तोप, रायफल से नहीं डरते। बच्चे हैं तो क्या? इस शान की विशेषता देखिए। इनका विश्वास है कि ये दुश्मनों को मिटाकर ही दम लेंगे—

तोप, रायफल, रॉकेट, बम, नहीं किसी से डरते हम।
अगर कारगिल आओगे, बचकर लौट न पाओगे।
भारत-माँ की कसम हमें, तुम्हें मिटाकर लेंगे दम।

संग्रह में राष्ट्रप्रेम के अनेक गीत भी हैं। जाति, धर्म, भाषा का कोई भेद इनमें नहीं है। देश के लिए कदम-से-कदम मिलाकर चलने के दृढ़ विश्वास के साथ जयहिंद का नारा लगाते हुए बच्चे आगे ही आगे बढ़ने का संकल्प दुहराते चलते हैं—

हम हैं नन्हे-मुन्ने बच्चे, सीधे-सादे, भोले, सच्चे।
भेद-भाव का नाम नहीं है, झगड़ा करना काम नहीं है।
बोलेंगे जयहिंद जोर से, गूँजेगा आकाश शोर से।
कदम मिलाकर साथ चलेंगे, हम सबसे आगे निकलेंगे।

इनके यहाँ बाह्य प्रकृति से जुड़ी ढेरों कविताएँ हैं। इनमें चाँद-तारे तो हैं, पर अलग छटा के साथ। बच्चे जिज्ञासु होते हैं। प्रकृति के प्रति एक रहस्य का भाव बड़ों में रहता है। यह जिज्ञासा कितनी सहज है। सामान्यत: बच्चे नारियल पीने में ही आनंद लेते हैं, किंतु जिनका आई-क्यू तीव्र है, वह प्रकृति का निरीक्षण भी करते हैं और प्रश्न भी—

कौन नारियल के पेड़ों पर, जादू सा कर जाता है।
बंद कटोरी में मीठा जल, चुपके से भर जाता है।

ये शिशुगीत मनोरंजक भी हैं और उपदेश के मीठे स्नेहिल स्पर्श से सिक्त भी। 'सपना' गीत देखिए—

मैंने देखा सपना एक,
फूल-पत्तियाँ बनीं टॉफियाँ,
सारा पेड़ बना है केक।
यह सब माल मिलेगा उसको,
जो बच्चा हो सब से नेक।

एक दूसरी कविता 'दूसरों के लिए' देखिए, जिसमें प्रकृति की उदारता और जो पास है उसे दूसरों के लिए लुटाने का प्रच्छन्न संदेश देती है—

मधुमक्खी कण-कण कर फूलों से जो मधु ले आती है,
केवल वह ही नहीं उसे तो सारी दुनिया खाती है।
सहकर कष्ट, दूसरों को सुख पहुँचाना है काम बड़ा,
जो ऐसा करते हैं उनका ही होता है नाम बड़ा।

एक और प्यारी कविता देखिए—

जल्दी सोना, जल्दी उठना, नियम बहुत ही अच्छा है।
जो भी इस का पालन करता, वह ही अच्छा बच्चा है।

फिर चाहे यह चुटकी किसी को भी लेकर हो। मेहँदी के लाल रंग से रँगे पापा और पापा के बाल कैसे लगते हैं, देखिए बच्चों की नजर से—

पापा ने रंग डाले बाल, मेहँदी निकली बेहद लाल।
अगर जरा बैठे हों दूर, पापा लगते हैं लंगूर।

बालस्वरूप राहीजी की हास्य-व्यंग्य-विनोद की कविताएँ बच्चों को गुदगुदाती हैं। कहीं-कहीं मीठे व्यंग्य की चुटकी इन कविताओं को इतनी सरसता प्रदान करती है कि बच्चे खुद रस के किसी अदृश्य सरोवर में गोते लगाने लगते हैं—

ठक-ठक करता चौकीदार, चोर पकड़ने को तैयार।
'जागते रहना', 'होशियार', शोर मचाता बारंबार।
अगर जागना हमको यार, तू काहे का पहरेदार?

सरल हृदय से सरल भाषा में लिखी राहीजी यह कविता बच्चों को कितना आनंद देती है, इसे बच्चों के मुख से ही सुनने पर ही जाना जा सकता है। देखिए निम्न मजेदार कविता 'मोटूराम'—

चले सैर को मोटूराम, देखा एक लटकता आम।
झटपट चढ़ने लगे पेड़ पर लड़ा ततैया, गिरे धड़ाम।

बच्चे की प्रकृति सर्वत्र एक जैसी है। कुछ चीजें उनमें सामान्य होती है, जैसे वे स्वाद को ही महत्त्व देते हैं। उन्हें चटपटी चीजें ही भाती हैं। स्वास्थ्य के लिए गुणकारी सब्जियाँ उन्हें पसंद नहीं हैं। बेचारे उलझन में रहते हैं। बच्चों के मनोविज्ञान को, उनकी प्रकृति को नजदीक से समझने वाला ही उनके मन को पढ़ सकता है—

एक पहेली समझ न आए, कोई इसका हल बतलाए।
कद्दू, तोरी ताकतवर हैं, स्वाद नहीं है उनमें लेकिन,
भिंडी, अरवी हमें लुभातीं, लेकिन उनमें नहीं विटामिन।
मेरे जैसा छोटा बच्चा, किसको छोड़े किसको खाए?

बाल प्रकृति की एक दूसरी कविता देखिए। क्रिकेट हर बच्चे का प्रिय खेल है और सचिन उनका आदर्श खिलाड़ी। हर बच्चा सचिन बनना चाहता है और सचिन जैसी कैप लगाकर वह न खुद को सचिन समझता है, वरन् सारे बच्चे भी उसे सचिन कहने लगते हैं। बच्चे के अहसास को एक बच्चा बनकर ही समझा जा सकता है—

पहने अपनी कैप पार्क में, क्रिकेट खेलने जाता जब।
सचिन आ गया, सचिन आ गया, शोर मचाते बच्चे सब।

क्रिकेट का दीवानापन तो इस शिशुगीत में देखा जा सकता है—

देख मैच टी.वी. पर आला, बॉबी हुआ बड़ा मतवाला।
पापा से मँगवाकर उसने, पहना दी टी.वी. को माला।

बस्ता बच्चों को भारी लगता है, जिसे लाद-लादकर उनके कंधे दु:खने लगते हैं, इस कारण वे बस्ते के साथ-साथ स्कूल से टीचर से भी नाराज रहते हैं। बच्चों की इस उचित शिकायत पर अनेक कविताएँ लिखी गई हैं। किंतु यह बच्चा सबसे अलग है। उसे अपना बस्ता बहुत अच्छा लगता है और इसे लेकर स्कूल बस पर चढ़कर स्कूल जाना भी बच्चे को बहुत अच्छा लगता है। क्योंकि उसके बस्ते में सारी चीजें उसके मनपसंद की हैं। इस सुंदर कविता में कवि ने खेल-खेल में बच्चों को गणित का पहला पाठ भी पढ़ा दिया है—

एक बैग है खाने दो, जेबें इसमें तीन सुनो।
लंच-बॉक्स में है तैयार, चार पूरियाँ, दही, अचार।
पाँच टॉफियाँ, छह बिस्कुट, सात खिलौने हैं छुटपुट।
देखो जरा हमारा ठाठ, फुट्टा, रबड़, पेंसिलें आठ।
पुस्तक-कॉपी हैं नौ-दस, चलो पकड़ते हैं अब बस।

भाई-बहन में हर बात में मुकाबला चलता रहता है। भला ऐसा भी मुकाबला हो सकता है कि जानबूझकर कोई अपने ही हाथों से अपना नुकसान कर ले। पर बच्चा ऐसा कर सकता है। उसकी शैतानी अकल्पनीय हैं। बड़ों की सोच से परे है—

पानी की बोतल खो लौटे···पुरानी क्यों?

पूरी प्रकृति बच्चों की सहचरी है। पशु-पक्षियों के प्रति जिज्ञासा, कौतूहल का भाव तो रहता ही है, पर इनके प्रति इनका प्रेम भी अनोखा है। वे इनसे बतियाते हैं। फिर चाहे तितली, मिठुराम, खरगोश, मुर्गा कोई भी हो। तितली बच्चों को भाती हैं और तितली को फूल अच्छे लगते हैं। सुंदर रंग-बिरंगे उसके पंख किसी परी के पंखों सरीखे लगते हैं, जो परीलोक से आई हैं—

तितली रानी, इतने सुंदर पंख कहाँ से लाई हो?
क्या तुम कोई शहजादी हो, परी-लोक से आई हो?
फूल तुम्हें भी अच्छे लगते, फूल हमें भी भाते हैं।
वे तुम को कैसे लगते, जो फूल तोड़ ले जाते हैं?

बालस्वरूप राहीजी की कविताएँ केवल तोता, खरगोश, मुरगे की नहीं हैं। आज की बदलती दुनिया की भी हैं। इनकी कविताएँ आज के समय की कविताएँ समसामयिक हैं। देखिए, दादी और पोते की नई-पुरानी दुनिया कैसे एक-दूसरे से अलग है। पोते की दुनिया नई है और दादी की पुरानी पर सबको अपना-अपना समय सुहाता है। बच्चों की पुरानी दुनिया सैर-सपाटे की थी, पर आज टी.वी. ने ऐसा रंग जमाया है कि बच्चे बड़े सभी इसके रंग में रँग गए हैं। देखिए, कविता 'रंग जमाया टीवी ने'—

फीके पड़े तमाशे सारे, रंग जमाया टी.वी ने।
बच्चा हो या बड़ा सबको खूब रिझाया टी.वी ने।

विषय-वैविध्य बालस्वरूप राहीजी की कविताओं का बहुत बड़ा गुण है। इनमें 'सरकस का जोकर' है। 'बैंड वाले' हैं। बच्चों का प्रिय 'चिड़ियाघर' है। फर-फर करता 'हेलीकॉप्टर' है। आज्ञाकारी 'रोबोट' है। परिवार के सारे संबंधों की ऊष्मा है। दादा-दादी, नाना-नानी के प्यार से सजी कई तसवीरें हैं। पूरी प्रकृति है। पशु-पक्षी जगत् है। हमारी संस्कृति, हमारे तीज-त्योहार सब इनकी कविताओं में हैं। होली भी है। दीवाली भी है। यह विषय-वैविध्य इनकी कविताओं का बहुत बड़ा गुण है। इनमें बच्चों का कल्पना-जगत् है तो विज्ञान का सत्य भी है। आज की दुनिया में अंधविश्वासों की भी कोई जगह नहीं है। 'वहम' कविता में दीदी पप्पू को यही समझाती है—

दीदी बोली—'पप्पू भैया, 'वहम' किसलिए करते हो?
होकर बब्बर शेर जरा सी पूसी से क्यों डरते हो?

देश के ऐतिहासिक स्थान हैं, इनमें—इंडिया गेट, कुतुब मीनार, लालकिला की सुंदर कविताएँ हैं, जो बच्चों से पुराना इतिहास कहती हैं। कवित्व और लयपूर्ण यह जानकारी बच्चों को गाते-गाते कंठस्थ हो जाती है। कविता का प्रभाव ही ऐसा है।

इनकी कविताओं की गूँज, अनुगूँज बनकर पाठकों और श्रोताओं के कानों में ध्वनित होती हुई उनके हृदय में स्थायी रूप से प्रतिध्वनित हो जाती है। बालस्वरूप राहीजी की बाल-कविताओं के कई रंग हैं। उनकी रससिक्त मनोरंजक कविताएँ पाठकों को आनंद के महासागर में ऐसा निमज्जित करती हैं कि पाठक उसी में डूबा रहना चाहता है। बिल्कुल अलग तेवर की लिखी गई बालस्वरूप राहीजी की कविताएँ पाठकों पर भी अपना अलग ही असर डालती हैं। उनकी अलग ही निराले अंदाज में लिखी कविताओं की सहजता बच्चों को रिझाती हैं और उन्हें प्रफुल्लता से भर देती हैं।

बालस्वरूप राहीजी की कविताओं से गुजरते हुए मैं कहना चाहूँगी कि उनके कविता-कोश में अलग-अलग मूड्स की अनेक खूबसूरत कविताएँ हैं। विशेष रूप से बच्चों की शैतानियों की। उनकी कविताएँ इस बात का स्वत: प्रमाण हैं। इनकी कविताओं में भोला नटखटपन है। बालसुलभ चंचलता है। बालमन की मस्ती है। चुहलपन है। उत्फुल्लता है। उन्हें बच्चों की ये सारी शैतानियाँ आनंद देती हैं, जिन्हें अपने शब्दों के कैमरे में वह झट कैद कर लेते हैं।

यही कारण है कि उनकी कविता की भाषा चित्रात्मक है। चित्रात्मकता का गुण उन्हें सजीव बनाता है। भाषा की यही जीवंतता के साथ बालस्वरूप राहीजी की कविताओं की सधी हुई लयात्मकता और ताजगी उन्हें अग्रिम पंक्ति में प्रतिष्ठित करती है। ये कविताएँ बच्चों के साथ बड़ों को भी रिझाती हैं। उनके मन को छूती हैं। बच्चे इन कविताओं को गुनगुनाएँगे।

समास शैली में कहूँ तो बालस्वरूप राहीजी की कविताओं में लय-ताल में गुँथा तरन्नुम का वह जादू है, जो इन्हें बच्चों का कंठहार बनाता है।

साअ
एन.डी.-५७, पीतमपुरा,
दिल्ली-११००३४
दूरभाष : ९९५८४५५३९२

ग़ज़लें

• दीक्षित दनकौरी

सुपरिचित ग़ज़लकार। ग़ज़ल-संग्रह 'डूबते वक्त' सहित अनेक ग़ज़ले पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित। आकाशवाणी, दूरदर्शन एवं विभिन्न टी.वी. चैनलों सहित देश-विदेश के लगभग ३००० कवि-सम्मेलनों, मुशायरों, काव्य गोष्ठियों में काव्य-पाठ संचालन-संयोजन।

शेर अच्छा-बुरा नहीं होता,
या तो होता है, या नहीं होता।

आह या वाह-वाह होती है,
शेर पर तब्सिरा नहीं होता।

इश्क को बंदिशें कुबूल नहीं,
इश्क बाकायदा नहीं होता।

कब, कहाँ, कौन दोस्त बन जाए,
हादसों का पता नहीं होता।

अपना ही दिल उदास होता है,
कोई मौसम बुरा नहीं होता।

• •

अपनों का भी वार हुआ,
ये भी आखिरकार हुआ।

रिश्ता जब लाचार हुआ,
आँगन की दीवार हुआ।

सबकी नाउम्मीदी पर,
कितना खुश बीमार हुआ।

कौन गवाही देगा अब,
कत्ल सरे बाजार हुआ।

हर कोई पढ़ लेता है,
मैं न हुआ, अखबार हुआ।

• •

मुफ्त मिला सामान नहीं हूँ,
मैं तुझ पर अहसान नहीं हूँ।

तेरी एक जरूरत हूँ मैं,
अनचाहा मेहमान नहीं हूँ।

बंद न कर खिड़की दरवाजे,
मैं आँधी-तूफान नहीं हूँ।

मोल-भाव चाहे तो कर ले,
राशन की दूकान नहीं हूँ।

राज दिलों पर करता हूँ मैं,
सरकारी सम्मान नहीं हूँ।

• •

मैं सादा हूँ, सजा सँवारा नहीं हूँ,
पर इतना भी गया गुजरा नहीं हूँ।

समंदर हूँ, कोई कतरा नहीं हूँ,
तेरे जितना मगर, गहरा नहीं हूँ।

मेरी नाकामियों पर तंज मत कर,
अभी टूटा हूँ मैं, बिखरा नहीं हूँ।

मैं सुन सकता हूँ तेरी खामुशी भी,
मैं गूँगा हूँ, मगर बहरा नहीं हूँ।

मुझे सुनिए, सलीके से, अदब से,
मैं शायर हूँ, कोई मुजरा नहीं हूँ।

• •

गलत मैं भी नहीं, तू भी सही है,
मुझे अपनी, तुझे अपनी पड़ी है।

न जाने क्या सहा है रौशनी ने,
चरागों से बगावत कर रही है।

अना बेची, वफा की लौ बुझा दी,
उसे धुन कामयाबी की लगी है।

कमी अपनी इबादत में न देखी,
समझ बैठा खुदा में ही कमी है।

शराफत का घुटा जाता है दम ही,
हवा कुछ आजकल ऐसी चली है।

• •

और क्या इसके सिवा हो जाएगा,
हद से हद, तू बेवफा हो जाएगा।

खुश्क पत्ते दर-ब-दर हो जाएँगे,
पेड़ तो फिर भी हरा हो जाएगा।

आइना देखा न कर यों बार-बार,
वरना ये भी सरफिरा हो जाएगा।

खुशबुओं से दोस्ती कर लीजिए,
तितलियों में दबदबा हो जाएगा।

माँग कर पहनी हुई दस्तार से,
सोचना है वो बड़ा हो जाएगा।

१/२०५२, दुर्गा मंदिर मार्ग,
रामनगर, शाहदरा, दिल्ली-११००३२
दूरभाष : ९८९९१७२६९७

अनमोल

● अमिता दुबे

'दादी! क्या आप हमको छोड़कर चली जाएँगी।' नन्हे श्लेष ने सुंदरी देवी की गोद में चढ़ते हुए कहा।

'तुमसे किसने कहा?'

'पापा मम्मी से कह रहे थे कि आपको लेने कोई अंकल आने वाले हैं। आप उनके साथ चली जाएँगी, दादी फिर कब लौटेंगीं।'

'आऊँगी, जरूर आऊँगी, अपने श्लेष के ब्याह के समय जरूर आऊँगी, तू मुझे बुलाएगा न।'

'जरूर बुलाऊँगा, दादी मेरा ब्याह कब होगा?' श्लेष ने पूछा।

'जब तू बड़ा हो जाएगा, पढ़-लिख जाएगा, नौकरी-चाकरी करने लगेगा, तब तेरा ब्याह होगा, तब मैं आऊँगी।' सुंदरी देवी ने कहा।

'दादी, जब मैं राजन भैया जैसा हो जाऊँगा, तब मेरी शादी होगी, मम्मी बता रही थीं। लेकिन दादी, उसमें तो बहुत दिन लगेंगे। आप चली जाएँगी तो हमें कहानी कौन सुनाएगा?' श्लेष ने मासूमियत से कहा।

'और मम्मी की डाँट से कौन बचाएगा?' तुहिना ने जोड़ा।

'एक दादी जाएँगी तो कोई दूसरा आएगा, तुम बच्चों को कहानी सुनाने, डाँट से बचाने।' कहते हुए सुंदरी देवी ने आँखें पोंछ लीं। बच्चों के निश्छल प्यार से वे उदास हो रही थीं।

तभी श्लेष और तुहिना के मम्मी-पापा आ गए। वे सुंदरी देवी के लिए खाने के सामान के साथ-साथ कुछ उपहार भी लाए थे। तुहिना की मम्मी उनके लिए सुंदर सी साड़ी लाई थीं तो श्लेष की मम्मी नई चप्पलें, पर्स, कंगन, पायल लेकर आई थीं। इसी प्रकार कॉलोनी के दूसरे परिवार भी उन्हें कोई-न-कोई उपहार दे रहे थे। अभिभूत थीं सुंदरी देवी सबके प्यार और अपनेपन को देखकर। उन्हें पता ही नहीं चला कि इस अजनबी कॉलोनी में रहते हुए कैसे बीस बरस बीत गए। उन्हें वह दिन याद आ रहा था, जब वे पहले दिन इस कॉलोनी के गेट पर लगभग अर्धमूर्च्छित अवस्था में पेड़ के नीचे बैठी थीं। वाचमैन ने उन्हें डाँटते हुए भगाना चाहा था, तभी इस सोसाइटी के महामंत्री सुदेशजी, भगवान् उन्हें सलामत रखे, ने अपनी गाड़ी रोककर उनसे बात की। उनकी हालत इतनी खराब थी कि वे कुछ कहने की स्थिति में नहीं थीं। सुदेशजी सहृदय व्यक्ति हैं, उन्होंने सुंदरी देवी को सोसाइटी के कार्यालय में लाने का निर्देश सुरक्षाकर्मी को दिया और उनके वहाँ पहुँचने से पहले ग्लूकोज मिश्रित पानी और कुछ फलों की व्यवस्था करवा दी।

सुपरिचित लेखिका। कहानी, कविता, उपन्यास, समालोचना, समीक्षा आदि विधाओं में ३५ पुस्तकें प्रकाशित। विभिन्न साहित्यिक संस्थाओं द्वारा लगभग ८५ सम्मानों से सम्मानित। संप्रति प्रधान संपादक, उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान।

सुंदरीजी ने अटकते-अटकते बताया कि वे बाढ़ के पानी में बहकर न जाने कैसे इस शहर में बहने वाली नदी के तट तक आ गईं, वे जिंदा कैसे रहीं, वे नहीं जानतीं, परंतु वे जीवित हैं, यह सच है। उनके गाँव में ऐसी प्रलयकारी बाढ़ पहले कभी नहीं आई, सबकुछ बह गया—घर-द्वार, जानवर, यहाँ तक कि मनुष्य भी। उन्होंने अपनी आँखों से अपने बच्चों को डूबते देखा, चिल्ला-चिल्लाकर सहायता माँगी, लेकिन ऐसी प्रलय आई कि कोई कुछ कर ही नहीं सका। गाँव के कुछ लोगों के साथ वे भी मचान पर बैठी थीं रात बिताने को। रोते-रोते उनकी आँखें खुश्क हो गई थीं, किसी का कुछ पता नहीं चल रहा था—कौन कहाँ है, जी रहा है या मृत्यु को प्राप्त हो गया है। रात के किसी प्रहर अचानक उन्हें झपकी आ गई थी, उसी समय वे अथाह जलराशि में समा गईं। वे न जाने कहाँ तक बहाव के साथ बहती रहीं। बेहोश होने से पहले उन्हें इतना याद है कि उनका हाथ पकड़कर किसी ने उन्हें एक बड़ी सी नाव पर खींच लिया था। बाद में उन्होंने अपने को बाढ़ राहत कैंप में पाया, जहाँ उनके जैसे अनेक लोग थे। एक सप्ताह वहाँ बिताकर वे काम की तलाश में निकल पड़ीं, मजदूरों की मंडी में दो-तीन दिन काम मिला, फिर कुछ नहीं। किसी ने बताया था कि इस कॉलोनी में कुछ काम मिल सकता है, इसलिए वे यहाँ आ गईं पैदल चलते-चलते।

सुदेशजी ने पूछा था, 'बहन अब तो बाढ़ का प्रकोप कम हो गया है, आप चाहें तो आपको आपके घर भेजने की व्यवस्था की जा सकती है।'

सुंदरी देवी ने उस समय रोते-रोते कहा था, 'बाबूजी! घर जाकर मैं क्या करूँगी, मेरे पति पहले ही भगवान् को प्यारे हो गए हैं, बच्चों को अपनी इन्हीं अभागी आँखों से मैंने बहते देखा है, अब घर में मेरे लिए बचा ही क्या है? मेहनत-मजदूरी वहाँ भी करनी है, मेहनत-मजदूरी कर यहाँ भी अपना पेट पाल लूँगी। बाबूजी! मेरे पास अपनी कोई पहचान नहीं है, अपनी ईमानदारी का कोई सबूत नहीं है, लेकिन यदि आप दया कर मुझे

कुछ काम और रहने का ठिकाना दे देते हैं तो मैं आपको विश्वास दिलाती हूँ कि मैं कभी आपको शिकायत का मौका नहीं दूँगी।' कहते हुए सुंदरी देवी ने दोनों हाथ जोड़ दिए थे।

उनकी आँखों की कातरता उनके सच्चे होने की गवाही दे रही थी। सुदेशजी ने गार्ड के साथ उन्हें अपने घर भेज दिया, जहाँ उनकी पत्नी ने उन्हें नहाने-धोने के बाद अपने कुछ कपड़े पहनने को दिए। साफ-सुथरे कपड़ों में सुंदरी देवी का व्यक्तित्व और निखर गया। वे सुदेशजी के गैरेज में रहने लगीं और रचनाजी के घरेलू कामकाज में उनकी सहायता करने लगीं। धीरे-धीरे दो महीने बीत गए।

इसी बीच सुदेशजी ने सोसाइटी की कार्यकारिणी के सदस्यों की मीटिंग बुलाकर प्रस्ताव किया कि कॉलोनी का जो गेस्ट हाउस है, उसके एक कमरे में उन बच्चों के खेलने और रहने की व्यवस्था की जाए, जिनके माता-पिता काम करते हैं और उन बच्चों की देखभाल करने वाला घर में कोई नहीं है। कॉलोनी में रहने वाले चार-पाँच परिवारों में यह समस्या थी, जिसके कारण महिलाओं को नौकरी छोड़ने का निर्णय लेने को विवश होना पड़ रहा था।

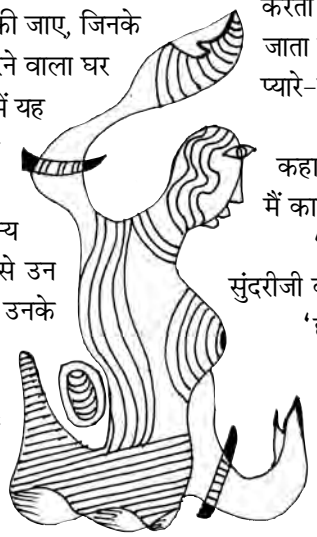

तय हुआ कि सुदेशजी की पत्नी रचनाजी व अन्य चार महिलाएँ, जिनके बच्चे बड़े हो गए हैं, के सहयोग से उन बच्चों को रखें और सुंदरी उन बच्चों की देखभाल करे। उनके साफ-सुथरे काम की प्रशंसा रचनाजी ने की तो ईमानदारी का प्रमाण सुदेशजी ने दिया, जिन्होंने उन्हें परखने के लिए अनेक बार बहुमूल्य वस्तुएँ जान-बूझकर छोड़ीं, जिन्हें सुंदरीजी ने उठाकर रचनाजी को सँभालकर रखने को दीं। इस प्रकार इस 'अनमोल सोसाइटी' में सुंदरीजी के स्थायी कामकाज की व्यवस्था हो गई। वे बच्चों और उनके परिवार के बीच ऐसे घुल-मिल गईं कि अब किसी को बाजार जाना होता या रिश्तेदारी में हुई गमी में, माँएँ अपने बच्चे उनके पास छोड़ जातीं और बच्चे सहज होकर रहते, अपने अभिभावकों के आने के बाद भी वे जाना नहीं चाहते।

सुंदरी देवी अपने नाम के अनुरूप सुंदर थीं। साँवला रंग, लंबे काले बाल, साफ-सुथरा पहनावा और शालीनता का व्यवहार। वे बोलती कम थीं, देखने वाले को ऐसा लगता, जैसे वे किसी गंभीर चिंतन-मनन में व्यस्त हैं, लेकिन सुंदरी देवी ने अपना तन-मन इस 'अनमोल सोसाइटी' की सेवा में समर्पित कर दिया था। वे अपना दु:ख-दर्द भूलकर अपने पास आने वाले बच्चों में अपनी खुशियाँ ढूँढ़ने लगी थीं। वे आंटी से न जाने कब 'दादी' कही जाने लगीं, उन्हें पता ही नहीं चला और न ही सोसाइटी के लोग ही जान पाए।

इसी बीच कोरोना महामारी के कारण अचानक लॉकडाउन हो गया। सबकुछ मानो थम सा गया। 'अनमोल सोसाइटी' के अनेक बच्चे छोटी कक्षाओं से आगे बढ़कर डॉक्टर, इंजीनियर बन गए थे। कुछ एम.बी.ए. कर मल्टीनेशनल कंपनियों में काम कर रहे थे। वे जब छुट्टियों में आते, तब अपने नए-नए अनुभव सुंदरी देवी को रोचक ढंग से बताते। उनका बचपन सुंदरी देवी की किस्से-कहानियों के बीच बीता था, बच्चों को संस्कारवान बनाने में सुंदरी देवी का बहुत बड़ा योगदान है, ऐसा सुदेशजी व रचनाजी के साथ-साथ सोसाइटी के अन्य लोग भी मानते हैं।

इस लॉकडाउन में सभी बच्चे या तो ऑनलाइन पढ़ाई कर रहे थे या 'वर्क फ्रॉम होम' की पद्धति में काम कर रहे थे। शनिवार और रविवार की छुट्टी के दिन वे बच्चे दो-चार की संख्या में मास्क लगाकर बार-बार हाथ धोकर या सेनेटाइजर का प्रयोग कर सुंदरी देवी के पास आते और अपने जीवन के सुंदर-सुंदर रोचक किस्से उन्हें सुनाते। इन्हीं में आकर्षण, जो नया-नया प्रोजेक्ट ऑफिसर हुआ था, ने अपनी पहली तनख्वाह से सुंदरीजी को आधुनिक तकनीक वाला मोबाइल लाकर दिया था। इससे पहले अरुणिमा उनके लिए एक मोबाइल लाई थी, जिसे वे कम ही प्रयोग करती थीं, बस किसी का फोन आता तो सुन लेतीं या कोई आ जाता तो उससे किसी बच्चे को फोन मिलाकर बात कर लेतीं। ये प्यारे-प्यारे बच्चे उनका जीवन जो थे।

आकर्षण ने सुंदरी देवी के फोन में गूगल मैप खोलकर कहा, 'आंटी! आइए, आपको मैं अपना शहर दिखाता हूँ, जहाँ मैं काम करता हूँ।'

'अच्छा, यहाँ से बैठे-बैठे हम उसे देख सकते हैं क्या?' सुंदरीजी को आश्चर्य हुआ।

'हाँ, आंटी, देखिए।' आकर्षण ने कहा।

'आकर्षण, बेटा! यह तो बहुत कमाल का फोन है।' सुंदरी देवी ने कहा।

'आंटी! यह मोबाइल का कमाल नहीं है, यह गूगल चाचा का कमाल है।' रुचिरा ने बताया।

'अच्छा आकर्षण! इसमें सबकुछ देख सकते हैं?' सुंदरी देवी ने धीरे से पूछा।

'हाँ, सबकुछ, जिसे चाहें उसे ढूँढ़ सकते हैं, जिससे चाहें उससे बात कर सकते हैं, बस नाम पता होना चाहिए।'

'वही तो नहीं पता, कोई बचा भी या नहीं।' सुंदरी देवी के स्वर में उदासी थी।

'कौन आंटी, आप बताइए तो?' रुचिरा ने कहा।

'बेटा! मेरा गाँव ढूँढ़ दोगे।' सुंदरी देवी ने कहा।

'हाँ बताइए।' आकर्षण ने कहा।

'भरिगवाँ', सुंदरी देवी का दिल धड़कने लगा।

'भरिगवाँ, क्या स्पेलिंग होगी, रुचिरा?'

'बी एच ए आर आई जी ए वी ए' सुंदरी देवी ने कहा।

'वाह आंटी वाह, आप तो कमाल हो।'

'भरिगवाँ, मिल गया, लेकिन आंटी इस नाम से कई जगह दिखा रहा है।' रुचिरा ने कहा।

'बेटा! हमारे गाँव भरिगवाँ का पोस्ट ऑफिस महोलिया शिवपार है, जो बावन ब्लॉक में पड़ता है, जिला हरदोई। सुंदरी देवी एक साँस में बता गईं।

'अच्छा आंटी, आप हरदोई की रहने वाली हो।' आकर्षण ने गूगल पर सर्च करते हुए पूछा।

'हरदोई तो जिला है हमारा गाँव तो थोड़ा अलग हटकर है।'

'किधर बताइए तो जरा···।' रुचिरा, जो मोबाइल की स्क्रीन पर नजरें गड़ाए हुए थी, ने पूछा।

'हमारा गाँव हरदोई रेलवे स्टेशन से लगभग पाँच किलोमीटर सीतापुर रोड पर स्थित है। जानते हो बेटा, वहाँ सई नदी बहती है, जिसे आदि गंगा कही जाने वाली गोमती नदी की सहायक नदी कहा जाता है। इसका उद्गम स्थल हरदोई जिला ही है, जो आगे उन्नाव, प्रतापगढ़ जैसे शहरों में भी बहती है।

'अच्छा आंटी!' आपकी जानकारी तो गूगल से भी ज्यादा है।' रुचिरा ने कहा।

'ये गूगल तो अभी आया है रुचिरा! आंटी तो पुराने जमाने की हैं, उन जैसे लोगों के ज्ञान से ही तो गूगल बना है।' आकर्षण ने कहा।

'लीजिए, आंटी अपना गाँव देखिए।' रुचिरा ने उत्साह से उछलते हुए कहा।

'क्या यह ही मेरा गाँव है?' सुंदरीजी की आवाज लड़खड़ा गई।

'देखिए, आंटी सई नदी के किनारे गूगल मैप में तो यही दिखा रहा है।' रुचिरा ने कहा।

'क्या इस गाँव का कुछ हालचाल मिल सकता है?' सुंदरी देवी का स्वर धीमा था।

'आप अपने घर के लोगों का नाम बताइए, मेरा एक दोस्त हरदोई में रहता है। पाँच किलोमीटर कौन दूर है, वह जाकर पता कर आएगा। आप नाम बताइए।' आकर्षण ने कहा।

'मेरे परिवार में तो शायद ही कोई हो।' सुंदरी देवी की आवाज रुआँसी हो गई।

'क्यों आंटी, ऐसा क्यों कह रही हैं? आपने आज तक अपने परिवार के बारे में कभी कोई बात नहीं की। हम तो समझते थे कि आप इस संसार में अकेली हैं, आपका कोई नहीं है।' रुचिरा ने कहा।

'हाँ शायद, ऐसा ही है, जब मैं यहाँ आई थी, तब मेरा पूरा परिवार बाढ़ में बह गया था। मैं खुद बाढ़ की चपेट में आकर यहाँ तक बहती चली आई थी। मैंने अपने दोनों बच्चों को इसी उफनाती सई नदी में डूबते देखा है।' सुंदरी देवी रोने लगीं।

'अच्छा, आंटी रोइए नहीं, किसी का नाम तो बताइए, कोई पड़ोसी, मित्र, रिश्तेदार यदि आपको याद रह गया हो।' आकर्षण पूछ रहा था।

'हाँ याद है, सब याद है, एक-एक का नाम क्या चेहरा भी याद है। मेरे घर के बगल में सीता मैया रहती थीं, उनके एक लड़के का नाम था गणेश और दूसरे का महेश, वे दोनों हमें भौजी कहते थे और हम उन्हें गनेशी और महेशी। मेरे पति तपेदिक की बीमारी से भगवान् के पास चले गए, तब इन दोनों ने मेरी बहुत सहायता की थी और हमेशा कहते थे, 'भौजी, तुम तनिक भी परेशान मत हो। तुम्हारे ये दोनों बाल-गोपाल जल्दी ही बड़े हो जाएँगे, तुम्हारा सहारा बनेंगे। जिस दिन मैं अपने बच्चों के डूबने के बाद मचान से गिरी थी, उस दिन गनेशी और महेशी भी मेरे साथ उस मचान पर थे, उनकी आवाज आज भी मेरे कानों में गूँजती है—'भौजी! सँभल के, देखो बहाव तेज है, हम रस्सी फेंक रहे हैं, उसे पकड़ लो, हम तुम्हें खींच लेंगे,' पर···पर··· नदी का बहाव इतना तेज था कि हम बहते ही गए, बहते ही गए। चाहते हुए भी रस्सी नहीं पकड़ पाए··· और यहाँ तक आ गए।' सुंदरी देवी ने रोते हुए कहा।

'आंटी! मैंने अपने दोस्त रोहन को मैसेज कर दिया है, वह एक-दो दिन में आपके गाँव जाकर पूरी जानकारी हमें देगा।'

'कुछ-न-कुछ तो पता चलेगा। हाँ आंटी, आपका नाम तो ये ही है न—सुंदरी देवी!' रुचिरा ने पूछा, 'या आपको किसी दूसरे नाम से पुकारा जाता था?'

'बिटिया! सुंदरी नाम से तो हमें कोई नहीं पुकारता था, सब विश्वनाथ की दुलहिन या सुहास-सुहानी की अम्मा कहते थे।' सुंदरीजी फिर रोने लगीं।

'अच्छा, मैं अपने दोस्त रोहन को बता देता हूँ, वह आपको इन दोनों नामों से ढूँढ़ेगा।' आकर्षण ने कहा।

'अरे आकर्षण! आंटी को कहाँ ढूँढ़ना है, आंटी तो हमारे साथ हैं।' रुचिरा ने कहा।

'जब आंटी को ढूँढ़ेंगे, तभी तो उनसे जुड़े परिचय के सूत्र मिलेंगे, फिर उनके संबंधी या परिवारी जन···।' कहकर आकर्षण ने बात समाप्त की।

धीरे-धीरे एक सप्ताह बीत गया। वे आकर्षण की ओर बड़ी आशा से देखतीं, परंतु आकर्षण तो जैसे सबकुछ भूल ही गया था। वह उनके पास रोज आता। इधर-उधर की बात करता, परंतु जो वे सुनना चाहतीं वह नहीं कहता।

एक दिन आकर्षण, रुचिरा, सचिन और रूपल सुंदरी देवी के पास बैठे भविष्य की योजनाएँ बना रहे थे, कैसे इस लॉकडाउन के समय का सदुपयोग किया जाए। लॉकडाउन पहले २१ दिनों के लिए हुआ था, अब समाप्त होने के एक दिन पहले प्रधानमंत्रीजी द्वारा इसको आगे बढ़ाए जाने की घोषणा की गई। ऐसे लोग, जो बाहर नौकरी करते थे और घर नहीं लौट सके थे, उनके माता-पिता घर वाले बहुत परेशान थे, लेकिन कर भी क्या सकते थे। भलाई इसी में है कि जो जहाँ है, वहीं रहे। जिनके बच्चे घर आ गए थे, वे भगवान् को लाख-लाख धन्यवाद दे रहे थे कि भले ही बच्चे अति व्यस्त हैं, लेकिन आँखों के सामने तो हैं, घर का बना खाते-पीते तो हैं, यदि वे अकेले होते तो क्या करते और कैसे रहते उनके माता-पिता।

समय बीतता जा रहा था। सुंदरी देवी ने आकर्षण की गाँव वाली बात के बारे में सोचना ही बंद कर दिया था। वैसे भी वहाँ कौन अपना बैठा है, जिसके लिए परेशान हुआ जाए। एक दिन उनके मोबाइल पर एक नया नंबर चमका। उस समय उनके पास केवल रुचिरा थी, आकर्षण और सचिन बाजार से कुछ आवश्यक सामान और दवाएँ लेने गए थे। रूपल की मम्मी घर में फिसलकर गिर गई थीं उनके पैर में मोच आ गई थी, इसलिए वह घर पर थी। सुंदरी देवी का ध्यान मोबाइल की ओर नहीं था। रुचिरा ने टोका तो उन्होंने फोन उठाया। उधर से आवाज आई, 'अम्मा! हम सुहानी बोल रहे हैं। कैसी हो तुम?'

'कौन···कौन बोल रहा है। एक बार फिर बताओ।' सुंदरी देवी की आवाज डूबती हुई सी लगी।

'अम्मा! हम सुहानी, तुम्हारी बिटिया, लो सुहास भैया से बात करो।'

'कौन···कहाँ से बोल रही हो···देखो, ऐसा मजाक अच्छा नहीं होता। हम सह नहीं पाएँगे।' कहते हुए सुंदरी देवी रोने लगीं।

रुचिरा मोबाइल उनके हाथ से लेकर बात करने लगी। उसने मोबाइल स्पीकर पर डाल दिया था, दूसरी तरफ से आवाज आ रही 'अम्मा! तुम कहाँ चली गई थीं, हमने तुमको कितना खोजा, कुछ भी पता नहीं चला तुम्हारा। हम सब ढूँढ़-ढूँढ़कर थक गए। दादी अम्मा, वही गनेशी-महेशी चाचा की अम्मा ने हमें पाला-पढ़ाया-लिखाया भी, हमारा तो ब्याह भी कर दिया, अभी गौना होना है। अम्मा, हम तो समझे थे कि तुम बाढ़ में मर गईं, सई मैया तुम्हें लील गईं, लेकिन हमारी किस्मत में खुशियाँ लिखी थीं, इसलिए तुम हमको दोबारा मिल गईं।' कहते हुए लड़की जो अपना नाम सुहानी बता रही थी, रोने लगी।

'अम्मा! शहर से रोहन भैया आए हैं। तुम्हारी फोटो दिखाकर तुम्हारे बारे में पूछ रहे हैं। हम तो छोटे-छोटे थे, जब तुमसे बिछुड़े थे, लेकिन दादी, अम्मा और गनेशी-महेशी चाचा लोगों ने तुम्हें झट पहचान लिया। गनेशी चाचा तो लखनऊ में ही हैं, अस्पताल की एंबुलेंस चलाते हैं। आज यहीं आए हुए हैं, लो उनसे बात करो।' कहते-कहते फोन कट गया। सुंदरी देवी जब तक सँभलती, तब तक दोबारा फोन आ गया, दूसरी ओर से स्वर उभरा, 'भौजी! ओ भौजी! तुम कहाँ खो गई थीं। हम सबने तुम्हें कितना ढूँढ़ा। हम तुम्हारे गनेशी हैं, लखनऊ में पिछले दस बरस से रहते हैं, एंबुलेंस चलाते हैं। आश्चर्य है तुम हमें कहीं दिखाई नहीं दीं।'

'अरे भैया! हमें भरोसा नहीं हो रहा है कि हम तुमसे बात कर रहे हैं। हमारी तो सारी आशा सूख गई थी। हम तो सोचते थे कि हमारे दोनों बच्चे सुहानी और सुहास बाढ़ की भेंट चढ़ गए। इसलिए कभी गाँव के बारे में सोचा ही नहीं। यहीं 'अनमोल सोसाइटी' में रह गए। यहाँ के बच्चों में अपने बच्चों को ढूँढ़ते रहे।' सुंदरी देवी ने गनेशी को पहचान लिया। बीस साल बाद भी गनेशी वैसा ही दिखता था।

उधर से गनेशी कह रहा था, 'भौजी! तुम तो बिल्कुल नहीं बदलीं वैसी की वैसी हो। जरा मुटिया गई हो बस।'

'अच्छा भौजी! अपना पता बताओ, हम मिलने आएँगे सुहास को लेकर, वही सुहास तुम्हारा बेटा। आजकल नगर निगम के ऑफिस में बाबू हो गया है, तुम्हारा बेटा। और तुम्हारी बेटी सुहानी का ब्याह हमने अपने भानजे से करवा दिया है। गीता जिया के बेटे से। नवरात्रों में गौना हो जाता, पर क्या करें, कोरोना आ गया। चलो अच्छा ही हुआ, अब तुम अपने हाथों से उसको बिदा करना। भौजी! तुम सुन रही हो न, कुछ बोलती काहे नहीं हो, लो अम्मा से बात करो।' गनेशी ने फोन अपनी अम्मा को पकड़ा दिया।

'सुंदरी, ओ सुहानी की अम्मा कैसी हो री!' सुन रही हो न, हम तुम्हारी चाची बोल रही हैं।' दोनों जोर-जोर से रोने लगीं। भावनाओं का सैलाब रुका तो सुंदरी ने पूछा, 'चाची! हमारे बच्चे बचे कैसे उस प्रलय से?'

'अरे! सुंदरी जाको राखे साइयाँ मार सके न कोय। ये दोनों बच्चे बाढ़ के पानी में बहे जा रहे थे, इन्हें बहता हुआ देखकर पड़ोस के गाँव के श्रीपत ने डुबकी लगाई और अपने साथी के साथ इन्हें नाव पर खींच लिया और अपने घर ले गया। बाढ़ का पानी जब उतरा, तब इन दोनों को लेकर घर आया। यहाँ सबकुछ तबाह हो चुका था, तुम्हारा भी कुछ पता नहीं था, किसी ने तुम्हें नहीं देखा था। सबने मान लिया कि तुम डूबकर मर गईं, लेकिन मेरा मन कहता था, जैसे सुहास और सुहानी घर लौट आए, वैसे ही एक दिन तुम भी अपने घर लौट आओगी। लौटोगी न, तुम्हारा घर-द्वार तुम्हें बुला रहा है, तुम्हारी ममता को तरसे तुम्हारे बच्चे तुम्हें रोज पुकारते थे—अम्मा, ओ अम्मा! आ जाओ। भगवान् हमारी अम्मा को मिला दो।

'देखो, भगवान् ने हमारी सुन ली, हमें मिला ही दिया। तुम्हारा देवर गनेशी और तुम्हारा बेटा सुहास तुम्हें लेने जल्दी ही आएँगे। तैयारी कर लो। लो गनेशी अपनी भौजी से पता पूछ लो।'

'हाँ भौजी, बताइए।'

सुंदरीजी फूट-फूटकर रोने लगीं। इतने दिनों का रुका सैलाब अब सारे बाँध तोड़ देना चाहता था।

रुचिरा पता नोट कराने लगी।

गनेशी ने कहा, 'भौजी को बता दीजिएगा कि हम अगले सोमवार को उन्हें लेने आएँगे। अभी लॉकडाउन है, सुना है सोमवार से कुछ छूट मिलेगी, तब हम भौजी को लेने आएँगे, वे तैयार रहें।'

रुचिरा ने आकर्षण को और आकर्षण ने पूरी कॉलोनी को सुंदरी और उनके गाँव की कहानी बता दी थी। सब जान गए थे कि सुंदरी देवी को लेने उनके देवर और बेटा आएँगे। सभी चाहते थे कि सुंदरी कहीं न जाए, लेकिन उनके जीवन में आई इस खुशी को कोई उनसे छीनना भी नहीं चाहता था। यह तो तय था कि सुंदरी देवी का इस 'अनमोल सोसाइटी' पर किया गया एहसान कोई चुका नहीं सकता था, लेकिन सभी अपनी-अपनी तरफ से उन्हें भी उपहार देकर विदा करना चाहते थे। जिससे वे अपना आगामी जीवन सुख से बिता सकें।

आखिर वह दिन भी आ गया, जब सुंदरी देवी को इस अनमोल सोसाइटी से विदा होना था। अनलॉक का पहला दिन। ग्यारह बजे एक गाड़ी सोसाइटी के गेस्ट हाउस के सामने रुकी, यह एंबुलेंस थी, जिसमें से गनेशी और सुहास उतर रहे थे। सुहास की शक्ल सुंदरी देवी से बहुत अधिक मिलती थी। विदा की इस वेला में सभी की आँखें नम थीं, लेकिन सुंदरी देवी की खुशी से सब खुश थे, उनका चेहरा मातृत्व की गरिमा से दमक रहा था। तभी सुदेशजी ने एक लिफाफा सुंदरी देवी को पकड़ाया। उनके पूछने पर कहा, इसमें आपके बैंक की पासबुक है, जिसमें पाँच लाख रुपए हैं।

'पर इतने रुपए आए कहाँ से?' सुंदरीजी ने पूछा।

'यह अनमोल सोसाइटी की ओर से आपके अनमोल कार्य के लिए दिया गया छोटा सा उपहार है। यद्यपि आपकी सेवाओं का कोई मूल्य नहीं है, क्योंकि आप तो अनमोल हैं और अनमोल है आपकी सेवा एवं निष्ठा।' कहते हुए रचनाजी ने अपनी आँखें पोंछ लीं; उन्हें लग रहा था मानो आज उनकी छोटी बहन ससुराल के लिए विदा हो रही है।

६ महात्मा गांधी मार्ग,
हजरतगंज, लखनऊ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९४१५५५१८७८

'आवारा' उग्र का अद्‌भुत नाटक

● राजशेखर व्यास

नाटक 'आवारा' का प्रकाशन और प्रणयन एक विशेष घटना और आयोजन का सुपरिणाम था। घटना दु:खद थी और आयोजन सुखद। घटना यह थी कि माधव महाविद्यालय उज्जयिनी के हिंदी के प्रथम प्राध्यापक प्रख्यात साहित्यसेवी और सुकवि प्रो. रमाशंकर शुक्ल 'हृदय' का बनारस में अल्पायु में ही आकस्मिक देहावसान हो गया।

आयोजन यह कि उनकी पावन पुण्य-स्मृति में उनके अंतरंग आत्मीय 'विक्रम' संपादक पं. सूर्यनारायण व्यास ने 'सत्साहित्यिक सेवक समाज' की स्थापना कर भारती-भवन उज्जयिनी में 'हृदय श्रद्धांजलि ग्रंथमाला' में उपर्युक्त नाटक का प्रकाशन किया। लेखक नाटककार थे—हिंदी के विलक्षण शैलीकार पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र'।

प्रो. रमाशंकर शुक्ल 'हृदयजी' थे हिंदी के सुमधुर-सुकवि, आत्म-प्रचारक, आत्म-स्तुति और विज्ञापन से सर्वथा विलग, उनका सारा सृजन सिर्फ स्वांत: सुखाय होता था और उसे प्रकाशित करने-कराने की ओर उन्होंने कभी सोचा भी नहीं, न ध्यान दिया।

हालाँकि माधव महाविद्यालय, उज्जैन में आने से पूर्व वे गोरखपुर से 'स्वदेश' का संपादन भी कर चुके थे। उन दिनों पत्रों के मुखपृष्ठ पर दोहे वगैरह व राष्ट्रीय क्रांतिकारी छंद लिखने का प्रचलन था। 'स्वदेश' के मुखपृष्ठ पर 'हृदयजी' द्वारा लिखी ये पंक्तियाँ शोभित होती थीं—

जो भरा नहीं है, भावों से
बहती जिसमें रसधार नहीं
वह हृदय नहीं है पत्थर है
जिसमें स्वदेश का प्यार नहीं।

और साथ ही जबलपुर में 'लोकमत' के संयुक्त संपादक थे—पं. द्वारका प्रसाद मिश्रा।

उस समय का स्मरण करते हुए पं. मिश्रा ने लिखा है—"हृदयजी को भूल जाना मेरे लिए इस जीवन में संभव नहीं। लोकमत में मेरे प्रधान संपादक होकर जब वे जबलपुर आए थे और पहली बार मुझसे मिले तो कुछ ही क्षणों में उन्होंने मुझ पर अपने व्यक्तित्व की धाक जमा ली। मुसकराते हुए ऐसे आकर मिले, जैसे जन्मों के मित्र हों, ऐसा सरल स्वभाव कम देखने में आता है। पहले ही दिन की संपादकीय टिप्पणी लिखकर अपनी सर्वतोमुखी प्रतिभा का परिचय दिया। गुण-ग्राहक ऐसे थे कि लेख तथा रचनाओं के चुनाव में ख्याति को कोई स्थान नहीं देते।

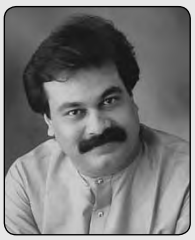

सुपरिचित लेखक, संपादक एवं निर्माता-निदेशक। केवल १२ वर्ष की वय में पितृविहीन हो चले 'यायावर'। ५९ से अधिक क्रांतिकारी ग्रंथ, ४००० से ज्यादा लेख देश-विदेश के सभी अखबारों में प्रकाशित; २०० से ज्यादा वृत्तचित्र, कार्यक्रम, रूपक, फीचर, रिपोर्ताज टी.वी. पर प्रसारित। भारतीय दूरदर्शन में सबसे अल्पायु के आई.बी.एस. अधिकारी 'अतिरिक्त महानिदेशक'।

अस्वीकृत कविताओं के बंडल में से एक दिन 'रणभेरी' नामक एक कविता ढूँढ़ निकाली, वह इतनी लोकप्रिय हुई कि आज महाकौशल का रण-गीत बन गई है।"

दूसरों की रचनाओं के ऐसे गुण-ग्राहक 'हृदयजी' अपनी रचनाओं के प्रति बड़े निर्मम थे। उनकी समस्त रचनाओं को, कविताओं को, पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित करने-कराने, पुस्तकाकार प्रकाशित करने का संपूर्ण श्रेय उनके अभिन्न गुण-ग्राहक पं. सूर्यनारायण व्यास को है।

व्यासजी ने उनके जीवन काल में तो उनकी रचनाओं का प्रकाशन करवाया ही, उनके दिवंगत हो जाने पर भी जो श्रद्धांजलि पं. व्यास ने 'हृदयजी' को दी है, वह तो हिंदी साहित्य संसार में आज भी सर्वथा विरल-दुर्लभ और अनूठी है। स्वभाव से मनोविनोदी, खुशमिजाज 'हृदयजी' की बैठक 'भारत-भवन' (पं. व्यास के आवास) ही में थी, जहाँ उन दिनों पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र', दुलारेलाल भार्गव, पं. श्रीनारायण चतुर्वेदी, पं. गोपीकृष्ण शास्त्री से लेकर क्रांतिकारियों का स्थायी जमावड़ा था।

अनेक साहित्यिकों ने व्यासजी की खुशमिजाजी और 'चाय-पकौड़ेवाली' इस बैठक का स्मरण बड़े रस लेकर किया है। उनकी 'विद्वत् गर्वहरण मंडली' व 'अक्ल सप्लाय एंड को.' प्राचीन उज्जयिनी का नि:संदेह अधुनातन 'कॉफीहाउस' था।

बैठक में और एकांत में 'हृदयजी' अपनी कविताएँ पं. व्यास के सुस्वर में ही सुनने को लालायित और उत्साहित होते थे, इसी क्रम में उनकी अनेक कविताएँ पं. व्यास को कंठस्थ हो गई थीं, जिन्हें उन्होंने समय-समय पर अपने मासिक 'विक्रम' और अन्य पत्र 'वीणा', 'मालव मधुर', 'सुधा', 'विशाल भारत', 'गंगा', 'चाँद' आदि में प्रकाशित करवाया। उनके दिवंगत हो जाने पर व्यासजी ने 'विक्रम' कार्यालय से उनके तीन काव्य-संकलन भी प्रकाशित किए—'विजय वैजयंति', 'करुणा-कण', अग्नि-कण'

शीर्षकों से एक कृति 'शैवाल' प्रयाग से प्रकाशित हुई। 'करुणा-कण' का प्रथम प्रकाशन १९३१ में हुआ था, विश्व के शोक (करुणा) गीत साहित्य में उसका स्थान है। उसका पहला छंद है—

'मेरा हृदय' महासागर-सा
व्याकुल रहता है प्रति क्षण
लाया हूँ समेट प्याले में
आज उसी के 'करुणा-कण।'

'करुणा-कण' पढ़कर माखनलाल चतुर्वेदी ने लिखा था—

'करूणा-कण' पाए, सुख पाया
किस अकाल जलदोदय से बिजली गिर पड़ी
किसकी वर्षा से जी सुखा किंतु जी तुम्हारा भर आया।

प्रो. 'हृदय' मालवा के कई साहित्यकारों के प्रेरणास्रोत थे। आज की हिंदी के कई चर्चित व स्थान नाम उनके विद्यार्थी रहे हैं या प्रभावित, अनुप्रेरित, मित्र, स्नेही, सहयोगी।

गजानन माधव 'मुक्तिबोध' नरेश मेहता, श्याम परमार, वीरेंद्र कुमार, प्रभाग चंद्र शर्मा, भगवंत शरण जौहरी आदि उनके शिष्य रहे हैं। प्रभाकर माचवे, शिवमंगल सिंह 'सुमन', हरिभाऊ उपाध्याय, पं. द्वारका प्रसाद मिश्र, सेठ गोविंद दास, उदय शंकर भट्ट आदि उनसे प्रभावित, अनुप्रेरित रहे हैं। प्रो. राजकुमार वर्मा, पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र' उनके स्नेही मित्र, सहयोगी रहे। प्रो. रामकुमार वर्मा के ही शब्दों में—

"प्यारे 'हृदय' के निधन ने मुझे मर्मबेधी व्यथा पहुँचाई है, वे मेरे सखा थे। हृदय के अत्यंत समीप न जाने कितनी रातें हम लोगों ने गंगा के किनारे काटी हैं। अधिक रात हो जाने पर हमने साथ ही जीवन की कहानियाँ पढ़ी हैं, उन्हीं के साथ पढ़कर मैंने एम.ए. प्रथम श्रेणी में पास की थी। उन्हें जीवन में भूल नहीं सकता। बनारस में मिले तो कहते थे, मैं 'कुमार-हृदय' हूँ। कितना अर्थ है इस छोटे टुकड़े में, वे वास्तव में मेरे हृदय थे। मुझे 'प्रोफेसर' कहने वाले तो बहुत हैं किंतु 'कुमार' कहने वाला 'हृदय' नहीं है।"

'मुक्तिबोध' ने भी 'तारसप्तक' की अपनी भूमिका में उनका स्मरण अत्यंत आदर भाव से करते हुए अपने जीवन और साहित्य में उनके प्रभावको विनम्रमा से स्वीकारा है। उनके असमय देहावसान पर पं. व्यास ने अपने मासिक 'विक्रम' का 'हृदय स्मृति अंक' प्रकाशित किया था। हालाँकि व्यासजी ने उसे 'अभावों की भेंट' कहा था, मगर दैनिक हिंदुस्तान में पं. बनारसीदास चतुर्वेदी ने लिखा था, "इस विषय में हमें 'विक्रम' संपादक व्यासजी की मुक्त कंठ से प्रशंसा करनी होगी, विक्रम को पुनर्जीवित कर उन्होंने सर्वप्रथम यह कार्य किया कि अपने मित्र और हिंदी कवि सुकवि 'हृदयजी' की स्मृति में एक अंक ही निकाल दिया है। इस अंक में वह संस्मरण बहुत मर्मस्पर्शी है, विशेषकर 'शुक्लजी' की धर्मपत्नी विंध्यवासिनी देवी शुक्ल का लेख 'चौबीस मार्च की रात' हृदयबेधक है और उनकी सुपुत्री का पत्र हृदयद्रावक है।"

व्यासजी ने इस अंक को 'अभावों की भेंट' कहा था, वास्तव में यह 'सद्भावों की भेंट' है। यदि अन्य पत्र संचालक-संपादक भी व्यासजी का अनुकरण करते हुए ऐसे यज्ञ करें तो साहित्यसेवियों के कीर्तिसार का पुण्य कार्य करने में विलंब न हो।

'आगामी कल' के संपादक प्रभाग चंद्र शर्मा ने भी पं. सूर्यनारायण व्यास के विशेष संपादन में अपना 'हृदयांक' प्रकाशित किया। सभी के 'हृदय' में था कि कुछ किया अवश्य जाना चाहिए। 'हृदय' का ही परिवार निराश्रित हो गया था, छोटे-छोटे, नन्हे-मुन्ने बच्चे थे, युवा पत्नी थी। व्यासजी के हृदय पर क्या गुजरी, उसे कैसे जाना जा सकता है, वे तो दो शरीर एक हृदय प्राण थे।

वे लंबे समय तक विचलित और अस्वस्थ रहे, कुछ न कर पाने की पीड़ा उन्हें कसमसा ही रही थी, अंततः इस झटके से उबरकर पं. व्यास ने उनके निराश्रित अनाथ परिवार के लिए एक यथार्थवादी योजना बनाई, एक संस्था की स्थापना की और उसका नाम रखा गया—'सत्साहित्यिक सेवक समाज।'

हिंदी संसार, भारतीय साहित्य संसार ही नहीं, बल्कि संपूर्ण विश्व साहित्य में ऐसी अभिनव-अनूठी और सार्थक योजना इससे पहले शायद ही कभी आई हो। आज जब सारे संसार में खिलाड़ियों के, संगीतकारों के, राजनीतिज्ञों के सम्मानार्थ-सहायतार्थ मंच, समारोहों का आयोजन किया जाता है, तब उस समय सन् १९४२ में 'सत्साहित्यिक सेवक समाज' अपने साहित्य बंधुओं के लिए एक विलक्षण प्रयास था, बकौल 'उग्र' हिंदी में क्या सारे भारतीय साहित्य में अपने 'कॉमरेडों' के गौरव-रक्षार्थ (स्वयं साहित्यिकों द्वारा) यह अभिनव आयोजन है।"

संयोगवश मेरे पास सत्साहित्यिक सेवक समाज की तरु के समस्त हिंदी साहित्यिकों के नाम प्रेषित पं. सूर्यनारायण व्यासजी का वह पत्र सुरक्षित है, जिससे हमें उस योजना का आभास और आयोजन की पृष्ठभूमि मिल सकती है—

(अक्षरशः अविकल नीचे दिया जा रहा है)

॥ श्री॥

एक अभिनव आयोजन

'सत्साहित्यिक-सेवक-समाज'

(भारती-भवन, उज्जैन)

हमने देखा है, हम देख रहे हैं, आए दिन अपने साहित्यिक बंधुओं की दुर्दशाएँ। सारे देश, जाति और समाज के लिए जिंदगी भर तपने पर भी उसका सारा जीवन दरिद्रता में बीतता है और मरण पारिवारिक चिंताओं के नरक में।

हम आर्य सनातनी, सहृदय और सुमित्र होकर भी सिवा चार आँसू रोने और चार सतर लिखने के कोई भी सहायता या कर्तव्यपालन उक्त राष्ट्रनिर्माताओं के प्रति नहीं कर पाते, नहीं करते, शायद करना नहीं चाहते।

फलतः अपने बड़े से बड़े साहित्यिक की याद हम आनन-फानन में भुला देते हैं और जिस साहित्यिक ने (प्रेमचंद की तरह) चार पैसे नहीं जोड़े-छोड़े या (जयशंकर प्रसाद की तरह) जिसके पास पैतृक व्यापार या संपत्ति नहीं—स्वर्गगत होते ही उसके क्रिया-कर्म तक का ठिकाना समुचित नहीं, पारिवारिक प्रबंध तो दूर की बात है (मुंशी नवजादिक लाल, पंडित ईश्वरी प्रसाद शर्मा, बाबू रामदासजी गौड़ आदि की तरह हैं)।

प्रदर्शक-प्रिय, हाँ-ढोंगी हम खसे हैं। जब भी कोई बड़ा साहित्यिक मरता है, सारे-के-सारे समाचार-पत्र आसमान को सर पर उठा लेते हैं। हरेक लेखक अपने व्यक्तगत संबंध उक्त मृतात्मा से साबित करने और उसे गुणों का आगार प्रमाणित करने लगता है। (यद्यपि जीते जी उसी ने चाहे मतात्मा को मंद मानने और लिखने तथा प्रमाणित करने में अपनी एड़ी का पसीना चोटी तक पहुँचा दिया होगा) मरने के कई दिनों तक हंगामा रहता है कि स्मृति बनाओ। परिवार की मदद करो, 'ग्रंथ सब प्रकाशित कराओ', मगर सारी खुराफात मौखिक गाल से निकली हुई।

हृदयहीन। तीन ही दिन बाद नामधारी 'सहृदय' मरे को भूल जाते हैं और होंठ और दाँत से अपनी कौड़ी को पकड़ने लगते हैं, जो कि संसारी जमीन पर दुर्भाग्य के सख्त सीमेंट से चिपकाई हुई होती है। कुल मिलाकर हमारा साहित्य सहृदयता का समुद्र न बनकर स्वार्थ का 'सहारा' (मरुस्थल) बनता जा रहा है और ऐसे कहाँ साहित्य बनता है।

पिछले २-३ वर्षों में हिंदी के अनेक अबल-सबल साहित्यिक प्रबल काल के विकराल गाल में गए हैं। अत: प्लेग मुरदे जैसे कच्चे जलाए जाते हैं, वैसे ही हमने सभी मृतात्माओं का सादरसंस्कार नहीं किया है। क्या सहृदय, सुसाहित्यिक, श्रद्धेय पंडित कृष्णकांत मालवीय के मरने पर हिंदी वालों ने उचित रीति से उनकी समीचीन स्तुति नहीं की। कई पत्रों में महज ४-५ पत्रों ने ही अग्रलेख लिखे। 'आज' और 'प्रताप' भी औचित्य के साथ नहीं नजर आए। श्रीरामचंद्रजी शुक्ल के निधन पर हम गाल नहीं गले से रोए, मगर हृदय अभी दूर ही रहा और तब तक मालवा के मधुर मयूर श्री रमाशंकरजी शुक्ल काशी में कैलाशवासी हो गए। अभी अंधड़ भी वय नहीं, नौजवान प्रतिभावान वह विद्वान्, सुकवि हमारे बीच से अंतर्धान हो गया। जो लोग सहृदय साधुमन पंडित रमाशंकर 'हृदय' को जानते हैं, वही जानेंगे कि उनके उठ जाने से हिंदी साहित्य के आँगन का एक कितना तेजस्वी सुप्रकाश 'बढ़' गया। वह ऐसे सुकवि थे, जैसे हिंदी में इने-गिने हैं, फिर भी यश या कविता से धन कमाने की ओर से वह एकांत उदासीन थे। बहुत मुश्किलों से उनकी रचनाएँ मित्र, पत्रकार पा सकते थे। कवि-सम्मेलनों में गाने या जाने का अभ्यास उनका मुतलक नहीं था। पंडित रमाशंकरजी शुक्ल परम सात्त्विक, स्वाभिमानी, साहित्यिक, ओजस्वी वक्ता, पंडित, उच्चकोटि के कवि थे। इतनी जल्दी हमारे बीच से उन्हें खींचकर 'नीच ने घोर नीचता दिखलाई है'। उनके छोटे-छोटे चार बच्चे। उनकी अभागिनी (रोगी की सेवा से अधमरी तथा वैधव्य से जीवित मरी) पत्नी। नीचे कोरी जमीन और ऊपर कोरे भगवान्। (पति के बाद कुलीन हिंदू नारी की स्वाभाविक दुर्गति) हे भगवान्!

भगवान् की प्रेरणा से हमारी बुद्धि में एक युक्ति आई। हमने सोचा, महज हाय-हायात्मक लेख या अग्रलेख लिखने से लेख या अग्रलेख लिखने से कुछ होता-जाता नहीं, अब हमें (जो अपने को यदि) समझदार समझते हैं, 'कुछ कर्म करने' त्याग करने पर आमादा होना होगा। हमने निश्चय किया कि उज्जैन में 'सत्साहित्यिक सेवक समाज' नाम की एक संस्था हम स्थापित करें, जो यथाशक्ति और जरूरतमंद साहित्यिकों के परिवार की पुष्ट सेवा किया करे। साथ ही यह सेवा सर्वथा साहित्यिकों की पवित्र सहायता से हो। धनिकों या अन्य सहृदय प्रशंसकों के हम निंदक नहीं, वे भी कर्तव्य समझकर कुछ मदद करेंगे तो यह संस्था उपकार ही मानेगी, मगर दारोमदार सारा रहेगा हमारे गरीब किंतु योग्यता से 'अमीर' साहित्यिकों की ही मदद पर। अब हम अपने 'आर्त' को भीख से नहीं, बातों से भी नहीं, अपने पसीने की कमाई और रक्त से संतुष्ट, पुष्ट करेंगे। हम चाहेंगे कि पंडित रमाशंकर शुक्ल 'हृदय' ही से यह सत्कार्य आरंभ हो। उनकी स्मृति में, उनकी सहृदयता की दाद में, उनके बाल-बच्चों के उपकारार्थ १२ पुस्तकों का एक सेट सर्वाधिकार के साथ छपाकर हम उनके परिवार को समर्पित करना चाहते हैं। प्रत्येक पुस्तक आने की होगी। हिंदी के श्रेष्ठ बाहर लेखक अपनी नवीन या श्रेष्ठतम रचनाएँ इस माला में गूँथेंगे, यह निस्संदेह सत्य है। अभी तक दो सुलेखकों से एक-एक रचना मिलने का वचन भी मिल चुका है, जिनके शुभ नाम हैं—पंडित हरिभाऊजी उपाध्याय और श्री पांडेय बेचन शर्माजी 'उग्र'। ये लेखक अपनी रचनाएँ और उनका सर्वाधिकार बंधुवर 'हृदयजी' की स्मृति में समर्पित कर देंगे। हमारे अन्य आदरणीय लेखक बंधु भी हमें सूचना दें कि वे अपनी कौन सी रचना शिव विभु के चरणों में समर्पण करने को तैयार हैं। आठ आना सीरीज में छप सकें—रचनाएँ इतनी ही बड़ी चाहिए। हमें विश्वास है कि हमारे शत-शत उदार साहित्यिक बंधु अपनी एक-एक रचना देने का वादा जरूर करेंगे और यथासंभव शीघ्र अपनी सुंदर रचना भेजकर इस नवीन आयोजन का शुभारंभ कर देंगे। संस्था धन की व्यवस्था कर पुस्तकें स्वयं छपा देगी। एक दूसरी बड़ी और विख्यात संस्था ने प्रकाशन को साधारण कमीशन पर बिकवा देने का वचन भी दिया है।

हम अपने सभी सहृदय साहित्यिक, पत्रकार और हिंदी सेवक भाइयों की सहायता, अनुमति और आशीर्वाद अपने इस प्रपत्र में सविनय चाहते हैं—बस।

विनम्र
सूर्यनारायण व्यास
भारती-भवन, उज्जैन।

इस पत्र को हिंदी में यथेष्ट आदर और सम्मान मिला, इस अभिनव योजना का और उसके उन्नायक पं. सूर्यनारायण व्यास का भी साहित्यिक बंधुओं ने पर्याप्त स्वागत और अभिनंदन किया।

आनन-फानन में हिंदी के विख्यात और स्थापित साहित्यिकों ने अपनी रचनाएँ इस अनूठे आयोजन के लिए प्रदान करने का आश्वासन दिया। महादेवी वर्मा, पं. सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला', डॉ. रामकुमार वर्मा, पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र', हरिभाऊ उपाध्याय, पं. देवीदत्त शुक्ल, हेमचंद्र शुक्ल तथा प्रभाकर माचवे ने अपने एक-एक ग्रंथ का सर्वाधिकार 'समाज' को देने का संकल्प और वचन दिया।

मगर संयोग ऐसा हुआ कि अपने साहित्यिक सुहृदय 'हृदयजी' की पावन स्मृति में पहली भेंट 'आवारा' नाटक के रूप में पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र' ने ही चढ़ाई।

'आवारा' की 'भूमिका और भपकी' में उग्र ने लिखा है—"मैं कहता हूँ चूक गई सुश्री महादेवी वर्मा, इस मौलिकता की माला में पहला मणि उनका होना चाहिए था। साथ ही चूक गए श्री निराला, श्री रामकुमार वर्मा, श्री हरिभाऊ उपाध्याय मेरे मित्र और परिचित। उक्त सभी सुहृदयों

ने 'हृदय' श्रद्धांजलि में अपने रचना-कुसुम सजाने का वादा किया था, वे शौक से पंडित सूर्यनारायण व्यास के पास प्रयास-प्रसून पूजार्थ प्रेषित कर सकते थे, मगर कहा जाता है कोई अस्वस्थ रहा, कोई बहुव्यस्त तथा ढींगर महामस्त।"

'आवारा' के प्रथम प्रकाशन का संपूर्ण खर्च पं. व्यास ने स्वयं उठाया था, इससे पहले और इसके बाद भी इस तरह के कार्य स्व. व्यासजी अनेक साहित्यिक और क्रांतिकारियों के लिए स्वयं आर्थिक कष्ट सहकर भी अर्थ-अनुष्ठान आयोजित करते रहे, शचींद्रनाथ सान्याल, विशंभर दयाल, छैलबिहारी (सरदार भगतसिंह को छुड़ाने के लिए दिया डकैती प्रमुख अभियुक्त) आदि को आश्रय देना।

'राष्ट्रयज्ञ कलेंडर' और अन्य कई घटनाएँ, जिनका स्वतंत्र इतिहास है, से लेकर पं. सिद्धनाथ आगरकर, उग्र, जोशी, बैरागी, श्रोत्रियों को उन्होंने अर्थबल, आत्मबल दिया था, 'स्वराज्य' संपादक पं. सिद्धनाथ माधव आगरकर पर निकाला विक्रमांक भी आज इतिहास है।

आज तो भूत भावन भगवान् महाकालेश्वर की अनुकंपा से स्व. हृदय का परिवार हर तरह से प्रतिष्ठित, समृद्ध और संपन्न है, उनके सुपुत्र नरेंद्र शुक्ल, हिंदुस्तान मोटर्स में रहे, आ. दीदीजी (धर्मपत्नी प्रो. हृदय) के आग्रह और अनुमति पर 'हृदय रचनावली' (३) का भी मैं संपादन कर चुका हूँ और जो शीघ्र प्रकाश्य है—उनके संपूर्ण साहित्य के प्रकाशित होते ही हिंदी संसार के समक्ष कई महत्त्वपूर्ण तथ्य भी प्रकाशित होंगे, मसलन 'मधुशाला' (१९३५) और 'करुण-कण' (१९३१) में अद्‌भुत प्रतिध्वनि साम्य है।

कि हालावाद के प्रथम प्रवर्तक प्रो. हृदय हैं न कि 'बच्चन' जैसा कि माना जाता है।

कि मुक्तिबोध आदि के साहित्यगुरु प्रो. हृदय अब तक अवमूल्यित क्यों रहे? आदि, आदि।

'उग्र' 'हृदयजी' के संपर्क में कैसे आए? निस्संदेह यह जिज्ञासा भी पाठकों और विशेषकर प्रबुद्ध पाठकों के मन में होगी, उक्त विलक्षण लेखकों की मुलाकात का प्रसंग 'सुधा' (मासिक) में प्रकाशित 'हृदय की बात' लेखक स्वयं 'उग्र' से स्पष्ट हो जाएगी।

निस्संदेह एक प्रतिभाशाली और समर्थ कवि के निराश्रित परिवार के सहायतार्थ यह एक अभिनव और उच्चकोटि का आयोजन था। अपने साहित्यिक बंधुओं के लिए इतनी उदात्त भावना आज कहाँ है? खुद साहित्य समाज और सृजन के लिए अपने जीवन की साँस-साँस अर्पित कर देने वाले, विक्रम विश्वविद्यालय के निर्माता, कालिदास समारोह के संस्थापक, विक्रम संपादक पद्मभूषण पं. सूर्यनारायण व्यास के दिवंगत हो जाने पर कितने साहित्यिकों ने उनके निराश्रित परिवार की सुध ली? 'उग्र' के लिए किसी ने क्या किया, आज किसी से छिपा नहीं है? इससे स्पष्ट है कि साहित्य-शिक्षा और संस्कृति में हम कितना ही कुछ क्यों न कर जाएँ, अपने संस्कारदाताओं के प्रति हम आज भी कृतज्ञ नहीं हैं।

पता नहीं कितनी विषम परिस्थितियों में इस महत् योजना का अंत हुआ, किंतु 'उग्र' का यह नाटक उस अभिनंदनीय योजना का पावन-प्रेरक स्मृति-चिह्न बन आज भी विजयपताका की तरह यशगान करता फहरा रहा है। सभ्य, समृद्ध समाज और उसमें कलाकार की दयनीय स्थिति, जमींदार की क्रूरता व जालसाजी का बिल्कुल नग्न चित्रण है। लाली-दयाराम की निश्छल प्लेटोनिक मनोवैज्ञानिक प्रेमगाथा को भी 'उग्र' ने जीवन के घिनौने पाशविक प्रेम-व्यवहारों से अलग-थलग चित्रित कर मर्मस्पर्शी और हृदयद्रावक बना दिया है।

आलोचकों ने इस नाटक को स्वाभाविक माना था, किंतु समसामयिक प्रगतिशील नाट्य रचनाओं में नई धारा और नूतन अभिव्यक्ति के अभाव का अनुभव कर उग्र ने सामाजिक जीवन में कला का स्वरूप निखारने के लिए नाटक में प्रचलित और रुचिकर शैली का अनुगमन किया है।

'उग्र' का समाज-अध्ययन बड़ा प्रखर था। उन्होंने गरीबी में उसकी संपूर्ण भयावहता को बाल्यावस्था में ही भोगा था, अत: वे इस नाटक में पूरी तरह सफल सामाजिक नाटककार प्रतीत होते हैं।

'उग्र' ने अपने लेखन-जीवन का आरंभ ही नाटकों से किया था। उनका पहला ही नाटक 'महात्मा ईसा' हिंदी की अत्यंत सफल और चर्चित नाटक रहा था। 'चुंबन', 'गंगा का बेटा', 'अन्नदाता', 'माधव महाराज महान' उनकी अन्य लोकप्रिय नाट्य कृतियाँ रही हैं। उपन्यास और भारी-भरकम संपादकीय से समय निकालकर 'उग्र' ने एकांकी और प्रहसन की भी रचना की है।

'विक्रम' में प्रकाशित 'ह.हे.हि.सा.स.' शीर्षक से लिखा उनका ऐसा ही एक प्रहसन है, जिसमें 'उग्र' ने हिंदी के अनेक प्रख्यात साहित्कारों का मजाक बनाया है। 'उग्र' के इस रचनात्मक साहस को मैंने अपनी पुस्तक 'उग्र के सात रंग' में शामिल किया है।

सत्साहित्यिक सेवक समाज, भारती-भवन, उज्जैन द्वारा प्रकाशित नाटक 'आवारा' में सामान्य सहायक पात्रों के अलावा छह पुरुष पात्र और तीन स्त्री पात्र हैं, नाटक तैंतीस दृश्यों तथा तीन अंकों में समायोजित है। पहले अंक में आठ, दूसरे में अठारह व तीसरे अंक में सात दृश्य हैं। 'नाटक' में 'उग्र' द्वारा प्रणीत गीत भी समायोजित हैं, जो कथानक व वातावरण को सजीव बनाते हैं। गीत-नाट्य की यह पद्धति लोक-नाट्य परंपरा की सी है। कथानक में प्राय: जो घटनाएँ मंच पर नहीं दिखाई जातीं, उनकी सूचना व वातावरण की मार्मिकता को और गहन बनाए रखने के लिए या कभी-कभी उसके प्रतीकात्मक अर्थों को स्पष्ट करने के लिए गायन उपयोगी सिद्ध होता है।

'आवारा' में बूढ़े भिखारी बुद्धराम की बेटी लाली और क्रूर जमींदार के छोटे भाई दयाराम को प्रमुख पात्र रूप में चित्रित कर हमारी सामाजिक मान्यताओं और परिस्थितियों पर सामयिक, तीखा और तीव्र व्यंग्य किया गया है। आज हिंदी में 'उग्र' नहीं रहे, न ही 'विक्रम' संपादक पं. सूर्यनारायण व्यास, न वैसे गुण-ग्राहक पाठक, मगर 'उग्र' का अकल्पनीय नाटक 'आवारा' आज भी उग्र की अपनी अद्‌भुत शैली 'उग्र-शैली' की याद दिलाता है।

भारती भवन (महाकाल)
उज्जैन-४५६००६ (म.प्र.)
दूरभाष : ९९९९०७००५९
rajshekhar.vyas@yahoo.co.in

द्रौपदी की ऊहापोह : 'व्यथा कहे पांचाली' से...

• उर्वशी अग्रवाल 'उर्वी'

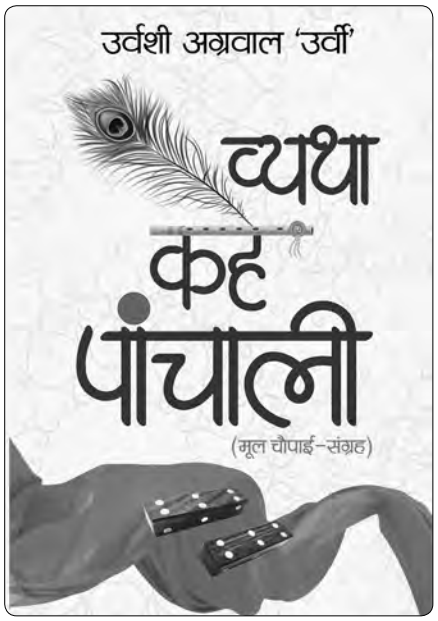

द्रौपदी का ऊहापोह : 'कुंती'

काश वचन स्वीकार न करती।
मैं भी रेखा पार न करती।।

*

पाँच पिया स्वीकारे क्यूँ थे।
खुद ही भाग बिगाड़े क्यूँ थे।।

*

काश विरोधी हो जाती मैं।
थोड़ा क्रोधी हो जाती मैं।।

*

काश नहीं जो भिक्षा होती।
कभी न खुद को ऐसे खोती।।

*

काश न मेरे हिस्से होते।
शुरू नहीं ये क़िस्से होते।।

*

काश मुझे वरदान न मिलता।
तो फिर ये शमसान न मिलता॥

*

काश जरा मैं जिद पर अड़ती।
व्यथा ना मुझको कहनी पड़ती॥

*

खुला शिव का नेत्र न होता।
तो शायद कुरुक्षेत्र न होता॥

* * *

द्रौपदी का ऊहापोह : कर्ण

काश कर्ण को वर लेती मैं।
वाणी वश में कर लेती मैं॥

*

काश कर्ण न छोड़ा होता।
कष्ट न साथ निगोड़ा होता॥

*

काश जाति को बीच न लाती।
दुख इतना मैं फिर क्यूँ पाती॥

*

कर्ण पे यों तो रीझ गई थी।
जाति सुनी तो खीज गई थी॥

*

काश कर्ण जो हितकर होता।
क्यों परिणाम भयंकर होता॥

*

काश कर्ण समझाया होता।
राज-पाट फिर साझा होता॥

*

काश नहीं ठुकराया होता।
कर्ण कभी न पराया होता॥

*

कर्ण अगर ना रोता शायद।
फिर संग्राम न होता शायद॥

* * *

द्रौपदी का ऊहापोह : अर्जुन

क्यों अर्जुन ने घुटने टेके।
क्यों परिणाम न उसने देखे॥

*

चुप था जो मुझको वर लाया।
माँ के सम्मुख क्यों घबराया॥

*

अपनी बात न कटने देता।
काश न मुझको बँटने देता॥

*

काश धर्नुधर साथ निभाता।
अपनी माता को समझाता॥

*

कितना सुंदर साथ मिला था।
अर्जुन का जो हाथ मिला था॥

*

यों ना काश विभाजन होता।
अर्जुन ही बस साजन होता॥

*

काश न मुझको वर के लाता।
अर्जुन सारे दुख का दाता॥

*

सत्य यही जो समर न होता।
कुरुक्षेत्र फिर अमर न होता॥

* * *

द्रौपदी का ऊहापोह : दुर्योधन

दुर्योधन से ज़बाँ लड़ायी।
सचमुच कृष्णा अब पछताई॥

*

काश नहीं मैं उसपर हँसती।
जान मुसीबत में क्यों फँसती॥

*

काश न कसती उसपर ताना।
सभा न पड़ता मुझको जाना॥

*

काश न उसको अंधा कहती।
क्यों फिर इतनी पीड़ा सहती॥

*

मैंने तो परिहास किया था।
वो समझा उपहास किया था॥

*

शब्दों के ना बाण चलाती।
फिर क्यों इतना दुख मैं पाती॥

*

अगर नहीं जो आपा खोती।
मारा-मारी फिर क्यों होती॥

*

जो दुर्योधन क्रुद्ध न होता।
तो शायद ये युद्ध न होता॥
* * *

द्रौपदी का ऊहापोह : दुःशासन

दुःशासन को माफ़ जो करती।
लाल न होती फिर ये धरती॥
*
काश बाँध मैं वेणी लेती।
मुझ पर ध्यान सभा ना देती॥
*
काश द्रौपदी क़सम न लेती।
लहराती फिर घर की खेती॥
*
दुष्ट यदि नहीं भाई होता।
किस्सा क्या दुखदायी होता?
*
काश दुःशासन मेरी सुनता।
ऐसी फिर वो मौत न मरता॥
*
उसको था कितना समझाया।
दुष्ट मगर कुछ समझ न पाया॥
*
काश अगर ये प्रण ना लेती।
कष्टों के ये क्षण ना लेती॥
*
दुःशासन मतिमंद न होता।
रिश्तों में फिर, द्वंद्व न होता॥
* * *

द्रौपदी का ऊहापोह : धृतराष्ट्र

काश न होते राजा लोभी।
हुआ न होता, हुआ है जो भी॥
*
काश न पांडु से वो जलते।
पांडव उनको कभी न खलते॥
*
भीष्म, विदुर की सुनते बातें।
कभी न मिलती फिर आघातें॥
*
काश न होने देते क्रीड़ा।
नहीं झेलते दारुण पीड़ा॥
*
नहीं मोह में अंधे होते।
फिर हालात न ऐसे होते।।
*

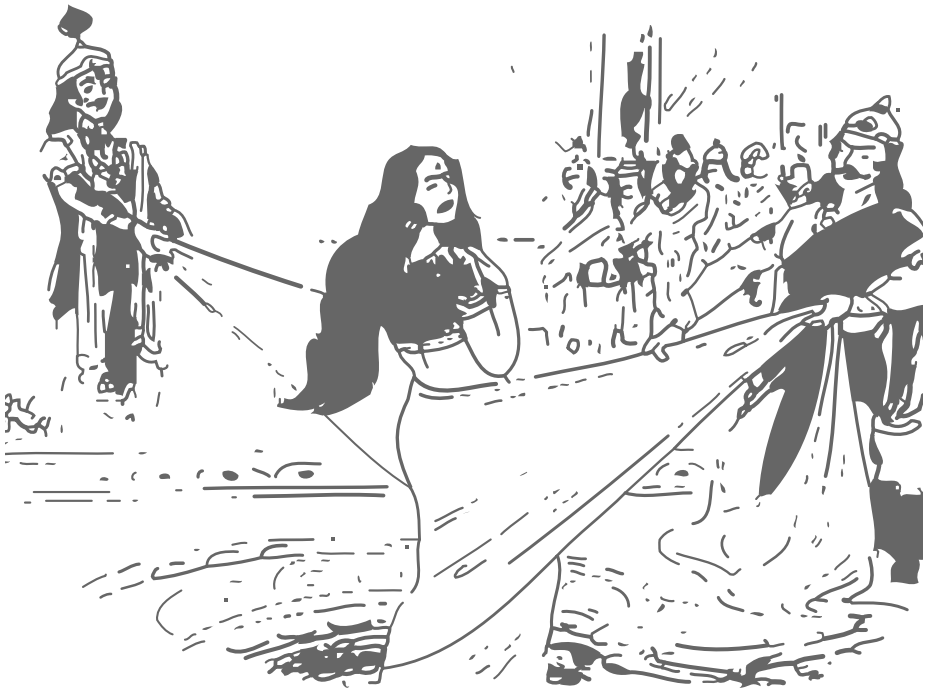

नहीं अगर जो विग्रह होता।
इंद्रप्रस्थ क्यों दुखड़ा ढोता॥
*
राजा यदि अंजान न होते।
इतने फिर नुकसान न होते॥
*
जो यह वाद-विवाद न होता।
इतना कभी फ़साद न होता॥
* * *

द्रौपदी का ऊहापोह : गांधारी

काश न पट्टी बाँधी होती।
नहीं युद्ध की आँधी होती॥
*
पतिव्रता थी यों तो रानी।
अँधियारे को वर कर मानी॥
*
राजा की आँखें बन जाती।
दुनिया उसको यों दिखलाती॥
*
सिर्फ पतिव्रत धर्म निभाया।
घर-गृहस्थी का कर्म भुलाया॥
*
बच्चों को थोड़ा समझाती।
संस्कार-शिक्षा दे पाती॥
*
झगड़ों को सुलझाती माता।
रहती बनकर साथी माता॥
*
लड़े भिड़े सब भाई माता।
मिली तुझे रुसवाई माता॥
*
यदि जो हठ के संग न होती।
शायद फिर ये जंग न होती॥
* * *

द्रौपदी का ऊहापोह : भीष्म

भीष्म प्रतीज्ञा काश न लेते।
जीवन से अवकाश न लेते॥
*
पितृभक्ति में डूबे थे वो।
लक्ष्य इसे ही समझे थे वो॥
*
पाप! द्यूत क्रीड़ा को कहते।
फिर क्यों वो पीड़ा को सहते॥
*
काश! सत्य का साथ निभाते।
और भीष्म भी कुछ कह पाते॥
*
सच के साथ खड़े जो होते।
क्यों फिर शरशैय्या पर सोते॥
*

चारों ओर न होती जड़ता।
क्यों फिर युद्ध देखना पड़ता॥
*
भीष्म सभा में बोले होते।
क्यों जलते फिर शोले होते॥
*
भीषण ये परिणाम न होता।
रिश्तों में संग्राम न होता॥
* * *

द्रौपदी का ऊहापोह : जयद्रथ

जयद्रथ को यदि दंडित करते।
दर्प दुष्ट का खंडित करते॥
*
काश उसे न छोड़ा होता।
दंभ दुष्ट का तोड़ा होता॥
*
पति दु:शाला का नहीं होता।
अपने प्राणों को वो खोता॥
*
जी सबका यहीं पसीजा था।
वो कौरव दल का जीजा था॥
*
काश न उसका सिर मुँडवाती।
और मृत्यु की नींद सुलाती॥
*
पार्थ नंदन को मारा था।
जयद्रथ ही तो हत्यारा था॥
*
काश उसे मरवाया होता।
'रावण' तभी जलाया होता॥
*
उसमें दंभ-प्रकर्ष न होता।
तो शायद संघर्ष न होता॥
* * *

द्रौपदी का ऊहापोह : प्रतिशोध

काश न जाना होता वन में।
कभी न जलती ज्वाला तन में॥
*
अगर न होती आँखें गीली।
नहीं आत्मा जाती छीली॥
*
खुले केश मैं नहीं दिखाती।
काश की आँसू नहीं बहाती॥
*

आग नहीं मैं अगर उगलती।
रण की ज्वाला कभी न जलती॥
*
काश नहीं मैं उनसे लड़ती।
बातें ऐसे नहीं बिगड़ती॥
*
काश न पतियों को उकसाती।
बात न इतनी फिर बढ़ पाती॥
*
मैं खुद को मर जाने देती।
काश न उनको ताने देती॥
*
लिया अगर वो प्रण ना होता।
तो शायद फिर रण ना होता॥
* * *

द्रौपदी का ऊहापोह : 'काश'

कैसे कह दूँ द्वेष नहीं है।
सुत मेरा इक शेष नहीं है॥
*
पाँच सुतों को माता थी मैं।
उनकी जीवन दाता थी मैं॥
*
काश न रब को प्यारे होते।
जीवित राज दुलारे होते॥
*
काश अगर समझौता होता।
ऐसा फिर बिल्कुल ना होता॥
*
वक्त बना क्यूँ हाय क़साई।
जीवित बचा ना मेरा भाई॥
*
सर पर हाथ बड़ों के होते।
सारे पेड़ जड़ों के होते॥
*
काश न खेला चौसर जाता।
कभी नहीं यह अवसर आता॥
*
जो ये नहीं लड़ायी होती।
फिर भी तो पछतायी होती॥
* * *

द्रौपदी का ऊहापोह :द्यूत-क्रिया

खुले अगर ये बाल न होते।
श्वेत पृष्ठ फिर लाल न होते॥
*
यदि मेरा अपमान न होता।
गिद्धों का जलपान न होता॥
*
मौन अगर गुरुदेव न होते।
रण आँगन में प्राण न खोते॥
*
काश! सत्य का साथ निभाते।
और बड़े भी कुछ कह पाते॥
*
द्रोण अगर दुर्भाव न होते।
अपनों में अलगाव न होते॥
*
द्यूत-क्रिया का काम न होता।
चीर-हरण अंजाम न होता॥
*
भरी सभा में कितना रोयी।
काश व्यथा को सुनता कोई॥
*
नारी का अपमान न होता।
कुरुक्षेत्र शमशान न होता॥

सा अ
४/१९ आसफ अली रोड
नई दिल्ली-११०००२
दूरभाष : ९९५८३८२९९९

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ और हिंदी

• विजय कुमार

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ सब भारतीय भाषाओं तथा बोलियों का समर्थक है। संघ की मान्यता है कि भारत में उपजी तथा विकसित हुई हर भाषा राष्ट्रभाषा है और उसे भरपूर सम्मान मिलना चाहिए। सबसे अधिक बोली और समझी जाने के कारण हिंदी राष्ट्रभाषा के साथ 'संपर्क भाषा' भी है। इसलिए संघ के केंद्रीय कार्यक्रमों में सब काररवाई हिदीं में ही होती है, यद्यपि संख्यात्मक आँकड़े अंग्रेजी में भी दिए जाते हैं। राज्यों के कार्यक्रम वहाँ की स्थानीय भाषा में ही होते हैं।

संघ शिक्षा वर्ग में शिक्षार्थी स्थानीय भाषा के अलावा किसी अन्य भाषा का गीत भी याद करते हैं। जो प्रचारक या पूर्णकालिक कार्यकर्ता कार्य विस्तार के लिए दूसरे राज्यों में भेजे जाते हैं, वे कुछ समय में ही वहाँ की भाषा और बोली सीखकर फिर उसी में बातचीत करते हैं। कुछ समय बाद पता ही नहीं लगता कि वे स्थानीय हैं या बाहरी? असल में किसी भी भाषा का प्रचार-प्रसार उसे बोलने से ही होता है। प्रारंभ में बोलने में कुछ झिझक होती है, पर एक बार वह झिझक टूटी, तो फिर बोलना आसान हो जाता है। भाषा सीखने और सिखाने के लिए संघ इसी तरह काम करता है।

संस्कृत भारत की प्राचीन और शास्त्रीय भाषा है। भारत की हर भाषा में इसके शब्द बहुतायत में मिलते हैं। इसे सीखने से भारत की हर भाषा आसानी से सीख सकते हैं। आजकल भाषा के लिए राज्यों में झगड़े होते हैं, पर संस्कृत का कहीं विरोध नहीं है। संघ में शाखा की आज्ञाएँ और प्रार्थना संस्कृत में ही है। हमारे प्राचीन ज्ञान-विज्ञान का खजाना भी अधिकांशत: संस्कृत ग्रंथों में ही सुरक्षित है। दुर्भाग्यवश विज्ञान जानने वाले संस्कृत और संस्कृत जानने वाले विज्ञान नहीं जानते। दोनों के मिलने से इस खजाने का ताला खुल सकता है। इसलिए संघ संस्कृत के प्रचार-प्रसार का आग्रह और प्रयास कर रहा है। इसके लिए 'संस्कृत भारती' नामक संस्था भी काम करती है।

जहाँ तक हिंदी की बात है, आजादी के कुछ साल बाद दक्षिण भारत में हिंदी विरोधी आंदोलन हुआ। वहाँ के कुछ राजनेताओं और बुद्धिजीवियों को भय था कि देश भर में उत्तर भारत वालों की भाषा हिंदी थोप दी जाएगी और इस बहाने वे हम पर हावी हो जाएँगे। अंग्रेजों ने अब तक उन्हें यही पढ़ाया था, इसलिए वे हिंदी का विरोध और अंग्रेजी का समर्थन करते थे। वस्तुत: वहाँ हिंदी नहीं, अपितु अरबी-फारसी मिश्रित हिंदुस्तानी का विरोध था। उसमें राजा राम को बादशाह राम और भगवती सीता को बेगम सीता कहते थे। इस हिंदी विरोध का सबसे अधिक प्रभाव तमिलनाडु में था।

उन्हीं दिनों तमिलनाडु के कोयंबटूर नगर में संघ का एक विशाल कार्यक्रम हुआ, जिसमें तत्कालीन सरसंघचालक श्रीगुरुजी मुख्य वक्ता तथा प्रबल हिंदी विरोधी पूर्व केंद्रीय मंत्री श्री षणमुगम शेट्टी अध्यक्ष थे। श्रीगुरुजी ने हिंदी विरोधी आंदोलन पर टिप्पणी करते हुए कहा कि भारत की हर भाषा राष्ट्रभाषा है; पर संपर्क भाषा के नाते संस्कृतनिष्ठ हिंदी सबसे अच्छी है। देश में सबको उसे अपनाना चाहिए। यह सुनकर श्री शेट्टी चकित रह गए। उन्होंने अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा कि यदि संघ का यह दृष्टिकोण है, तो मैं उसका समर्थन करता हूँ। सभा में आए संघ तथा हिंदी विरोधियों के चेहरे उतर गए।

छात्र जीवन से ही लेखन-संपादन एवं सामाजिक कार्यों में रुचि। सहायक संपादक राष्ट्रधर्म (मासिक) लखनऊ। छोटी-बड़ी ९५ पुस्तकें प्रकाशित। ६०० से अधिक लेख, व्यंग्य, निबंध, कहानी आदि अनेक पत्र-पत्रिकाओं तथा अंतरजाल पर प्रकाशित। साहित्य की अनेक विधाओं में नियमित लेखन।

सुदर्शन कुंज, सुमन नगर,
धर्मपुर, देहरादून-२४८००१ (उत्तराखंड)
दूरभाष : ९१४९३९८०७७
vj.kumar.1956@gmail.com

पर्थ-प्रवास के कुछ संस्मरण

• श्रीधर द्विवेदी

किशोर पौत्र-पौत्री के निरंतर आग्रह-अनुरोध पर हम दोनों पति-पत्नी इस बार नव संवत्सर के शुभारंभ एक अप्रैल के दिन सिंगापुर विमान सेवा से ऑस्ट्रेलिया के महानगर पर्थ पहुँच गए। वहाँ करीब पंद्रह दिन बिताने के बीच हमें कुछ अविस्मरणीय अनुभव हुए, जिन्हें मैं लिपिबद्ध करने का प्रयास कर रहा हूँ। उनमें से कुछ प्रमुख हैं—

चिकित्सा विषय पर हिंदी में लिखनेवाले प्रतिनिधि लेखक। चिकित्सा क्षेत्र में अनेक राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय फेलोशिप से सम्मानित। ढाई सौ से अधिक शोध-पत्र विभिन्न पत्रिकाओं में प्रकाशित। 'हृदय सूक्तियाँ', 'तंबाकू चित्रावली', 'मैं बनारस हूँ', 'स्कूल स्वास्थ्य' कृतियाँ प्रकाशित। संप्रति नई दिल्ली स्थित नेशनल हार्ट इंस्टीट्यूट में वरिष्ठ हृदय रोग विशेषज्ञ।

स्वान पयस्विनी का मौन संकेत

पश्चिमी ऑस्ट्रेलिया की राजधानी पर्थ विश्व के खूबसूरत शहरों में से एक है। यह महानगर 'स्वान' नदी के किनारे पर बसा हुआ है। इस नदी की कुल लंबाई ७२ किलोमीटर है और इसके बेसिन का क्षेत्रफल १,२१,००० वर्ग किमी. है। स्वान अंततः हिंद महासागर में विलीन हो जाती है। इसका नाम स्वान क्यों पड़ा, इस विषय में कोई विशेष कारण नहीं पता चलता है। पर्थ नगर की खोज का प्रयास सर्वप्रथम डच नाविकों ने किया, पर वे पूर्णतः विफल रहे। उनके बाद फ्रांसीसी नाविकों ने दो बार कोशिश की। वे भी नदी के किनारे रेत-बालू के ढूहों से जूझते रहे और कई साथियों के प्राण गँवाकर भी सफल नहीं हो सके। अंततोगत्वा अंग्रेजों ने नदी पार कर इस शहर को ढूढ़ने में सफलता प्राप्त की। संभवतः नदी के आसपास काले हंसों को देखकर उन्होंने इस नदी को 'स्वान' के नाम से संबोधित करना शुरू कर दिया। ज्ञात रहे, अंग्रेजी में स्वान को हंस कहते हैं। कृष्ण हंस को पश्चिमी ऑस्ट्रेलिया में २५ जुलाई, १९७३ से राज्य पक्षी का सम्मान प्राप्त है।

पूरे पर्थ को अपने अंक में समेटे पयस्विनी स्वान इस महानगरी की जीवन-रेखा है। पर्थ निवासियों ने इसे बहुत सँजोकर, सजा-सँवारकर रखा है। मजाल है कोई इसे दूषित कर सके। मुझे कोई इसमें स्नान-प्रक्षालन करते, थूकते, खखारते, किसी प्रकार के उच्छिष्ठ का निस्तारण करने का दुस्साहस करते नहीं दिखा। स्रोतस्विनी स्वान के किनारे-किनारे अनेक भव्य होटल, बहुखंडीय इमारतें, अट्टालिकाएँ, व्यापारिक केंद्र, मॉल, उपरिसेतु निर्मित किए गए हैं। सबकी वास्तु रचना ऐसी कि नदी का कूल भी दिखता रहे और उसका सलिल प्रवाह पर दुकूलों को कोई क्षति न पहुँचे। सरिता के प्राणाधार विशाल वृक्षों को कोई हानि न पहुँचे। पर्थ सिटी सेंटर के निकट एक विशाल वृक्ष की एक भुजा भूमिशायी बुद्ध की मुद्रा में स्वान दुकूल की तरफ आने वाले अभ्यागतों का मानो स्वागत कर रही थी, पर किसी ने उसे क्षतिग्रस्त करने या उस पर आरूढ़ होकर उसे कंपित या विकृति करने की सोची भी न होगी। यह सब करना वहाँ अपराध और जघन्य समझा जाता है।

मैं जब स्वान पयस्विनी की स्वच्छता और रख-रखाव की तुलना राजधानी दिल्ली की यमुना से करता हूँ तो मन मसोसकर रह जाता हूँ कि कभी लालकिले से सटकर बहने वाली यमुना अब लाल किले से कितनी दूर मलिन, फेनिल, पंकमयी और शिथिल बह रही है। उसमें आस-पास का सारा मल, उच्छिष्ट बह रहा है। अब वह अंतिम साँसें गिन रही है। कमोबेश यही हाल लखनऊ की गोमती तीरा की है। काशी में अविरल प्रवाहिनी, मुक्तिदायिनी माँ गंगा का हाल भी बहुत अच्छा नहीं है। क्या हम भारतवासी पर्थ पयस्विनी स्वान तथा लंदन टेम्स के किनारे बसे उनके निवासियों द्वारा अपनी जीवन-रेखा रूपी इन सरिताओं को निर्मल रखने और उनके अजस्र प्रवाह को अक्षुण्ण रखने के सद्प्रयास से यह शिक्षा नहीं ले सकते कि हम भी अपनी नदियों को कैसे विमल और सनातन रखे? कहने को तो हम गंगा, यमुना, गौमती, नर्मदा, गोदावरी, कावेरी, कृष्णा जैसी बड़ी नदियों के साथ अपने आसपास छोटे-छोटे पोखरों-जलाशयों को भी देवी-देवताओं का सम्मान देते हैं, पूजा-अर्चना करते हैं, परंतु जाने-अनजाने अपने व्यवहार से उन्हें निरंतर मलिन, शिथिल और संकुचित करते रहे हैं। इस विरोधाभास से अब हमें मुक्ति लेनी चाहिए। स्वान पयस्विनी मुझे यही मौन संकेत दे रही थी।

पर्थ में रामनवमी : उठ रहे कुछ विचार

आज १० अप्रैल है—चैत्र शुक्ल नवमी का शुभ दिन। त्रेतायुग में अयोध्या की पावन नगरी में महाराज दशरथ के राजनिवास में मर्यादा पुरुषोत्तम राम का जन्म कौशल्या माता की कोख से मध्याह्न के सुहावने

क्षणों में हुआ था। स्वदेश में प्राय: हर नगर-महानगर मर्यादा पुरुषोत्तम राम की आराधना-पूजा में निमग्न होगा। हम पर्थ में थे, इसलिए वहाँ के सुप्रसिद्ध बालामुर्गन (कार्त्तिकेय) मंदिर में दर्शन-पूजन के लिए सपरिवार गए। यह मंदिर पर्थ नगर से करीब अट्ठाईस मील दूर शांत-एकांत क्षेत्र में दक्षिण भारतीय श्रद्धालुओं द्वारा बनाया गया है। वहाँ पर अधिकतर दक्षिण भारतीय और श्रीलंका मूल के लोग पारंपरिक वेश-भूषा में आते हैं। मंदिर के त्रिपुंड मंडित पंडित-पुरोहित अपनी विशिष्ट शिखा, धोती और उत्तरीय में जब दक्षिण भारतीय आरोह-अवरोह के साथ देवभाषा संस्कृत में वेदोच्चार करते हैं तो सुनते ही बनता है। हम लोगों ने भी श्री कार्त्तिकेय के दर्शन के साथ-साथ राम दरबार, मारुतिनंदन, भगवान् शिव और शक्ति स्वरूपा देवी भगवती के दर्शन किए। परिक्रमा की। कुछ क्षण बिताए और वहाँ स्थित शुभ्र एवं बहुरंगी मयूर को देखकर वापस घर लौट आए।

रामजन्म की पवित्र गाथा को अपने अविस्मरणीय महाकाव्य रामचरितमानस के माध्यम से अक्षरश: उतारने वाले गोस्वामी तुलसीदास ने रामनवमी का ही मांगलिक दिन चुना था। यद्यपि तुलसी द्वारा रामचरितमानस लिखे जाने के पूर्व महर्षि वाल्मीकि की देवभाषा संस्कृत में रचित रामायण अनादि काल से लिखी जा चुकी थी, परंतु दीर्घ काल से चली आ रही पराधीनता ने भारतीय संस्कृति और संस्कृत पर इतना प्रबल और सांघातिक प्रहार किया कि अधिकांश भारतीय अपनी देवभाषा और संस्कृति को शनै:-शनै: विस्मृत करते जा रहे थे और विदेशी भाषा को अपनाने, उसकी संस्कृति को अंगीकार करने में गर्व और अस्तित्व के संकट को टालने का एकमात्र उपाय समझने लगे थे। इन्हीं विपरीति परिस्थितियों में शिशु तुलसीदास का जन्म सन् १४९७ में, संवत् १५५४ श्रावण शुक्ल सप्तमी को हुआ था। कहना न होगा कि उनका बचपन और कैशोर्य अत्यंत निर्धनता में बीता। वैवाहिक जीवन में बढ़ने के उपरांत युवक तुलसी पत्नी रत्नावली से उपालंभ के पश्चात् विरक्त हो गए। इस तिरस्कार के पश्चात् उनके जीवन में एक ऐसा क्रांतिकारी मोड़ आया कि वे पूर्णत: रामभक्त और राम-समर्पित हो गए।

रामोपासना की इसी उत्कट आराधना में वह अयोध्या, चित्रकूट, काशी, संपूर्ण मध्यभारत, किष्किंधा (वर्तमान कर्नाटक), रामेश्वर तथा राम से संबंधित प्राय: सभी स्थानों पर पैदल भ्रमण करते रहे। अंतत: काशी को उन्होंने अपना कार्यक्षेत्र बनाया। रामायण के प्रणयन का सुनिश्चय उन्होंने अयोध्या में ७७ वर्ष की अवस्था में विक्रम संवत् १६३१ में भगवान् राम के आविर्भाव, अर्थात् राम नवमी के दिन आरंभ किया, परंतु उसके विभिन्न कांडों की रचना चित्रकूट और काशी में संपन्न की। मानस की भाषा उन्होंने बहुत सोच-समझकर लोकभाषा हिंदी रखी, जिससे उसकी लोक में पैठ हो सके और लोग राम के चरित्र को हृदयंगम कर सकें। उन्होंने तत्कालीन अवधी और ब्रज भाषा के शब्दों का सहारा लिया और संस्कृत के दुरूह शब्दों को भी सरलतम बनाकर उन्हें अपने शब्द भंडार में बड़ी सुगमता और सहजता से प्रयोग किया। इस विषय में महाकवि तुलसी का कोई सानी नहीं। उनकी शब्द योजना और शिल्प दोनों अप्रतिम हैं। कोई मुकाबला ही नहीं। यह उनकी भाषा और ग्रामीण संस्कृति से समरसता का ही प्रतिफल है कि रामायण घर-घर में राम भक्ति के प्रचार-प्रसार का सुलभ साधन बन गई। कालांतर में जब अंग्रेजों ने सनातन संस्कृति की जड़ पर प्रहार करना शुरू किया तो यह रामायण ही थी, जिसने उत्तर भारत, बिहार, मध्यभारत और राजस्थान में रामकथा को जीवित रखा।

सच कहिए तो अप्रतिम रामभक्त, 'संकटमोचन' के अनन्य उपासक, हिंदी के महानतम कवि, सनातन संस्कृति के प्रबल उन्नायक, जीवन के अंतिम क्षण तक अखंड आस्तिक, एक सौ छब्बीस वर्ष तक स्वस्थ-सुदीर्घ जीवन के धनी ऐसे रामचरितमानसकार को हम कैसे सहज में विस्मृत कर सकते हैं। उन्होंने जब आततायी मुगलों के काल में हमारी आस्तिकता और संस्कृति की लौ जलाए रखी। तुलसी रचित मानस ने अंग्रेजी शासन काल की पराधीनता के विकट दिनों में जब गिरमिटिया भारतीय प्रवासी समुद्री जहाजों में ठूस-ठूसकर सुदूर अफ्रीका, मॉरीशस, फिजी, सूरीनाम, कीनिया आदि देशों में मजदूर के रूप में भेजे गए, तब उनके पास तुलसीकृत रामायण ही एक ऐसा साधन था, जिसने उनको धर्मच्युत होने से बचा लिया और वे सनातन धर्म से जुड़े रहे। आज उन देशों में फल-फूल रही भारतीय संस्कृति तुलसी की इस अमर कृति का ज्वलंत प्रमाण है। लोकमंगल के ऐसे महाकवि तुलसीदास को उनके 'मंगल भवन अमंगल हारी', 'दीन दयाल बिरद संभारी, हरहु नाथ मम संकट भारी', 'मम पन शरनागत भय हारी', 'सकल सुमंगल दायक रघुनायक गुणगान' तथा 'मामभिरक्षय रघुकुल नायक' परमाराध्य मर्यादा पुरुषोत्तम राम के साथ-साथ कोटिश: प्रणाम।

जब सागर तट ने तुलसी के अद्भुत शब्द-शिल्प का स्मरण कराया

पर्थ आए हुए हम लोगों को दस दिन से ऊपर हो गए। प्राय: प्रतिदिन ही हमारे किशोर पौत्र-पौत्री, दोनों दादा-दादी को कहीं-न-कहीं नगर के किसी रमणीक स्थान पर ले जाने का आग्रह करते हैं। पत्नी के घुटनों में अपार कष्ट के बावजूद हम किशोर बच्चों के स्नेहिल अनुरोध को 'ना' नहीं कर पाते हैं। आज वे हम लोगों को नगर के हिंद महासागर समुद्र तट पर ले जाना चाहते हैं। अतएव हम दोनों सहर्ष तैयार हो गए। चिरंजीव की जीपनुमा गाड़ी से हम सब समुद्र तट की तरफ चल दिए। करीब आधा घंटे बाद नगर के शांत-प्रशांत सड़कों से होते हुए, अगल-बगल के नैसर्गिक सौंदर्य का आनंद लेते हुए, संकेत पट्टिकाओं को ध्यान में रखते हुए तट के निकट पहुँच गए। राजमार्गों पर लगी ये पट्टिकाएँ कैंब्रिज सिटी समुद्र तट की ओर इशारा कर रही थीं। एकबारगी मन में यह ऊहापोह हुआ। पर्थ में कैंब्रिज का क्या आशय? तुरंत ध्यान आया। ऑस्ट्रेलिया पूर्व में ब्रिटिश उपनिवेश था। उसे १ जनवरी, १९०१ में अंग्रेजों से मुक्ति मिली। अंग्रेज जहाँ-जहाँ भी गए, चाहे वह ऑस्ट्रेलिया हो या अमेरिका, कनाडा या न्यूजीलैंड, वे अपने देश के कैंब्रिज, लंदन, यार्क या वेलिंग्टन को भूल नहीं पाए और उन्होंने उन स्थानों पर भी कैंब्रिज, यॉर्क, लंदन, वेलिंगटन स्थापित कर दिए। इस सोच-विचार में हम सब समुद्र तट के निकट पहुँच गए।

समुद्र तट के निकट सड़क के दोनों ओर कुछ रेस्त्राँनुमा दुकानें थीं। कुछ आवासीय भवन भी थे। सब रोशनी से नहाए हुए। पर बाहर कोई भी नहीं था। शायद लोग अंदर ही आमोद-प्रमोद, नाश्ता-भोजन, नृत्य-विलास में लिप्त होंगे। गाड़ी जब समुद्र तट तक पहुँच गई तो वहाँ गाड़ियों की कतारें लगी हुई थीं। बड़ी मुश्किल से गाड़ी के लिए पार्किंग का स्थान मिला। अपने यहाँ की तरह नहीं कि जहाँ चाहा, वहीं गाड़ी अटका दी, चाहे आने-जाने वालों को कितनी भी असुविधा का सामना क्यों न करना पड़े ? अक्षम और अतिवृद्ध लोगों के लिए समुद्र तट तक ढलान के माफिक अलग गलियारा है। जहाँ से तटीय रेत का प्रारंभ होता है, वहाँ से खुरदुरे प्रकार की मजबूत चटाई बिछी थी, जिससे होकर हम लोग तट तक पहुँच गए। रात हो चुकी थी। समुद्र का दृश्य अत्यंत अद्‌भुत था। सामने प्रशस्त हिंद महासागर अंधकार के आवरण में डूबा हुआ था, पर उसके दोनों तटों पर प्रकाश-पुंज का आलोक विस्मयकारी अनुभव था।

जिस स्थान पर हम लोग खड़े थे, वहाँ पर कुछ अन्य लोग भी इस नयनाभिराम दृश्य का आनंद उठा रहे थे। एक प्रौढ़ अपने नन्हे शिशु के साथ मछली पकड़ने में व्यस्त था। हम लोग कुछ दूर एक सुदृढ़ प्रस्तर खंड पर खड़े होकर ऊपर से समुद्र की उत्ताल लहरों का आनंद लेने लगे। हिंद महासागर की उत्ताल तरंगें रह-रहकर किनारे से टकरा रही थीं। उनका उफान देखते ही बनता था। उनसे उत्पन्न ध्वनि मन में रोमांच उत्पन्न करती थी। बालुका कणों से उनकी क्षण-भंगुर स्पर्श मिलन जीव और आत्मा के मिलन की क्षणभंगुरता का स्मरण कराता था। मेरे किशोर पौत्र-पौत्री मुझे बार-बार इन लहरों के बीच ले चलने के लिए प्रेरित कर रहे थे, पर मैं कुछ भय, कुछ सागर की विशालता से मुग्ध होने के कारण दूर से ही इस नैसर्गिक दृश्य का अवलोकन कर रहा था।

वहाँ पर खड़े होकर मैं कल्पना कर रहा था, यह वही अथाह हिंद महासागर का अंश है, जो भारत-श्रीलंका (त्रेतायुग की लंका) के बीच प्रवाहित होता है और त्रेतायुग में सीता की खोज में निकले मारुतिनंदन के समक्ष चुनौती बनकर खड़ा था। परंतु वह तो ठहरे 'अतुलित बलधाम'। उन्होंने अपने अपार साहस और पराक्रम के बल पर उसे लाँघा ही नहीं वरन् सीता मय्या से अशोक वन में मुलाकात की, लंका दहन किया और प्रभु राम के पास वापस सकुशल लौट आए। अब बारी थी संपूर्ण वानर सेना को समुद्र पार जाने की। इसलिए मर्यादा पुरुषोत्तम राम ने पहले सागर से पार जाने की याचना की। जब उसने उनकी प्रार्थना स्वीकार नहीं की तो उन्होंने धनुष-बाण सँभाला। श्रीराम के धनुष पर बाण चढ़ाते ही पयोनिधि काँप उठा—

'विनय न मानत जलधि जड़, गए तीन दिन बीत।'
बोले राम सकोप तब, भय बिन होय न प्रीत॥
संधानेउ प्रभु विशिख कराला। उठी उदधि उर अंतर ज्वाला॥
मकर उरग झष गन अकुलाने। जरत जंतु जलनिधि जब जाने॥
कनक थार भरि मणि गन नाना। विप्र रूप आयउ तजि माना॥'

यह प्रसंग याद आते ही मुझे गोस्वामी तुलसीदास के अप्रतिम शब्द-शिल्प का ध्यान हो आया, जिन्होंने महासागर के लिए रामचरितमानस के सुंदरकांड में नौ पर्यायवाची शब्दों का यथोचित प्रयोग किया है। ये शब्द हैं—सिंधु, सागर, पयोधि, पयोनिधि, पाथोधि, जलधि, उदधि, जलनिधि, वारिधि। इस मंथन-विचार-विमर्श के बीच मेरी समुद्र तट यात्रा पूर्ण हो गई।

साअ
बी-१०७, सागर अपार्टमेंट, सेक्टर-६२,
नोएडा-२०१३०४ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९८१८९२९६५९
shridhar.dwivedi@gmail.com

'हिंदी' को बढ़ावा देने को भारत ने यूएन को दिए छह करोड़ रुपए

न्यूयार्क, एएनआइ : भारत संयुक्त राष्ट्र (यूएन) में हिंदी को बढ़ावा देने का प्रयास कर रहा है। इस कड़ी में भारत ने संयुक्त राष्ट्र के एक प्रोजेक्ट के लिए आठ लाख डॉलर (करीब छह करोड़ रुपए) का योगदान दिया है।

भारत के उप स्थायी प्रतिनिथि श्री आर. रवींद्र ने दुनिया भर में हिंदी भाषी, आबादी के बारे में जानकारी मुहैया कराने के लिए संयुक्त राष्ट्र को यह चेक सौंपा है। संयुक्त राष्ट्र के बारे में हिंदी में जानकारी मुहैया कराने के लिए एक प्रोजेक्ट शुरू किया गया है। भारत संयुक्त राष्ट्र के वैश्विक संचार विभाग (डीजीसी) के साथ साल 2018 से साझेदारी कर अतिरिक्त बजट मुहैया करा रहा है। इस साझेदारी के बाद से संयुक्त राष्ट्र की वेबसाइट, सोशल मीडिया हैंडल और फेसबुक हिंदी पेज के माध्यम से हिंदी में समाचार प्रसारित किया जाता है। इसके अलावा संयुक्त राष्ट्र रेडियो चैनल हर सप्ताह हिंदी में न्यूज बुलेटिन प्रसारित करता है।

तीन गीत

● बनज कुमार बनज

सुपरिचित लेखक। फैली-फैली धूप है (दोहा-संग्रह), गीतों की छाँव एवं अंजुरी भर गीत (गीत-संग्रह) एवं अन्य रचनाएँ प्रकाशित। भारत के नामचीन कवियों और शायरों के साथ लगभग ढाई सौ से अधिक कार्यक्रमों में भागीदारी। विभिन्न टी.वी. कार्यक्रमों में रचनाएँ प्रसारित। वरिष्ठ उपाध्यक्ष, ऑल इंडिया सेक्युलर राइटर्स एसोसिएशन। राजस्थान साहित्य अकादमी सहित लगभग पच्चीस सम्मानों से सम्मानित।

सुना जोगिया

जिंदगी की कहानी सुना जोगिया।
चुप न रह कुछ-न-कुछ गुनगुना जोगिया।

छोड़ दे तू गली ये उहापोह की।
राह अवरोह की कर दे आरोह की।
इस तरह से कथा पूरी कर जोगिया।
दे गवाही ये साँसें समारोह की।
प्यार करके दिखा सौ गुना जोगिया।
चुप न रह कुछ-न-कुछ गुनगुना जोगिया।

सो न जाए कहीं चाँद तारों का मन।
खो न जाए कहीं भीड़ में ये गगन।
इस जवानी भरी रात की देह का।
हो न जाए कहीं रास्ते में हवन।
मिल के सपनों की चादर बुना जोगिया।
चुप न रह कुछ-न-कुछ गुनगुना जोगिया।

सोच मत मन की सब खिड़कियाँ खोल दे।
इन हवाओं में तू जिंदगी घोल दे।
मैं तेरी रीत हूँ मैं तेरी प्रीत हूँ।
अपनी खुशबू से मुझको अभी तोल दे।
साथ करमों की रुई धुना जोगिया।
चुप न रह कुछ-न-कुछ गुनगुना जोगिया।

सावन की बौछार

पीली पड़ती शाखा पर जब सावन की बौछार हुई।
लगा कहीं पर सन्नाटे में पायल की झंकार हुई।

समय समर्थक हुआ आज तो शांत हुई विरहा की ज्वाला।
भर जाता था बार-बार खाली होकर प्यासी का प्याला।
आज नदी द्वारा बादल से बार-बार मनुहार हुई।
पीली पड़ती शाखा पर जब सावन की बौछार हुई।

होड़ मची थी रस पीने की ध्यान मग्न था नीला अंबर।
मंथर-मंथर नाच रही थी धरती आज त्याग पीतांबर।
पूर्ण मिलन की सारी किरिया, विधियों के अनुसार हुई।
पीली पड़ती शाखा पर जब सावन की बौछार हुई।
प्रीत मुखर थी, त्याग मुखर था, साँसों का संगीत मुखर था।
एक तरफ तो थी अराधना, एक तरफ का गीत मुखर था।
मन की लहरों बीच फँसी थी तन की नैया पार हुई।
पीली पड़ती शाखा पर जब सावन की बौछार हुई।

उधार की साँसें

मैंने उम्र गुजारी लेकर साँसे सभी उधार में।
साथ नहीं छोड़ा पतझर ने मेरा कभी बहार में।

थी उधार की साँसे फिर भी कभी लजाया नहीं नमन को।
अपमानित होने से मैं तो सदा बचाता रहा सदन को।
मुझे जीतने पर न मिलता मजा मिला जो हार में।
मैंने उम्र गुजारी लेकर साँसे सभी उधार में।

कभी नहीं ये चाहा शीतल हो जाएँ अंगारे मेरे।
कभी नहीं की चिंता मेरे मुस्काते से मिले सवेरे।
न ये देखा कभी कि कितनी चुभन बची है खार में।
मैंने उम्र गुजारी लेकर साँसे सभी उधार में।

पक्षपात की रेल पकड़कर नहीं गया मैं गंतव्यों पर।
मैंने सदा भरोसा रखा काल चक्र के वक्तव्यों पर।
घर फूँका है सोच-समझकर अपना बीच बाजार में।
मैंने उम्र गुजारी लेकर साँसे सभी उधार में।

ई-४९२ लाल कोठी योजना,
विधान सभा के पीछे,
जयपुर-३०२००१ (राज.)
दूरभाष : ९३२६४६९५३८

रानी चेन्नम्मा

रानी चेन्नम्मा एक सशक्त, निर्भीक तथा कुशल शासिका थीं। उन्होंने दक्षिण भारत के केलाड़ी नामक राज्य पर पच्चीस वर्षों तक शासन किया। केलाड़ी राज्य कर्नाटक के मालनद क्षेत्र में स्थित था। इसके प्रथम शासक चौदप्पा नायक थे, जिन्होंने सन् १५०० में वहाँ के शासन का कार्यभार सँभाला था।

चौदप्पा नायक के बाद सन् १६४५ में राजा शिवप्पा नायक केलाड़ी के शासक बने। वे एक महान् शासक थे। उन्होंने अपने राज्य में अनेक प्रकार के सुधार किए। उनके बाद सन् १६६४ में उनका छोटा पुत्र सोमशेखर नायक राजा बना।

सोमशेखर नायक ने काफी उम्र बीत जाने तक भी विवाह नहीं किया। कई राजाओं के यहाँ से उसके पास प्रस्ताव आए और उसने कई सुंदर राजकुमारियों को देखा भी, परंतु उसे कोई भी पसंद नहीं आई।

एक दिन राजा सोमशेखर रामेश्वर का मेला देखने गए। वहाँ उन्होंने कोटपुरा के सिदप्पा शेट्टी की सुंदर पुत्री चेन्नम्मा को देखा। चेन्नम्मा की सुंदरता और उसके गुणों से वे अत्यधिक प्रभावित हुए। उन्होंने संकल्प किया कि यदि मैं विवाह करूँगा तो इसी लड़की से। दूसरे दिन सोमशेखर ने अपने महामंत्री को बुलवाकर उसे पूरी बात बताई।

राज-परंपरा की परवाह न करते हुए उन्होंने अपनी इच्छानुसार चेन्नम्मा से विवाह कर लिया। बिदनूर के एक भव्य राजमहल में राजकीय रीति-रिवाज के साथ उनका विवाह संपन्न हुआ।

कुशाग्र-बुद्धि रानी चेन्नम्मा थोड़े ही समय में राजनीतिक गतिविधियों से अच्छी तरह परिचित हो गईं। उन्होंने हथियार चलाने तथा संगीत में भी निपुणता हासिल कर ली।

एक बार दशहरा के अवसर पर जंबूखंड की प्रसिद्ध नर्तकी कलावती ने राजा तथा रानी के सामने अपना नृत्य-कौशल दिखाया। राजा सोमशेखर उसका नृत्य देखकर बहुत खुश हुए और उन्होंने उसे अपने यहाँ रख लिया।

कलावती के पिता ने राजा पर अपने जादू तथा जड़ी-बूटियों का प्रयोग करना शुरू कर दिया। नौबत यहाँ तक आ गई कि मंत्री तथा बड़े-बड़े अधिकारियों तक को राजा से सलाह-मशविरा करने के लिए नर्तकी के घर जाना पड़ता था।

राजा की इस स्थिति के कारण रानी चेन्नम्मा को बहुत दुःख हुआ। जो राजा कुछ दिन पहले रानी को अपनी जान से ज्यादा प्यार करता था, वह अब राजमहल तक से दूर रहने लगा।

रानी चेन्नम्मा ने साहस से काम लिया। उन्होंने केलाड़ी को इस विपत्ति काल से बचाने का संकल्प लिया।

अब रानी चेन्नम्मा के सामने राज्य को बचाए रखने का केवल एक ही रास्ता बचा कि वे स्वयं हथियार उठाएँ। रानी ने ऐसा ही किया। उन्होंने अपने पिता से सलाह-मशविरा किया और विश्वस्त सेनानायकों को अपने साथ करके स्वयं शासन की बागडोर सँभाल ली।

उसी समय बीजापुर के सुलतान को पता चल गया कि केलाड़ी राज्य का राजा बीमार चल रहा है और वह राजकार्य देखने की स्थिति में नहीं है। उसने केलाड़ी राज्य को हड़पने का मन बना लिया।

सुलतान की फौज केलाड़ी की ओर बढ़ती ही जा रही थी। यह देखकर रानी चिंतित हो उठीं। स्थिति की गंभीरता को देखते हुए उन्होंने अपनी प्रजा को संबोधित करते हुए कहा, ''हे कन्नड़ भूमि के नायको! आप लोग महान् योद्धा हैं। आज इस राज्य का भविष्य आपके हाथों में है। याद रखिए, विजय हमें हमारा राज्य देगी और मृत्यु हमें स्वर्ग प्रदान करेगी। हमारे सामने कोई तीसरा विकल्प नहीं है। यदि आप विजयी होते हैं तो आपको योग्यतानुसार इनाम मिलेगा।'' इस प्रकार रानी ने अपनी प्रजा और सैनिकों का हौसला बढ़ाया तथा राजकोष से सभी बहुमूल्य जेवरात उन्हें दे दिए।

जब शत्रु की सेना ने किले का द्वार तोड़कर राजमहल में प्रवेश किया तो पाया कि न तो वहाँ रानी हैं और न ही धन-दौलत। यह देखकर वे बहुत निराश हुए।

रानी चेन्नम्मा ने अपनी सूझ-बूझ और साहसपूर्ण प्रयासों से थोड़े ही दिनों में राज्य की स्थिति को पूर्ववत् बहाल कर लिया। उन्होंने अपने पति के हत्यारे कलावती के पिता तथा जन्नो पंत को गिरफ्तार करवा लिया और उन्हें मौत की सजा सुना दी। उसके बाद उन्होंने विपरीत परिस्थितियों में राज्य को हड़पने का प्रयत्न करनेवाले सभी लोगों को सजा दी और उन्हें राज्य से बाहर निकाल दिया। अब रानी कुशलतापूर्वक राज्य का

शासन चलाने लगीं। वे अपनी प्रजा के दु:ख-सुख का सदैव ध्यान रखती थीं। प्रजा भी उन्हें पहले से अधिक प्यार तथा सम्मान देने लगी।

मैसूर के राजा ने रानी के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। ऐसी परिस्थिति में रानी ने साहस और सूझ-बूझ से काम लिया। उन्होंने भदरप्पा नायक के नेतृत्व में एक विशाल सेना शत्रु से लड़ने के लिए भेज दी। ठीक उसी समय सोडे, सिरसी तथा बनवासी के सरदारों ने भी रानी के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी; परंतु रानी ने साहस का परिचय दिया और सभी को बड़ी सरलता से पराजित कर दिया।

रानी चेन्नम्मा ने बसप्पा नायक को गोद ले लिया था। उनके बाद बसप्पा नायक को ही केलाड़ी का शासक बनना था।

रानी चेन्नम्मा प्रतिदिन स्नान-ध्यान करने के बाद राजदरबार में जाती थीं और वहाँ दोपहर तक रहती थीं। वहाँ वे अपनी प्रजा के कष्टों को ध्यान से सुनती थीं तथा उनका उचित समाधान करती थीं। दोपहर के पूजा-पाठ से निवृत्त होकर वे एक घंटे तक गरीबों तथा साधु-संन्यासियों को दान दिया करती थीं।

रानी ने शिवाजी के पुत्र राजाराम को शरण दी। औरंगजेब को जब केलाड़ी राज्य में राजाराम के छिपे होने का पता चला तो उसने अपने पुत्र अजमथ आरा को एक बड़ी सेना लेकर केलाड़ी पर आक्रमण करने के लिए भेज दिया। लेकिन तब तक राजाराम को सुरक्षित जिंजी के किले में पहुँचा दिया गया था। उधर औरंगजेब ने रानी चेन्नम्मा के पास भेजे एक पत्र में लिखा था कि वे राजाराम को उसे सौंप दें, अन्यथा उन्हें मुगल सेना के आक्रमण का सामना करना पड़ेगा। रानी ने बुद्धिमत्ता का परिचय दिया और अपने मंत्रियों के साथ विचार-विमर्श करके औरंगजेब को जवाबी पत्र लिख दिया, जिसमें उन्होंने लिखा कि राजाराम इस राज्य में नहीं है। ऐसा सुनने में आया है कि वह इस राज्य से होकर गया है।

रानी चेन्नम्मा ने अपने शासनकाल में अनेक सुधार किए और पुर्तगाल तथा अरब देशों के साथ व्यापार को बढ़ाया। उन्होंने अपनी सेना को शक्तिशाली बनाने के लिए अरब देशों से अच्छी नस्ल के घोड़े भी मँगवाए। उन्होंने बासवपट्टन के पास स्थित हुलीकर को भी अपने राज्य में मिला लिया तथा वहाँ के खंडहर बन गए किले का पुनर्निर्माण करवाकर अपने दत्तक पुत्र की माँ के नाम पर उसका नाम 'चेन्नागिरि' रख दिया।

रानी चेन्नम्मा ने सन् १६७१ से लेकर १६९६ तक बड़ी कुशलतापूर्वक शासन किया। उनका संपूर्ण जीवन महान् आदर्शों से भरा हुआ था। अंतत: सावन के पवित्र मास में इस महान् तथा कुशल रानी ने अपने प्राण त्याग दिए। बिदनूर के कोप्पालु मठ में उनकी समाधि बनाई गई।

रानी चेन्नम्मा का नाम भारत तथा कर्नाटक के इतिहास के पन्नों में सदा के लिए स्वर्ण अक्षरों में अंकित है।

□

लाला लाजपतराय

पाँच नदियों की मिट्टी पंजाब ने बहादुरी और कुरबानी की एक नहीं, अनेक गाथाएँ पैदा की हैं। इसी भूमि पर जन्म लिया 'पंजाब केसरी' लाला लाजपतराय ने। इनका जन्म २८ जनवरी, १८६५ को पंजाब में फिरोजपुर जिले के जगराँव नामक एक छोटे से कस्बे में हुआ था। इनके पिता का नाम लाला राधाकिशन और माता का नाम गुलाब देवी था। ये मूलत: पंजाबी थे।

पाँच वर्ष की अवस्था में बालक लाजपतराय की प्राथमिक शिक्षा घर पर ही पिता की देख-रेख में शुरू हुई।

तेरह वर्ष की अवस्था में लाजपतराय का विवाह उनके दादाजी की इच्छा से हिसार के एक धनी वैश्य परिवार में हो गया।

लाहौर में पढ़ाई के दौरान ही लाजपतराय भी स्वामी दयानंद सरस्वती के संपर्क में आए। स्वामीजी केविचारों से प्रभावित होकर उन्होंने आर्य समाज की सदस्यता ग्रहण कर ली।

लाजपतराय वकालत की परीक्षा उत्तीर्ण कर ही चुके थे। अब उन्होंने हिसार में प्रैक्टिस शुरू कर दी। वकालत से उन्हें अच्छी-खासी आय हो जाती थी।

सन् १८८६ में हिसार विधानसभा के चुनाव में लाजपतरायजी ने भी प्रत्याशी पद के लिए आवेदन किया। जिस वार्ड से उन्होंने आवेदन किया था, वह क्षेत्र मुसलिम बहुल था। वहाँ से उनका निर्विरोध चुनाव भारी सफलता माना गया।

सन् १८८९ में कांग्रेस के बंबई अधिवेशन में भी लाजपतरायजी ने भाग लिया, परंतु इसके बाद होनेवाले तीन अधिवेशनों में उन्होंने भाग नहीं लिया।

सन् १९०५ में कांग्रेस का वार्षिक अधिवेशन बनारस में हुआ। लाजपतरायजी ने भी इस अधिवेशन में हिस्सा लिया। ठीक उसी समय प्रिंस ऑफ वेल्स भी भारत-यात्रा पर आए। कांग्रेस अधिवेशन के नरम विचारधारावाले कुछ नेताओं ने उनके स्वागत का प्रस्ताव रखा। अधिकांश लोगों को यह बात पसंद नहीं आई। लाजपतरायजी इससे पूर्णत: असहमत थे। श्री गोपालकृष्ण गोखले के समझाने पर उन्होंने प्रत्यक्ष विरोध तो नहीं किया, किंतु जिस दिन प्रस्ताव पेश किया जानेवाला था, उस दिन अधिवेशन में अनुपस्थित रहकर उन्होंने अपनी नाराजगी जता दी। अधिवेशन के अंतिम दिन जब उन्हें अपने विचार रखने के लिए पाँच मिनट का समय दिया गया तो उन्होंने भारतीयों को स्वावलंबी एवं स्वाभिमानी

बनाने की बात पर जोर दिया।

सन् १८५७ की क्रांति के पचास वर्ष पूरे हो रहे थे। सरकार को इस बात की चिंता थी कि कहीं वह क्रांति फिर से न दोहराई जाने लगे। इस आशंका से क्रांतिकारियों की धर-पकड़ तेज कर दी गई। कुछ समय बाद कमिश्नर ने लाजपतरायजी की गिरफ्तारी की घोषणा कर दी, लेकिन उसका कोई कारण नहीं बताया गया।

लाजपतरायजी को गिरफ्तार करके मांडले जेल में भेज दिया गया। जेल में उन्हें बाकी दुनिया से अलग-थलग करने का पूरा-पूरा प्रयास किया गया। उन्हें पत्र लिखने की अनुमति नहीं थी।

अमेरिका के हिंदुस्तानी संघ ने लालाजी के सम्मान में एक स्वागत समारोह का आयोजन किया। उस कार्यक्रम में अपने भाषण में उन्होंने कहा, ''मैं एक भारतीय हूँ। मुझे हर हाल में अपने देश की आजादी चाहिए। हम अपने देश से अंग्रेजों को भगाना चाहते हैं, हमेशा-हमेशा के लिए। अब हम भारत पर अंग्रेजों का शासन बिलकुल नहीं चाहते। हम स्वराज चाहते हैं—स्वराज।''

अमेरिका में ही सन् १९१५ में लालाजी ने होमरूल लीग की स्थापना की। इस संस्था के संचालन में उन्हें कई लोगों का सहयोग प्राप्त था। सन् १९१९ के अंत में वे अमेरिका से इंग्लैंड आ गए। उसके बाद वे २० फरवरी, १९२० को इंग्लैंड से स्वदेश लौट आए।

सन् १९२० में नागपुर में हुए कांग्रेस के अधिवेशन के बाद बाबू चितरंजन दास और लाजपतरायजी गांधीजी के साथ हो गए। अब पंजाब में असहयोग आंदोलन के संचालन का दायित्व लालाजी के कंधों पर आ गया।

लाला लाजपतराय महान् राजनीतिज्ञ होने के साथ-साथ एक समाज-सुधारक भी थे। उस समय समाज में अनेक कुरीतियाँ फैली हुई थीं। लालाजी ने उन कुरीतियों का विरोध किया। उन्होंने बाल विवाह को समाप्त कराने का प्रयास किया तथा विधवा विवाह का समर्थन किया।

लालाजी राष्ट्रीय शिक्षा को बढ़ावा देना चाहते थे। जिस तरह से उन्होंने स्वयं मेहनत और लगन से पढ़ाई की थी, उसी तरह वे अन्य देशवासियों को भी पढ़ाई के लिए प्रेरित करना चाहते थे। उन्होंने इस कमी को महसूस किया था कि राष्ट्रीय आंदोलनों में जो छात्र अपनी पढ़ाई-लिखाई छोड़कर जुट गए थे, उनकी शिक्षा अधर में लटक गई थी। सरकारी कॉलेजों के दरवाजे उनके लिए बंद हो चुके थे। देश में जगह-जगह नेशनल कॉलेजों की स्थापना की जा रही थी। उन्होंने लाहौर में इस कार्य को पूरा करने का बीड़ा उठाया। उनके द्वारा स्थापित नेशनल कॉलेजों में सामान्य अध्ययन के साथ-साथ नवयुवकों के राष्ट्रीय विचारों को प्रोत्साहन एवं दिशा भी दी जाती थी।

लाहौर में दयानंद एंग्लो-वैदिक कॉलेज, जिसकी स्थापना सन् १८८६ में की गई थी, से लाजपतरायजी आजीवन जुड़े रहे। इस कॉलेज के लोगों को उन्होंने तकनीकी शिक्षा देने हेतु कई प्रयास किए।

लाजपतरायजी तप, त्याग, वैराग्य और संन्यास के विरुद्ध थे। वे राष्ट्रीय शिक्षा के द्वारा इन प्रवृत्तियों को नष्ट करना चाहते थे। उनकी दृष्टि में व्यक्ति की संयमित जीवन-शैली ही संपूर्ण थी। उन्हें प्राचीन भाषाओं संस्कृत, अरबी, फारसी का अच्छा ज्ञान था। इनके महत्त्व को वे मानते भी थे। उनका मानना था कि अधिकाधिक भाषाओं का अध्ययन सबके लिए जरूरी है।

लालाजी का कहना था कि शिक्षा में संपूर्ण राष्ट्र के प्रति प्रेम जाग्रत् करने की व्यवस्था होनी चाहिए। प्रत्येक भारतीय बच्चे के मन में यह भाव उत्पन्न कर देना चाहिए कि जो भारत में पैदा हुआ है, वह भारतीय है। चाहे उसकी जाति या धर्म कुछ भी हो, भारत में जातीय संघर्ष के लिए कोई स्थान नहीं है।

सन् १९२८ के आरंभ में लाला लाजपतराय के सामने दो प्रमुख कार्य थे—पहला, 'साइमन कमीशन' के खिलाफ जनमत तैयार करना और दूसरा, नेहरू रिपोर्ट के पक्ष में प्रचार करना। इसके लिए उन्होंने कश्मीर का दौरा किया। वे दक्षिण भारत के कई शहरों में भी गए।

सन् १९२८ के अंत में लालाजी ने पंजाब के लायलपुर में एक राजनीतिक सम्मेलन बुलाया। इसमें 'साइमन कमीशन' के बहिष्कार पर विचार-विमर्श किया गया। वहाँ उन्होंने नेहरू रिपोर्ट का प्रचार-प्रसार किया, जिसे पंजाब के लोगों ने सर्व सम्मति से पास कर दिया।

साइमन कमीशन के विरोध में पूरे देश में आंदोलन किए जा रहे थे। इसी संदर्भ में लाहौर में एक जुलूस निकाला गया। इसका नेतृत्व लालाजी कर रहे थे। जुलूस लाहौर के मोरी गेट से होकर रेलवे स्टेशन की तरफ बढ़ रहा था। जुलूस में शामिल लोग 'साइमन वापस जाओ' के नारे लगा रहे थे। रेलवे स्टेशन के पास पुलिस ने जुलूस को रोकना चाहा, लेकिन जुलूस उनके रोकने से नहीं रुका। तभी पुलिस ने लाठीचार्ज कर दिया। लालाजी को विशेष रूप से निशाना बनाकर उनपर लाठियों से प्रहार किए गए। उनके सिर और शरीर के अन्य हिस्सों में गंभीर चोटें आईं। थोड़ी ही देर में वे बुरी तरह से घायल हो गए। जुलूस में शामिल लोगों ने उन्हें बचाने के लिए लाठियों की मार अपने ऊपर झेली। इसमें कई अन्य लोग भी घायल हुए। पंजाब का यह सिंह घायल होकर लहूलुहान हो चुका था, परंतु इसकी सिंह गर्जना फिर भी नहीं रुकी। लालाजी ने गरजते हुए कहा, ''मैं घोषणा करता हूँ कि मुझ पर जो लाठियाँ पड़ी हैं, वह भारत में अंग्रेजी साम्राज्य के ताबूत की अंतिम कीलें सिद्ध होंगी।''

उसके बाद से लालाजी का स्वास्थ्य दिन-प्रतिदिन बिगड़ता ही गया। इसी बीच वे ३ नवंबर, १९२८ को दिल्ली आए। दिल्ली में उनकी तबीयत ज्यादा खराब हो गई, इसलिए उन्हें दिल्ली से लाहौर ले जाया गया। डॉक्टरों ने उनका इलाज किया, मगर उनका सारा प्रयास और पूरे देशवासियों की दुआएँ धरी-की-धरी रह गईं। १७ नवंबर, १९२८ को जीवन के अंतिम क्षणों तक देश की सेवा में लगा रहनेवाला भारतमाता का यह वीर सपूत चिरनिद्रा में सो गया।

उम्र के इस पड़ाव पर

● कर्नल कौशल मिश्र

मन में है तिजोरी लम्हों की

जो लम्हे गुजरते जीवन के, वे होते जाते हैं सभी सपने।
हम जो भी सपने देखते हैं, वे सपने कब अपने होते हैं।
बीते लम्हों को फिर दोहराना, इस जीवन में तो असंभव है।
बस यादों में बीते लम्हों को, जी पाना ही शायद संभव है।
जीवन में सुख भरे लम्हे ही, बार-बार हमको सहलाते हैं।
जो लम्हे गुजरते जीवन के, वे होते जाते हैं सभी सपने।

बचपन में माँ के दुलार भरे, लम्हे कितना याद आते हैं।
माँ का आँचल जिद में थामे, हम रोते-रोते ही सो जाते हैं।
माँ की ममता याद आने पर, वे लम्हे हमें बहुत रुलाते हैं।
सफल हुए थे जब जीवन में, आशीष के पल याद आते हैं।
जो लम्हे गुजरते जीवन के, वे होते जाते हैं सभी सपने।

मुश्किलें जब से आसान हुईं, स्वयं पर गर्व महसूस किया।
अपनों ने प्रशंसा की बहुतेरी, मन ने सबको कबूल किया।
उन लम्हों की यादें आने पर, लम्हों को हमने याद किया।
लम्हे बीते तो दिन बीत गए, लगता है जैसे आज किया।
जो लम्हे गुजरते जीवन के, वे होते जाते हैं सभी सपने।

अब उम्र के इस पड़ाव पर, वे लम्हे ही तो अब अपने हैं।
वे ही हैं सहारा हमारे जीवन के, हम उन्हें याद कर जीते हैं।
मिलते जब भी पुराने मित्रों से, बस उन्हीं की चर्चा करते हैं।
मन में हैं तिजोरी लम्हों की, ये लम्हे ही हमारी धरोहर हैं।
जो लम्हे गुजरते जीवन के, वे होते जाते हैं सभी सपने।

उड़ने के लिए आसमान भी दो

जो चाहो तुम्हारा मान भी हो, अपने ऊपर अभिमान भी हो।
माँ की ममता और दुलार का, भरपूर तुम पर बरसात भी हो।
घर की सब बहन-बेटियों का, प्यार स्नेह और अपनत्व भी हो।
पत्नी के साहचर्य में रहने का, जीवन में तुम्हारा साथ भी हो।

सुपरिचित लेखक। दैनिक समाचार-पत्र और पत्रिकाओं में लेख और कविताएँ प्रकाशित। दूरदर्शन और आकाशवाणी पर कहानी, वार्त्ता एवं कविता प्रसारित। सेना शिक्षा कोर में ३४ वर्षों की सेवा।

परिवार फले-फूले हरदम, मनों में किसी के न कुंठाएँ हों।
जो चाहो तुम्हारा मान भी हो, अपने ऊपर अभिमान भी हो।

मन स्वच्छ साफ और निर्मल हो, अपराध बोध न जहन में हो।
जब देखो तुम पत्नी की ओर, नजरें न झुके सदा सर ऊँचा हो।
सबको सम्मान अधिकार मिले, बेटे-बेटी में न कोई अंतर हो।
शिक्षा की समान व्यवस्था हो, अभिव्यक्ति की पूर्ण स्वतंत्रता हो।
जो चाहो तुम्हारा मान भी हो, अपने ऊपर अभिमान भी हो।

उत्तरदायित्व से बचने के लिए, कोख में बेटी की न हत्या हो।
भ्रूण हत्या का अवसाद न हो, ग्लानि न हो पश्चात्ताप न हो।
निर्दोषों के जीवन हनन का, पल भर भी तुम्हे अहसास न हो।
तुम मरो नहीं पल-पल मन में, हीन भावना का आभास न हो।
जो चाहो तुम्हारा मान भी हो, अपने ऊपर अभिमान भी हो।

बेटी के पंख जब विकसित हों, फड़फड़ाने का साहस भी दो।
शिक्षित हो अवसर मिलने पर, उड़ने के लिए आसमान भी दो।
फिर देखो उसकी उड़ान को, उसे क्षितिज पार कर जाने दो।
तब जीवन तुम्हारा सार्थक होगा, आत्मा को भी प्रसन्न हो जाने दो।
जो चाहो तुम्हारा मान भी हो, अपने ऊपर अभिमान भी हो।

सा.अ.
४ भ ९ जवाहर नगर,
जयपुर-३०२००४ (राज.)
दूरभाष : ९५७१४०५२४२

लघुकथाएँ

• सुरेंद्र कुमार अरोड़ा

एहसान

"रूबी! कल जल्दी आ सकती है क्या?"

"दीदी! कितनी जल्दी?"

"यही कोई सुबह आठ बजे!"

"सर्दी में इतनी जल्दी?···आपको कहीं जाना है क्या? रोज तो आप दो-ढाई बजे निकलती हैं?"

"बातें मत बना। बस यह बता कल सुबह आठ बजे आ सकती है या नहीं आ सकती? नहीं आ सकती तो मैं कोई और इंतजाम करती हूँ। मुझे कल नौ बजे हर हाल में निकलना है। इसलिए आठ के बाद मत आना।"

"नाराज मत होइए दीदी। मैं आ जाऊँगी। रेशमा आंटी और सरला दीदी का काम बाद में निपटा दूँगी।"

"ठीक है! भूलियो मत।"

"दीदी! नहीं भुलूँगी। पर एक बात आपको भी बतानी पड़ेगी।"

"वह क्या?"

"यही कि आप ऐसे किस ऑफिस में जॉब करती हैं, जो दोपहर बाद दिन में तीन बजे शुरू होता है और देर रात तक चलता है। सब लोगों के ऑफिस तो दिन में ही अपना काम निपटा लेते हैं?"

"तू बहुत बोलती है। हर काम के अपने नियम होते हैं, जो वहाँ के काम के हिसाब से तय होते हैं।"

"दीदी, गुस्सा मत कीजिए। मैं तो इसलिए पूछ रही थी कि मेरी बड़ी बेटी ने इंटर के बाद कॉलेज ज्वॉइन किया है और वह पढ़ाई के साथ-साथ कुछ काम भी करना चाहती है। मुझे दिन भर खटते देखकर कहती है कि कॉलेज से आने के बाद कोई छोटी-मोटी जॉब कर ले तो मुझे भी दो पैसे का सहारा हो जाएगा। उसके बाप का तो आपको पता ही है, अपनी सारी कमाई या तो शराब में उड़ा देता है या फिर रात के अँधेरे में न जाने किन बेगैरत औरतों को दे आता है!"

नाजिमा की हिम्मत नहीं हुई कि तेज चाल से बरतन माँजते उसके हाथों को रोककर बताए कि मेरे काम का पता लेगी तो मुझे भी दीदी की जगह किसी बेगैरत का दर्जा देने में देर नहीं करेगी। उसने इतना ही कहा, "रूबी! क्यों किसी को बेगैरत या गैरत वाली कहकर अपनी जबान खराब करती है। क्या पता, उन औरतों के आदमियों के इसी तरह के करतबों ने उन्हें बेगैरत बनाया हो? तू चिंता मत कर, मैं अपने बॉस से तेरी बेटी के लिए किसी अच्छे काम की बात जरूर करूँगी। अगर वहाँ बात न भी बनी तो भी बहुत से दूसरे अधिकारी मुझे जानते हैं और वे सारे भी मेरी बात को टालते नहीं हैं ।"

रूबी ने अपने पल्लू से सर को सलीके से ढका और हसरत भरी निगाहों से उसकी ओर देखते हुए बोली, "दीदी! मेरी बेटी और मुझ पर यह एहसान जरूर कर दीजिए, जिंदगी भर दुआ दूँगी।"

नजिमा रूबी की मदद करके खुश तो थी, पर उसे लगा कि काश उसके संपर्कों की पहुँच उसका शरीर नहीं, उसकी अपनी वह काबिलीयत होती, जिसकी कदर उसके अपने शौहर ने नहीं की।

सुपरिचित लेखक। लघुकथा, कहानी, बाल-कथा, कविता, बाल-कविता, पत्र-लेखन, डायरी-लेखन एवं सामयिक देश की अनेक साहित्यिक पत्रिकाओं में निरंतर प्रकाशन। हिंदी-अकादमी (दिल्ली), दैनिक हिंदुस्तान (दिल्ली) से पुरस्कृत एवं अनेक पुरस्कारों से पुरस्कृत।

वैभव की वैभवी

रोज मर्रा की जिंदगी में अत्यंत सक्रिय विभा को अचानक घुटनों में दर्द की शिकायत रहने लगी और दर्द ने पैदल चलना भी मुश्किल कर दिया। आदतन शुरू में विभा ने इस पर कोई ध्यान नहीं दिया। बढ़ी हुई सर्दी में धूप के लिए जब घर की छत की ओर जाने वाली सीढ़ियाँ चढ़ना भी मुश्किल हो गया तो वैभवजी पत्नी पर झल्लाए, "विभा! कब तक

बढ़ती हुई उम्र को नकारती रहोगी, लगता है तुम्हारे घुटनों पर गठिया ने दस्तक दे दी है, डाक्टर को दिखाना जरूरी है।"

"जाने दीजिए, मुझे कुछ नहीं हुआ है। सिंकाई वगैरह करूँगी तो ठीक हो जाऊँगी। डॉक्टर के पास गई तो दो-चार हजार का बिल बना देगा।"

"दो का बिठाएँ या दस का, जाना तो पड़ेगा ही।" वैभवजी फिर बोले।

"बड़े आए डॉक्टर के पास ले जाने वाले। हर बार अपने ही अपने नुस्खों से ठीक हुई हूँ।"

"ठीक है, मत मानो मेरी बात, जब चारपाई से चिपक जाओगी, तब तो जाओगी न।" वैभवजी चिंतित से लगे।

विभा से उनकी झल्लाहट सहन नहीं हुई और अगले दिन उनके साथ हड्डिओं के डॉक्टर के सामने जा बैठी।

डॉक्टर ने मुआयना किया और बताया कि शरीर में विटामिन-डी की कमी की वजह से हड्डियाँ कमजोर हो गई हैं, घुटनों में शरीर का वजन सँभालने की ताकत कम हो रही है। इसलिए आपको न तो किचन में अधिक देर तक खड़े रहना है और न ही अधिक पैदल चलना है। ये कुछ दवाएँ और साथ में फिजियोथैरैपी का कोर्स करना होगा, तभी रोग पर अंकुश लगेगा। साथ ही हर दिन कुछ देर तक शरीर को धूप लगवाना भी जरूरी है।"

"डॉक्टर साहब, मैं तो रोज ही धूप में बैठती हूँ।" विभा बोली।

"वह तो ठीक है, पर धूप तो आपके कपड़ों को सेंकती है, शरीर को नहीं। विटामिन-डी तो तब मिलता है, जब धूप सीधे त्वचा को लगे।" डॉक्टर ने कहा।

"क्या मतलब, डॉक्टर साहब?" वैभवजी ने अनजान बनते हुए पूछा।

डॉक्टर साहब मुसकरा दिए और फिर बोले, "हरे पौधे अपना भोजन खुद बनाते हैं। ये तो आप जानते ही होंगे।"

"जी, यह तो सबको पता है।"

"अब यह बताइए कि वे अपना यह करतब कैसे कर पाते हैं?

"जी, इसके लिए उन्हें खाद-पानी के अलावा धूप में रहना भी जरूरी है।"

"और अगर धूप में रखे पौधों को किसी कपड़े से ढक दिया जाए तो क्या तब भी धूप उन पर अपना कार्य कर सकेगी?"

"ऐसा कैसे हो सकता है? धूप जब सीधे उनकी पत्तियों पर गिरेगी, तभी तो धूप का असर उन पर होगा और वे अपना भोजन बना पाएँगे।"

"बस यही सूत्र हमारी त्वचा के लिए भी सच है, वरना तो सिर्फ कपड़े, जो हमने पहन रखे हैं, वही गरम होकर रह जाएँगे। शरीर में विटामिन-डी तो बनेगा ही नहीं।" डॉक्टर साहब ने कहा।

सुनकर विभा शरमा गई।

डॉक्टर से विदा लेने के बाद वैभवजी बोले, "ठीक होना है तो डॉक्टर की सलाह तो माननी पड़ेगी।"

"तुम्हें तो किसी अंग्रेजन से ब्याह रचाना चाहिए था। वह सारा दिन बदन उघाड़े धूप से विटामिन-डी लेती रहती और तुम्हें मेरे लिए अस्पताल के चक्कर न लगाने पड़ते।" विभा ने रोष से कहा।

"गुस्सा क्यों होती हो? तुम्हारे रोग को ठीक करने के लिए मैं दुनिया के किसी भी अस्पताल के चक्कर तब तक लगा सकता हूँ, जब तक तुम पूरी तरह से स्वस्थ नहीं हो जातीं। मैं तो बस इतना चाहता हूँ, वैसे डॉक्टर की सलाह मान लोगी तो रोग जल्द ठीक हो जाएगा।"

"तुम्हारे हिसाब से तो मैं आदिवासिओं जैसे कपड़े पहनकर धूप में सिंकती रहूँ और तुम मुझे देखते रहो। लोक-लाज तो जैसे बीते जमाने की बातें हैं, यही न।"

"ठीक है, विभा रानीजी। जो आपको उचित लगे, वही कीजिए।" वैभवजी थोड़ा झल्लाने के बाद चुप हो गए।

अस्पताल से लौटकर वे अपने काम पर चले गए। अगले दिन विभा के घुटनों की सिंकाई के लिए उन्हें फिर से अस्पताल जाना था।

"जल्दी से तैयार हो जाओ। आज अस्पताल में जल्दी पहुँचकर सिंकाई करवा लेंगे, फिर मैं ऑफिस चला जाऊँगा।"

वह कह ही रहा था कि उसने पाया कि विभा ने स्वीमिंग सूट जैसा कुछ पहन रखा है और स्वयं को सूर्य के सामने ले जाने की तैयारी भी कर ली है। उसने आँखों को मसलते हुए पूछा, "यह क्या अजूबा है? किसी ने तुम्हें इस लिबास में देख लिया तो बवंडर आ जाएगा?"

"बवंडर आए या भूचाल, मेरे लिए लोग नहीं, मेरे लिए मेरा वैभव और उनकी कही गई बात मायने रखती है। अब आपकी विभा पहले धूप का असली सेवन करेगी और फिर जरूरत पड़ी तो अपने वैभवजी के साथ अस्पताल भी जाएगी।"

ढलती उम्र में भी विभा के गाल कश्मीरी सेव की तरह लाल हो उठे और वैभवजी का चेहरा गुलाब की तरह खिल उठा।

डी-१८४, श्याम पार्क एक्सटेंशन,
साहिबाबाद-२०१००५ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९९१११२७२७७

राम झरोखे बैठ के

शिक्षा 'गुरुकुल' से लेकर 'गृहकुल' तक

● गोपाल चतुर्वेदी

जैसा सबको ज्ञात है कि भारत में शिक्षा के केंद्र गुरुकुल होते थे। जातिगत आधार पर ब्राह्मण की भूमिका शिक्षक की थी। तब के राजकुल के होनहार युवराज यहीं शिक्षा ग्रहण करते थे। आज के विपरीत, न तब सर्वशिक्षा अभियान था, न सरकारी और निजी स्कूल। न महविद्यालय थे, न विश्वविद्यालय। ब्राह्मण गुरु अपने आश्रम में गुरुकुल संचालित करता और वहीं क्षत्रिय कुँवर पधारते। इस संदर्भ में महाभारत में वर्णित गुरु द्रोणाचार्य का आश्रम प्रसिद्ध है। कौरव-पांडवो भी अपनी शस्त्र-शिक्षा के लिए वहीं आए। जैसा स्पष्ट है कि राजकुमारों के ज्ञान का क्षेत्र न राजनीति-शास्त्र था, न दर्शन, वह केवल तब के अस्त्र-शस्त्र चलाने की विशेषज्ञता तक सीमित था। गुरु द्रोण को धनुर्विद्या में पांडवों के अर्जुन सबसे प्रतिभाशाली और अपने प्रिय शिष्य लगते। उनकी इच्छा और आकांक्षा थी कि अर्जुन भारत के सर्वश्रेष्ठ धनुर्धारी बनें। वह इसी दशा में प्रयत्नशील भी थे।

इसी बीच शृंगवेर के निषादराज के पुत्र युवराज एकलव्य को वह धनुर्विद्या का प्रशिक्षण देने से इनकार कर चुके थे। किसी निषाद को शिक्षा देना उनके लिए वर्जित था। एकलव्य स्वभाव से अवश्य हठी रहे होंगे। यों किसी भी विषय के ज्ञान की लगन भी बहुधा हठ का रूप ही ले लेती है। एकलव्य ने द्रोण के आश्रम के निकट ही जंगल में अपना आश्रय बनाया और गुरु द्रोण की माटी की मूरत रचकर, उसी की साधना से धनुर्विद्या के निरंतर अभ्यास में जुट गए।

हमें कभी-कभार आश्चर्य होता है। एकलव्य कैसे गुरु की प्रतिमा का ध्यान कर अपने क्षेत्र के इतने योग्य, कुशल और प्रतिभाशाली धनुर्धर हो गए, जबकि सरकार के गुरु और पुस्तकालय में पुस्तकों के भंडार के बावजूद आज के छात्र बी.ए., एम.ए. की डिग्री प्राप्त कर कहने को शिक्षित कहलाते हैं, पर अपने विषय के क्षेत्र में निरक्षर के निरक्षर ही रह जाते हैं। वर्तमान समय में निष्कर्ष यही निकलता है कि ज्ञान और डिग्री का कोई ताल्लुक नहीं है। कोई हिंदी या अंग्रेजी साहित्य में एम.ए. करे और तब भी दो-चार वाक्य सही लिखने तक में असमर्थ हो तो अचंभित नहीं होना चाहिए। तभी तो हम छात्रों को सिखाते हैं, "यारो! सब चलता है, बस परीक्षा में तनाव से बचो।" यों भी कौन सी नौकरी डिग्री से सुलभ या संभव है? वर्तमान सफलता का एक ही सूत्र 'जुगाड़' है। जिसे इस जुगाड़ में महारत है, कामयाबी उसके कदम चूमती है।

शायद महाभारत काल में जुगाड़ का पर्याय 'द्यूत-क्रीड़ा' था। कौन कहे, आमजन में यह जुगाड़ जैसी लोकप्रिय थी कि नहीं? हो सकता है कि शकुनि का शौक केवल राजा-महाराजाओं का व्यसन रहा हो? बहरहाल, बात एकलव्य की चल रही है। एक दिन गुरु द्रोण अपने शिष्यों को लेकर वन-भ्रमण को निकले। आज के समान उस वक्त भी समर्थ और समृद्ध कुत्ता पालते थे। जंगल-भ्रमण में गुरु के साथ उनके शिष्य और उनका पालतू श्वान भी था। कुत्ता दौड़ते-दौड़ते एकलव्य के आश्रम तक जा पहुँचा और स्वभावानुसार अजनबी व्यक्ति को देखकर उस पर भौंकने लगा। कुत्ते की अनचाही भौंक से एकलव्य की साधना में विघ्न पड़ा। उसने अपनी धनुर्विद्या का सार्थक प्रयोग करके अपने तूणीर के तीर से कुत्ते का मुँह ऐसा बंद कर दिया कि उसकी भौंक ही न निकल पाए।

महत्त्वपूर्ण तथ्य इस पूरे प्रकरण में यह रहा कि कुत्ते के शरीर को और कहीं रत्ती भर भी हानि न हुई। जब गुरु द्रोण ने मुँह-सिले कुत्ते को देखा तो वह भी तीरंदाजी की इस अद्‌भुत प्रतिभा से चकित रह गए। उनके अनुभव में अब तक केवल अर्जुन ही ऐसा धनुर्विद्या का अचूक विशेषज्ञ था कि उसका निशाना कभी न चूके। प्रशिक्षण के दौरान एक बार उन्होंने पेड़ पर बैठी चिड़िया की आँख का लक्ष्य-भेद करने का निर्देश अर्जुन को दिया और उससे जानना चाहा कि 'शिष्य, तुम्हें क्या-क्या दिख रहा है?' अर्जुन का ध्यान इतना एकाकी था कि उसे न वृक्ष दिखा, न डाल, न पात, उसकी दृष्टि उस समय केवल चिड़िया की आँख के लक्ष्य पर केंद्रित थी। इस एकाग्र ध्यान से जब उसने अपने धनुष से तीर चलाया तो चिड़िया का आँख का लक्ष्य कैसे बचता? एकाग्र मन से ध्यान और लगन-परिश्रम से लक्ष्य की प्राप्ति ही सफलता का इकलौता गुर है।

गुरु द्रोण का विचार था कि यह गुण सिर्फ अर्जुन में विद्यमान है।

धनुर्विद्या का ऐसा सिद्ध कौशल और किसी के पास होना कैसे संभव है? जब उन्होंने एकलव्य को उस वन-आवास में देखा तो वह भौचक्के रह गए। उन्हें उसका चेहरा कुछ परिचित सा लगा। जब तक वह इस दिशा में कुछ और सोच पाते कि एकलव्य ने खुद ही जाटिल पहेली सुलझा दी, "गुरुदेव! मैं आपके आश्रम में गया था, आपका शिष्य बनने। आपने मेरा परिचय जानकर मुझे शिष्य बनाना अस्वीकार कर दिया। इससे अंतर में कुछ प्रारंभिक निराशा तो हुई, पर मेरे मन में आपके शिष्यत्व का दृढ़ निश्चय डिगा नहीं, मैंने आपकी माटी की मूर्ति बनाई और उसकी साधना से धनुर्विद्या का कौशल प्राप्त किया है।"

एकलव्य की बात सुनकर द्रोण प्रभावित तो हुए, किंतु उन्हें अपने प्रिय शिष्य अर्जुन का ध्यान आया। न एक म्यान में दो तलवारें रह सकती हैं, न भारत में दो सर्वोच्च धनुर्धारी। सर्वश्रेष्ठ तो एक ही होता है। यदि एकलव्य ऐसा ही समर्थ और कुशल रहा तो अर्जुन का क्या होगा? भले ही एकलव्य निषादों का राजकुँवर है, पर है तो राजकुमार ही। उसकी प्रतिभा भी भारत में कीर्ति कमाएगी। अर्जुन से उसकी तुलना होनी ही होनी। कुत्ते का मुँह तीरों से सिलकर उसने जो कमाल दिखाया है, वह अर्जुन की निशानेबाजी से कतई कमतर नहीं है। निशाना अर्जुन से बेहतर हो न हो, बराबर तो है ही।

एकलव्य की बात सुनकर द्रोण प्रभावित तो हुए, किंतु उन्हें अपने प्रिय शिष्य अर्जुन का ध्यान आया। न एक म्यान में दो तलवारें रह सकती हैं, न भारत में दो सर्वोच्च धनुर्धारी। सर्वश्रेष्ठ तो एक ही होता है। यदि एकलव्य ऐसा ही समर्थ और कुशल रहा तो अर्जुन का क्या होगा? भले ही एकलव्य निषादों का राजकुँवर है, पर है तो राजकुमार ही। उसकी प्रतिभा भी भारत में कीर्ति कमाएगी। अर्जुन से उसकी तुलना होनी ही होनी। कुत्ते का मुँह तीरों से सिलकर उसने जो कमाल दिखाया है, वह अर्जुन की निशानेबाजी से कतई कमतर नहीं है। निशाना अर्जुन से बेहतर हो न हो, बराबर तो है ही।

उस समय न फीस का दस्तूर था, न तकनीकी संस्थाओं के प्रवेश में डोनेशन का। गुरु के आश्रम में भोजन रहन-सहन फ्री, बस अंत में गुरु की इच्छानुसार गुरुदक्षिणा का चलन था। गुरुकुल, दान, दक्षिणा और राजा की भक्ति-श्रद्धा से चलते थे। एकलव्य भले ही गुरु की मूरत से सीखे हों, द्रोणाचार्य के शिष्य तो थे ही। वह स्वयं भी इससे इनकार नहीं करते थे। उलटे वह इसे अपना सच्चा सम्मान मानते। इन परिस्थितियों में जब द्रोण ने अपनी गुरु-दक्षिणा की इच्छा जताई तो एकलव्य सहर्ष उसके लिए प्रस्तुत हो गए—"आदेश करें गुरुदेव! क्या गुरुदक्षिणा स्वीकार होगी?" गुरु द्रोण के मन में तब न स्वर्ण मुद्राएँ थीं, न कुछ और इच्छा-आकांक्षा। उनके अंतर में केवल अपने प्रिय शिष्य अर्जुन का सर्वश्रेष्ठ धनुर्धारी बनने का भविष्य था। उन्होंने तत्काल एकलव्य के दाएँ हाथ के अँगूठे की गुरुदक्षिणा का निर्देश दे डाला। बिना अँगूठे एकलव्य धनुष-बाण कैसे चलाएगा? इससे अर्जुन के प्रतियोगी बनने का प्रश्न ही नहीं उठेगा, न वर्तमान में, न भविष्य में।

एकलव्य भी कोई सामान्य धातु का न बना था। जिसे मन से एक बार माना, बस उसके सच्चे शिष्य थे। एक आज्ञाकारी शिष्य के नाते, बिना किसी हीला-हवाला किए, तत्काल गुरु की आज्ञा का पालन करने, अपना दायाँ अँगूठा काटकर गुरुद्रोण को अर्पित कर दिया। कौन कहे, इतिहास में इस प्रकार के त्याग का यह पहला और अंतिम उदाहरण है? आज शिष्य से ऐसे संबंधों की कल्पना भी कठिन है, वह भी एक ठुकराए हुए शिष्य से।

यों गुरुकुल की शिक्षाप्रणाली आज केवल अपवाद में प्रचलित है। न एकलव्य ऐसे शिष्य हैं, न द्रोणाचार्य ऐसे गुरु। कल-युग की वर्तमान सदी, हर हाल में भौतिकता की सदी है। वर्तमान में 'गुरुडम' का क्षेत्र व्यापक है। प्रारंभिक शिक्षा के दौरान गुरु जाति प्रथा का प्रचार पालन कर, प्रजातंत्र की जड़ों में मट्ठा देने का अपना पुनीत कर्तव्य निभाते हैं, बशर्ते वह गाँवों में रहें।

सच्चाई यह है कि इन प्राध्यापकों में से अधिकतर अपने गृहक्षेत्र में स्थापित है, गाँवों के स्कूल में उनकी हाजरी बराबर लगती रहती है। क्या पता, वह वहाँ किसी जात-भाई को अपने स्थान पर, नाम-मात्र के भुगतान पर, नियमित हस्ताक्षर करने के लिए नियुक्त भी कर देते हों? वह स्वयं वेतन लेने के लिए माहवारी दुर्घटना के बतौर गाँव सिधारते हों? इन्हें स्कूल का 'भूत' कहना अधिक उचित होगा। विशेष अवसर पर वह हमेशा यहाँ मौजूद है। वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में ऐसे आदर्श गुरु सर्वोपरि हैं। वह विधायक के प्रिय हैं। चुनाव के दौरान थोक में गाँव और आसपास के वोट उनका जिम्मा जो ठहरा। स्कूल निरीक्षक के दफ्तर की हर खबर पर उनकी नजर है। निरीक्षण के दौरान स्कूल में उनकी उपस्थिति अनिवार्य हैं। संक्षेप में कहें तो ऐसे गुरु शिक्षा के अलावा हर क्षेत्र को कृतार्थ करते हैं। कुछ की परचून की दुकानें हैं, कुछ की चाय-समोसे की। उनका जीवन एक मुनाफे का धंधा है। वह अनुकरण के हेतु चलते-फिरते, जीते-जागते, इसके साक्षात् उदाहरण हैं। गुरु द्रोण ने तो केवल शिष्य एकलव्य का अँगूठा कटवाया, वह हर संपर्क में आने वाले की और खुद के कर्तव्य की जेब काटते हैं। यह तो केवल जूनियर गुरु है, इनके सीनियर अवतार भी हैं, जो महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों की शोभा बढ़ाते हैं।

सीनियर गुरुओं के कारनामों का किसी लेख के आकार में समाना कठिन है, फिर भी प्रयास करने में क्या हर्ज है? इन्होंने पारंपरिक पीठ-खुजाई को एक कमाऊ धंधा बना लिया है। एम.ए. आदि स्नातकोत्तर परीक्षाओं में लिखित के साथ एक मौखिक परीक्षा भी होती है। दोनों के अंक मिलाकर अंतिम परिणाम बनता है। उससे ही तय होता है कि कौन किस श्रेणी में उत्तीर्ण हुआ—प्रथम, द्वितीय या केवल पास? गुरु एक-दूसरे से सौदेबाजी करते हैं, "तू मुझे परीक्षक बना, मैं तुझे।" मौका मिला तो छात्रों से अपना हिस्सा ऐंठने से भी उन्हें ऐतराज नहीं है। यह उनका सौभाग्य है कि उनके 'योग्य' और 'प्रतिभाशाली' शिष्य, जो वसूली के बिचौलिए हैं, हर शहर में मौजूद हैं।

हमारे सीनियर गुरु जनता से ऐसे जुड़े हैं कि किराया फर्स्ट क्लास या ए.सी. फर्स्ट का लेकर वह सफर जनता के क्लास में ही करते हैं। कुछ का तो साहसिक आम नागरिक के समान बेटिकट यात्रा में विश्वास है। भारतीय रेल जनता की संपत्ति है तो उसका कैसा भाड़ा और है भी तो क्यों भाड़ा? उनसे कोई तर्क में जीते तो वह टिकट लें। वह तो उनके प्रिय और चुनिंदा शिष्यों को गुरु की इज्जत का ध्यान है। इसलिए वह गुरु के कार्यक्रम के अनुसार, चंदा करके निर्देशानुसार जनता क्लास का टिकट खरीद देते हैं। वह जानते हैं कि सिर्फ और सिर्फ यात्रा के मामले में गुरु आम आदमी के समकक्ष हैं, वरना ज्ञान, कमाई, संपत्ति, संपर्क, लेखन, जुगाड़ आदि में वह अपनी मिसाल खुद हैं। किसी भी सामान्य या साधारण व्यक्ति से उनकी तुलना कैसे संभव है? वह सभ्यता और संस्कृति की ऐसी रीढ़ की हड्डी हैं, जिस पर समाज का ढाँचा टिका है। बाकी सब तो कीड़े-भुनगे हैं? इनका कर्म केवल भिनभिनाना है। गुरु के अनुसार सबके अपने-अपने निर्धारित कर्म हैं। निरंतर अभ्यास उन्हें इनमें पारंगत बनाता है।

इसके अलावा सीनियर गुरुओं का काम प्रश्नपत्र बनाना, उनकी कुंजी लिखना और उसे छात्रों के हित में प्रकाशित करवाना है। कुंजी या गाइड लेखन इनके विपुल रचनात्मक साहित्यिक अवदान का द्योतक हैं। इसमें इनकी सानी नहीं है। यह वरिष्ठ गुरुओं की पारस्परिक प्रतियोगिता का विषय है। यह एक विवादित प्रश्न है कि किसका कुंजी-लेखन क्षेत्र में अधिक योगदान है? इसके सबसे योग्य निर्णायक छात्र हो सकते हैं जिनकी परीक्षा की सफलता, कुंजी-अध्ययन पर निर्भर है। वह भी इस बारे में एकमत नहीं हैं। कैसे हों? सीनियर गुरु ही उत्तर-पुस्तिकाओं के परीक्षक भी हैं। कई ऐसे जुगाड़ू हैं कि उनके पास अंक निर्धारण को सैकड़ों की संख्या में उत्तर-पुस्तिकाएँ आती हैं। सबको पढ़ना सीमित समय में संभव नहीं है। वह एकाध लाइन पढ़कर अपनी जन्मजात गुणात्मक प्रतिभा के आधार पर उत्तर-पुस्तिका को हाथ से तौलकर अंक देने में सक्षम हैं।

कहते हैं कि न्याय की देवी अंधी हैं। हमारे परीक्षक-गुरु दृष्टिधारी हैं। पर आँख को कहाँ-कहाँ कष्ट दें? कुंजी लेखन में या उत्तर-पुस्तिकाओं के परीक्षण में? आँखों के अत्यधिक प्रयोग से वह इनसाफ के अंधे देवी-देवता बनने से बचना चाहते हैं। ऐसे आँख के अन्य प्रयोग भी हैं। सुंदर शिष्याओं और पास-पड़ोस की अनवरत ताक-झाँक भी उनमें से एक है। वह सुंदरता के पारखी बिना बात के थोड़े ही कहलाते हैं। वह एक ओर प्रकृति-प्रेमी हैं, दूसरी ओर मानवीय सौंदर्य के। वह दोनों को सौंदर्य शास्त्र की निजी तराजू पर आँकने में समर्थ हैं। उनकी कई शिष्याएँ उनकी परख की साक्षी हैं। वह आपस में हास-परिहास भी करती हैं। "खूसट, सफल गुरु तो बन नहीं पाया, अब लव-गुरु बनने की ओर अग्रसर है।"

ऐसे लव-गुरु कभी-कभी त्रासदी के शिकार भी होते हैं। दुर्घटनावश, उनकी पिटाई से चतुर शिष्याएँ स्वयं तो बचती हैं, पर अकसर अपने प्रेमियों से करवा देती हैं। दीगर है कि इसके बाद हमदर्दी का प्रदर्शन भी उनका जिम्मा है।

हमारे एक मित्र हैं। वह दो कन्याओं के पिता हैं। उन्होंने 'आदर्श पति' के विषय का गहन और गंभीर अध्ययन-मनन किया है। उनकी मान्यता है कि हिंदी के पी-एच.डी. या शोधार्थी आदर्श पति की अर्हताओं की प्रतियोगिता की कसौटी पर पूर्णरूप से खरे उतरते हैं। उनके गाइड-गुरु अतीत की भाँति आश्रमवासी तो नहीं हैं और गुरुकुल के स्थान पर गृहकुल के स्वामी हैं। अपना आश्रम न बनवा पाना वर्तमान समय की विवशता है। आधुनिक शहरों में भूमि की सीमा है, उसके मूल्यों की नहीं। लिहाजा गुरु अपने भाइयों को बेदखल कर पैतृक आवास के फ्लैट में बसे हैं। इस गृहकुल में उनके छात्र शोध का तो कम, दैनिक जीवन के रोजमर्रा के कामों का अधिक प्रशिक्षण पाते हैं। शोध पूरी होते-होते वह झाड़ू-पोंछे से लेकर चौका-बरतन तक के विशेषज्ञ हो जाते हैं। हमने उनसे प्रश्न किया, "ऐसा क्या हिंदी के शोधार्थियों तक सीमित हैं?" उन्होंने हमारी जिज्ञासा शांत करने को उत्तर दिया, "दरअसल, हमें केवल अपने एक ही दामाद का अनुभव है वह हिंदी का पी-एच.डी. है। पढ़ाने में कैसा है इसका हमें पता नहीं है, पर बिटिया बताती है कि दर के कामों में उसका जवाब नहीं है। बस नाश्ता-खाना हमारी बेटी बनाती है, बाकी के कामों को वह दक्षता से निबटाता है। कौन कहे, दूसरे विषय के पी-एच.डी. भी इतने ही कुशल होते हों?"

हमें खुशी हुई। हमारे सीनियर गुरुओं ने 'गुरुकुल' की परंपरा निभाने का व्रत लिया हुआ है। उनके छात्र भी अधिक समय पुस्तकालय आदि में न बिताकर 'गृहकुल' में ही बिताते हैं। इतना ही नहीं, गुरुदक्षिणा का पावन कर्तव्य भी बाद के लिए न टालकर वह शोध के दौरान ही निभा लेते हैं। सबको 'काल करै सो आज कर, आज करें सो अब्ब,' जैसी कहावतें कंठस्थ हैं। वह इनका पालन करने के कर्तव्य के प्रति सजग हैं।

हमें शिक्षा की वर्तमान स्थिति से कुछ चिंता हुई। हमने अपने एक गुरु-मित्र से चिंता जताई। उन्होंने हमें आश्वस्त किया, "आप शोध के स्तर से न घबराएँ। हमारे साथियों का व्यवहार वर्तमान वक्त का दर्पण है, रग-रग में व्याप्त भ्रष्टाचार, हर क्षेत्र में कामचोरी, अक्षमता का दंश यह देश झेल ही नहीं रहा, उसके बावजूद प्रगति-पथ पर अग्रसर है तो शोध में कौन से सुर्खाब के पर लगे हैं? जीवन के दूसरे क्षेत्रों के स्तर पर आप ध्यान दें। वह सुधरा तो शिक्षा का अपने आप ही सुधर जाएगा।" उनके दिलासे के बावजूद हम फिक्रमंद हैं। इस संस्कारहीन शिक्षा से देश के बच्चे और युवाओं के भविष्य का क्या होगा? पर छात्र और शोधार्थी दोनों समवेत स्वर में हुंकारते हैं—

गुरु गोविंद दोऊ खड़े, काके लागूँ पाँय।
बलिहारी गुरु आपकी, डिग्री दियो दिलाय॥

साअ
९/५, राणा प्रताप मार्ग, लखनऊ-२२६००१
दूरभाष : ९४१५३४८४३८

ग़ज़लें

• पंडित सुरेश नीरव

सुपरिचित कवि। 'समय सापोक्ष हूँ मैं' (कविता-संग्रह), 'तथागत' (गीत-संग्रह), 'जहान है मुझमें' (ग़ज़ल-संग्रह) सहित अनेक रचनाएँ पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित। भारत के प्रधानमंत्री द्वारा 'मीडिया इंटरनेशनल अवार्ड', भारत के राष्ट्रपति द्वारा 'साहित्यश्री पुरस्कार' सहित अनेक पुरस्कारों से पुरस्कृत। दूरदर्शन, आकाशवाणी आदि टी.वी. कार्यक्रमों में कविता पाठ प्रसारित।

: एक :

जब भी दिल से तुझे याद करता हूँ मैं
खुशबुओं के नगर से गुजरता हूँ मैं।

गुनगुनी साँस की रेशमी आँच में
धूप सुबह की होकर उतरता हूँ मैं।

नर्म एहसास का खुशनुमा अक्स बन
लफ्ज के आईने में सँवरता हूँ मैं।

चंपई होंठ की पँखुरी पर तिरे
ओस की बूँद बनकर उभरता हूँ मैं।

आसमानों से जब भी गुजरता हूँ मैं
चंद सूरज हैं जिन पर ठहरता हूँ मैं।

एक मुट्ठी जमीं, एक मुट्ठी गगन
फिर भी इल्जाम दुनिया पे धरता हूँ मैं।

मेरे घर में बगावत के आसार हैं
घर में रक्खे खिलौनों से डरता हूँ मैं।

मेरे जीवन में अब कोई सावन नहीं
जेठ, वैशाख की माँग भरता हूँ मैं।

रूह बेचैन है, जिस्म पारे का है
एक मंजिल पे कम ही ठहरता हूँ मैं।

जख्म तो जख्म है, जख्म नासूर है
जिनको सुनसान लम्हों में भरता हूँ मैं।

मेरे अंदर भी इक ऐसा बाजार है
जिसमें 'नीरव' को नीलाम करता हूँ मैं।

: दो :

पास जब आया तिरे खुद अपना सानी हो गया
रेशमी लम्हों की मैं नाजुक कहानी हो गया।

वो मचलती खुशबुओं का एक दरिया था मगर
मैं भी रेगिस्तान की तपती जवानी हो गया।

जब से तेरे नाम को जोड़ा गया है मेरे साथ
ऐसी रुसवाई हुई मैं पानी-पानी हो गया।

क्या हुआ, कैसे हुआ, क्योंकर हुआ बतलाएँ क्या
वो तो मुंसिफ ही रहा, मैं हुक्मे सानी हो गया।

आनेवाली नस्ल लिक्खेगी मुझे तारीख में
मैं तो क्या मेरा मुकद्दर भी कहानी हो गया।

आँख की देहलीज पर सोया धुएँ को ओढ़कर
मैं सुलगते हादसों की राजधानी हो गया।

उसको काँधे पर सिफारिश के फरिश्ते लाए थे
मैं जमीनी ही रहा वो आसमानी हो गया।

हम तो जैसे आए थे बस्ती में वैसे ही रहे
वो मगर इस शहर का जिल्लेसुभानी हो गया।

मेरी नजरों में कोई मंजिल नहीं नीरव मगर
मैं जहाँ ठहरा वही पत्थर निशानी हो गया।

: तीन :

तुम्हारी याद के साये दिखाई देने लगते हैं
तो आँसू आँख को आकर बधाई देने लगते हैं।

लगें जब सूखने नगमे लिखे साँसों से जो हमने
तो अपने खून की, हम रौशनाई देने लगते हैं।

भटकती मेरी साँसें हैं जो बीहड़ में उदासी के
तो तन्हाई के जुमले भी सुनाई देने लगते हैं।

अदालत में खुदा की जब, कभी सुनवाई होती है
तो ज़ालिम खुद सुबूत ए पारसाई देने लगते हैं।

महाजन जब उदासी का वसूली करने आता है
ढुलकते आँसुओं की हम कमाई देने लगते हैं।

जरूरत पड़ने पर नीरव नहीं जो काम आते हैं
मुनाफिक जब मिलेंगे तो सफाई देने लगते हैं।

: चार :

याद बीते दिनों की जो आने लगी
बुझती शम्मा की लौ थरथराने लगी।

काली परछाइयाँ रक्स करने लगीं
मौत खुद मर्सिया आके गाने लगी।

ख्वाब आने से जिसके परेशान हैं
नींद आँखों में ये कैसी आने लगी।

धूप सूरज का घर छोड़कर जा रही
रात की धुंध साँसों पे छाने लगी।

काटने को नसें ब्लेड से हाथ की
जिंदगी खुद-ब-खुद कँपकँपाने लगी।

छोड़कर दुनिया जाने की आई घड़ी
जब सुना रूह ने, मुसकराने लगी।

कैसा 'नीरव' चमन का चलन ये हुआ
जिस्म फूलों का खुशबू जलाने लगी।

आई-२०४, गोविंदपुरम,
गाजियाबाद-२०१०१३ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९८१०२४३९६६

अनोखा मिलन

• वीरेंद्र बहादुर सिंह

३ दिनों से बंद फ्लैट की साफ-सफाई और हर चीज व्यवस्थित करके साक्षी लैपटॉप और मोबाइल फोन लेकर बैठी तो फोन में बिना देखे तमाम मैसेज पड़े थे। लैपटॉप में भी तमाम मेल थे। पिछले तीन दिनों में लैपटॉप की कौन कहे, मोबाइल तक देखने को नहीं मिला था। माँ को फोन भी वह तब करती थी, जब बिस्तर पर सोने के लिए लेटती थी। माँ से बातें करते-करते वह सो जाती तो माँ को ही फोन बंद करना पड़ता।

पहले उस ने लैपटॉप पर मेल पढ़ने शुरू किए। वह एक-एक मैसेज पढ़ने लगी। "हाय, क्या कर रही हो? आज आप ऑनलाइन होने में देर क्यों कर रही हैं?"

"अरे कहाँ हैं आप? कल भी पूरा दिन इंतजार करता रहा, पर आप का कोई जवाब ही नहीं आया?"

"अब चिंता हो रही है। सब ठीकठाक तो है न?"

"मानता हूँ, काम में बिजी हो, पर एक मैसेज तो कर ही सकती हो।" सारे मैसेज एक ही व्यक्ति के थे।

मैसेज पढ़कर हलकी सी मुसकान आ गई सरिता के चेहरे पर। उसे यह जान कर अच्छा लगा कि कोई तो है, जो उसकी राह देखता है, उस की चिंता करता है। उस ने मैसेज टाइप करना शुरू किया।

"मैं अपने इस संबंध को नाम देना चाहती हूँ। आखिर हम कब तक बिना नाम के संबंध में बँधे रहेंगे। आप का तो पता नहीं, पर मैं तो अब संबंध की डोर में बँध गई हूँ। यही सवाल मैंने आप से पहले भी किया था? पर न जाने क्यों आप इस सवाल का जवाब टालते रहे। जवाब देने की कौन कहे, आप बात ही करना बंद कर देते हो। आखिर क्यों?

"एक बात आप अच्छी तरह जान लीजिए। बिना किसी नाम का दिशाहीन संबंध मुझे पसंद नहीं है। हमेशा दुविधा में रहना अच्छा नहीं लगता। पिछले तीन दिनों से आपके संदेश की राह देख रही हूँ। गुस्सा तो बहुत आता है, पर आप पर गुस्सा करने का हक है भी या नहीं, यह मुझे पता नहीं। आखिर मैं आपके किसी काम की या आप मेरे किस काम के?"

सुपरिचित लेखक। इलाहाबाद विश्वविद्यालय से ग्रेजुएशन। मित्र प्रकाशन से प्रकाशित होने वाली पत्रिका 'मनोहर कहानियाँ' के संपादकीय विभाग से जुड़ने के बाद स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति ली। वर्तमान में स्वतंत्र लेखन।

आपके साथ भी मुझे मर्यादा तय करनी है। है कोई मर्यादा? आप को पता होना चाहिए, अब मैं दुविधा में नहीं रहना चाहती। मैं आप को किसी संबंध में बाँधने के लिए जबरदस्ती मजबूर नहीं कर रही हूँ। पर अगर संबंध जैसा कुछ है तो उसे एक नाम तो देना ही पड़ेगा। खूब सोच-विचारकर बताइएगा।

"मेरे लिए आप का जवाब महत्त्वपूर्ण है। मैं आप की कौन हूँ? इतनी निकटता के बाद भी यह पूछना पड़ रहा है, जो मुझे बहुत खटक रहा है। आप के जवाब के इंतजार में सरिता।"

सरिता काफी देर तक लैपटॉप पर नजरें गड़ाए रही। उनके बीच पहली बार ऐसा नहीं हो रहा था। इसके पहले भी सरिता ने कुछ इसी तरह की या इससे कुछ अलग तरह की बात कही थी। पर हर बार किसी-न-किसी बहाने बात टल जाती थी। देखा जाए तो दोनों के बीच कोई खास संबंध नहीं था। दोनों कभी मिले भी नहीं थे। एक-दूसरे से न कोई वादा किया थे, न कोई वचन दिया था।

बस उनके बीच बातों का ही व्यवहार था। कभी खत्म न हो। ऐसी बातें। उसकी बातें सरिता को बहुत अच्छी लगती थीं। दोनों दिनभर एक-दूसरे को मेल या चैटिंग करते रहते। बीच-बीच में अपना काम करके फिर चैटिंग पर लग जाते। समय-समय पर मेल भी करते।

दोनों की जान-पहचान अनायास ही हुई थी। मेल आईडी टाइप करने में हुई एक अक्षर की अदला-बदली की तरह से। ध्यान नहीं दिया और मेल सेंड हो गया। उसके रिप्लाइ में आया। सॉरी, सामने से फिर जवाब, करते-करते दोनों को एक-दूसरे का जवाब देने की आदत सी पड़ गई।

जल्दी ही उनकी बातें एक-दूसरे की जरूरत बन गईं। दोनों का परिचय हुए तीन महीने हो चुके थे, पर ऐसा लगता था, जैसे वे न जाने कब से परिचित हैं, दोनों में गहरा लगाव हो गया था, उनका स्वभाव भी अलग था और व्यवसाय भी, फिर भी दोनों नजदीक आ गए थे।

वह दिल्ली यूनिवर्सिटी के एक कॉलेज में हिंदी का प्रोफेसर था। साहित्य का भंडार था उस के पास। कभी वह खुद की लिखी कोई गजल या शायरी सुनाता तो कभी अपनी यूनिवर्सिटी की मजाकिया बातें कहकर हँसाता। सरिता उसकी छोटी-से-छोटी बात ध्यान से सुनती और पढ़ती। उसके साथ के क्षणों में, उसकी बातों में आसपास का सब बिसारकर खो सी जाती।

कभी-कभी सरिता का भी मन दिल की बात कहने को होता। पर पता नहीं किस डर की वजह से वह कुछ कह नहीं पाती थी। कभी वह कुछ पूछता भी तो वह हँसकर उड़ा देती या फिर बात का रुख ही बदल देती।

पर जब वह तीन दिनों के लिए कंपनी टूर पर मुंबई गई तो मन जैसे अपनी बात कहने को विकल हो उठा। आज दिल की बात कह ही देनी है, यह निश्चय करके वह दाहिने कान के पीछे निकल आई लट को अंगुलियों में लेकर डेस्क पर रखे लैपटॉप की स्क्रीन में खो गई। जैसे वह सामने बैठा है और वह उसकी आँखों में आँखें डालकर अपनी बात कह रही है। वह मैसेज टाइप करने लगी।

"हाय तीन दिनों के लिए कंपनी टूर पर मुंबई गई थी। जाने का प्लान अचानक बना, इसलिए तुम्हें बता नहीं सकी, बहुत परेशान किया न तुम्हें? पर सच कहूँ, तीन दिनों तक तुम से दूर रहकर मेरे मन में हिम्मत आई कि मैं अपने मन की बात तुम से खुलकर कह सकूँ। क्या करूँ, थोड़ी डरपोक हूँ न? आज तुम्हें मैं अपने एक दूसरे मित्र से मिलवाती हूँ। अभी नई-नई मित्रता हुई है जानते हो किस से? जी हाँ, दरिया से··हाँ, दरिया, समुद्र, सागर, नजर में न भरा जा सके, इतना विशाल, चाहे जितना देखो, कभी मन न भरे। इतना आकर्षक कि मन करता है हमेशा देखते रहो। मेरे लिए यह सागर हमेशा एक रहस्य ही रहा है। कहीं कलकल बहता है तो कहीं एकदम शांत तो कहीं एकदम तूफानी।

"समुद्र मुझे बहुत प्यारा लगता है। घंटों उस के सान्निध्य में बैठी रहती हूँ, फिर भी थकान नहीं लगती। पर मेरा यह प्यार दूर-दूर से है। दूर से ही बैठकर उसकी लहरों को उछलते देखना, उसकी आवाज को मन में भर लेना। इस तरह देखा जाए तो यह सागर मेरा 'लॉन्ग डिस्टेंस फ्रेंड' कहा जा सकता है, एकदम तुम्हारी ही तरह। हम मन भर कर बात करते हैं, कभी-कभी एक-दूसरे से गुस्सा भी होते हैं, पर जब नजदीकी की बात आती है तो मैं डर जाती हूँ। दूर से ही नमस्कार करने लगती हूँ।

"पर इस सबको कहीं एक किनारे रख दो। मैं भले ही सागर के करीब न जाऊँ, दूर से ही उसे देखती रहूँ, पर वह किसी-न-किसी युक्ति से मुझे हैरान करने आ ही जाता है। दूर रहते हुए भी उसकी हलकी सी हवा का झोंका मेरे शरीर में समा जाता है। मजाल है कि मैं उसके स्पर्श से खुद को बचा पाऊँ। एकदम तुम्हारी ही तरह वह भी जिद्दी है।

उसकी इस शरारत से कल मेरे मन में एक नटखट विचार आया। मन में आया कि क्यों न हिम्मत करके एक कदम उस की ओर बढ़ाऊँ। चप्पल उतारकर उस की ओर बढ़ी। एकदम किनारे रहकर पैर पानी में छू जाए, इतना ही बढ़ी थी। वह पहले से भी ज्यादा पागल बनकर मेरी ओर बढ़ा और मुझे पूरी तरह भिगो दिया। जैसे कह रहा हो, बस मैं तुम्हारी पहल की ही राह देख रहा था, बाकी मैं तो तुम्हें कब से भिगोने को तैयार था।

"मैं उसके इस अथाह प्रेम में डूबी वहीं-की-वहीं खड़ी रह गई। मैंने तो केवल पैर धोने के लिए पानी माँगा था, उसने मुझे पूरी-की-पूरी अपने में समा लिया था। कहीं सागर तुम्हारा रूप लेकर तो नहीं आया था? शायद नाम की वजह से दोनों का स्वभाव भी एक जैसा हो। वह समुद्र और तुम सागर। दोनों का स्थान मेरे मन में एक ही है। सच कहूँ, अगर मैं एक कदम आगे बढ़ाऊँ तो क्या तुम मुझे खुद में समा लोगे?—तुम्हारी बनने को आतुर सरिता।"

क्या जवाब आता है, यह जानने के लिए सरिता का दिल जोर-जोर से धड़कने लगा था। दिल में जो आया, वह कह दिया। अब क्या होगा, यह देखने के लिए वह एकटक स्क्रीन को ताकती रही।

सागर में उछाल मार रहे समुद्र की एक फोटो भेजी। मतलब सरिता की पहल को उसने स्वीकार कर लिया था। प्रकृति के नियम के अनुसार फिर एक सरिता बहती हुई अपने सागर में मिलने का अनोखा मिलन रचने जा रही थी।

साअ

जेड-४३६ ए, सेक्टर-१२,
नोएडा-२०१३०१ (गौतमबुद्ध नगर)
दूरभाष : ८३६८६८१३३६

इस अंक के चित्रकार

रोहित प्रसाद पथिक

कई प्रतिष्ठित साहित्यिक पत्र-पत्रिकाओं में कविताएँ, कहानियाँ, पुस्तक समीक्षा व रेखाचित्रों का निरंतर प्रकाशन। एक काव्य संग्रह 'ईश्वर को मरते देखा है' हाल ही में प्रकाशित। संप्रति 'अनुगूँज' अर्धवार्षिक साहित्य पत्रिका के संपादक।

संपर्क : के.एस. रोड, रेल पार डीपू पाडा
क्वार्टर नंबर : (७४१/सी),
आसनसोल-७१३३०२ (पश्चिम बंगाल)
दूरभाष : ८१०१३०३४३४

प्रभात नए प्रकाशन

- **परिवर्तनशील विश्व में भारत की रणनीति** एस. जयशंकर 600.00
- **जोखिम भरे हस्तक्षेप** हरदीप सिंह पुरी 500.00
- **पदचिह्न बुलाते हैं** देवेंद्र स्वरूप 600.00
- **नेपाल का संवैधानिक विकास** डॉ. राकेश कुमार मीणा 600.00
- **मेरा रंग दे बसंती चोला** मलविंदर जीत सिंह वड़ैच 600.00
- **कांग्रेस मुक्त भारत** अमित बगड़िया 600.00
- **नेहरू की 125 ऐतिहासिक गलतियाँ** रजनीकांत पुराणिक 900.00
- **स्वामी विवेकानंद का युवा जागरण** किशोर मकवाणा 600.00
- **गांधी और इस्लाम** अब्दुलनबी अलशोला 500.00
- **POK भारत में वापस** अमित बगड़िया 400.00
- **हिंदू धर्म की धरोहर : भारतीय संस्कृति** संजय राय 'शेरपुरिया' 500.00
- **आधी रात कोई दस्तक दे रहा है** के.आर. मल्कानी 300.00
- **भारतीय संविधान : अनकही कहानी** रामबहादुर राय 1100.00
- **नक्सलियों के बीच मेरे बीते दिनों की रोमांचक गाथा** अल्पा शाह 700.00
- **खालिस्तान षड्यंत्र की इनसाइड स्टोरी** जी.बी.एस. सिद्धू 500.00
- **वैज्ञानिक जगदीश चंद्र बसु के महान् विचार** सावन कुमार बाग/मेहेर वान 300.00
- **आपका सबसे अच्छा दिन आज ही है** अनुपम खेर 500.00
- **माइंड मास्टर** विश्वनाथन आनंद, सूज़न नैनन 700.00
- **लोकतंत्र, राजनीति और धर्म** ए. सूर्य प्रकाश 400.00
- **मोपला कांड** विनायक दामोदर सावरकर 250.00
- **नेपोलियन हिल के महान् भाषण** नेपोलियन हिल 250.00
- **ध्येय यात्रा (2 खंड)** सं. मनोजकांत/प्रदीप राव/उमेंद्र दत्त 999.00
- **चलते-चलते** सुरेश चव्हाणके 600.00
- **मनु की दृष्टि से हिंदू समाज** चित्रा अवस्थी 300.00
- **भारत-चीन रिश्ते : ड्रैगन ने हाथी को क्यों डसा** रंजीत कुमार 500.00
- **नेहरू की 127 ऐतिहासिक गलतियाँ** रजनीकांत पुराणिक 750.00
- **काले पानी की कलंक कथा** एस.के. नारंग 300.00
- **विनाशपर्व** प्रशांत पोल 250.00
- **अग्निपथ से न्यायपथ** देवकी नंदन गौतम 500.00

- **राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 भारतीयता का पुनरुत्थान** सं. अतुल कोठारी 400.00
- **नए भारत की नींव : राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020** अवनीश कुमार सिंह 450.00
- **आचार्य चतुरसेन की लोकप्रिय कहानियाँ** आचार्य चतुरसेन 400.00
- **जैनेंद्र कुमार की लोकप्रिय कहानियाँ** जैनेंद्र कुमार 400.00
- **पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र' की लोकप्रिय कहानियाँ** पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र' 400.00
- **सुभद्रा कुमारी चौहान की लोकप्रिय कहानियाँ** सुभद्रा कुमारी चौहान 400.00
- **कमलेश्वर की लोकप्रिय कहानियाँ** कमलेश्वर 400.00
- **मन्नू भंडारी की लोकप्रिय कहानियाँ** मन्नू भंडारी 400.00
- **शिवप्रसाद सिंह की लोकप्रिय कहानियाँ** शिवप्रसाद सिंह 400.00
- **शैलेश मटियानी की लोकप्रिय कहानियाँ** शैलेश मटियानी 400.00
- **रूपसिंह चंदेल की लोकप्रिय कहानियाँ** रूपसिंह चंदेल 400.00
- **कोंकणी की लोकप्रिय कहानियाँ** सं. ज्योती कुंकलकार 400.00
- **उर्दू की लोकप्रिय कहानियाँ** सं. शैख अकील अहमद 400.00
- **असमीया की लोकप्रिय कहानियाँ** सं. महेंद्र नाथ दुबे 400.00
- **बांग्ला की लोकप्रिय कहानियाँ** सं. महेंद्र नाथ दुबे 400.00
- **सिंधी की लोकप्रिय कहानियाँ** सं. रविप्रकाश टेकचंदानी 400.00
- **शेरलॉक होम्स की डिटेक्टिव स्टोरीज** सर आर्थर कॉनन डायल 400.00
- **शेरलॉक होम्स की बेस्टसेलर कहानियाँ** सर आर्थर कॉनन डायल 400.00
- **ब्योमकेश बक्शी की रोमांचकारी कहानियाँ** सारदेंदु बंद्योपाध्याय 400.00
- **ब्योमकेश बक्शी की जासूसी कहानियाँ** सारदेंदु बंद्योपाध्याय 500.00
- **लोकप्रिय जासूसी कहानियाँ** सं. भविष्य कुमार सिन्हा 400.00
- **21 अनमोल कहानियाँ** प्रेमचंद 400.00
- **31 अमर कहानियाँ** प्रेमचंद 400.00
- **एक रोमांचक कहानी कोरोनाकाल की** अजय मोहन जैन 200.00
- **जादुई बाल कहानियाँ** सत्यजित रे 300.00
- **काले पानी की कलंक कथा** एस.के. नारंग 300.00
- **आजादी @ 75 : क्रांतिकारियों की शौर्यगाथा** विवेक मिश्र 500.00
- **ऑपरेशन योद्धा** सुशांत सैनी 500.00
- **पुलवामा अटैक** विकास त्रिवेदी/स्मिता अग्रवाल 350.00
- **भारत-चीन LAC टकराव** मुकेश कौशिक 300.00
- **भारत के जाँबाज** लेफ्टिनेंट जनरल सतीश दुआ (सेवानिवृत्त) 500.00
- **ऑपरेशन खुकरी** मेजर जनरल राजपाल पूनिया/दामिनी पूनिया 600.00
- **कारगिल गर्ल** फ्लाइट लेफ्टिनेंट गुंजन सक्सेना 500.00
- **कुछ अनसुनी फौजी कहानियाँ** रचना बिष्ट रावत 400.00
- **कारगिल : एक यात्री की जुबानी** ऋषि राज 300.00
- **भारत-इजराइल संबंध** परशुराम गुप्त 400.00
- **कलियुग सर्वश्रेष्ठ है** महायोगी स्वामी बुद्ध पुरी 250.00
- **त्रिशूलधारी** सत्यम् 500.00

• मूर्ति-भंजन	क्षमा कौल	500.00
• कोविड-19, जिंदगी-20	मृदुला सिन्हा	400.00
• अथ श्रीमहाभारत कथा	शुभांगी भडभडे	500.00
• अरण्य आदिम	तरुणकांति मिश्र	400.00
• हसनपुर के राम	डॉ. परशुराम गुप्त	400.00
• फिर जीते श्रीराम	बलबीरसिंह 'करुण'	350.00
• लॉकडाउन की रिपोर्टर	इंदीवर	500.00
• लव इन लखनऊ	पार्थ सारथी सेन शर्मा	250.00
• वेदांत व जीवन प्रबंधन	विक्रांत सिंह तोमर	250.00
• S.I.P. के चमत्कार से Financial Freedom कैसे पाएँ?	महेश चंद्र कौशिक	300.00
• धरती-पुत्र भैरों सिंह शेखावत	बहादुर सिंह राठौड़	300.00
• राष्ट्रनायक नरेंद्र मोदी : राष्ट्रवाद से समाजवाद की ओर	उषा विद्यार्थी	400.00
• महापराक्रमी महाराणा प्रताप	आचार्य मायाराम 'पतंग'	300.00
• बैड मैन : एक आत्मकथा	गुलशन ग्रोवर/रोशमिला भट्टाचार्या	450.00
• पाप और प्रायश्चित	संजय भारती	250.00
• मैं शबरी हूँ राम की	उर्वशी अग्रवाल 'उर्वी'	300.00
• आधुनिक भारत के दिवंगत गणितज्ञ	वीरेंद्र कुमार	750.00
• सदियों का सयानापन	सं. संजीव शाह	300.00
• जीवन की भेंट	सं. संजीव शाह	350.00
• बिहार के 25 महानायक	अशोक कुमार सिन्हा	400.00
• म्यूचुअल फंड में Investment द्वारा मुनाफा कैसे कमाएँ	डॉ. योगेश शर्मा	300.00
• अभिशप्त	डॉ. किसलय पांडेय	250.00
• स्माइल	संदीप कुमार यादव	250.00
• जेम्स वाट	गोपीकृष्ण कुँवर	250.00
• रामायण से स्टार्टअप सूत्र	प्राची गर्ग	250.00
• पक्षद्रोह	प्रदीप पांडेय	250.00
• रवींद्र गीता	रवींद्र जैन	200.00
• कोविड रामायण	माधव जोशी	750.00
• चाणक्यमेंट	चद्रेंश मकवाणा	400.00
• चाणक्य से सीखें सफलता के सीक्रेट्स	ए.के. गांधी	250.00
• क्लासरूम में चाणक्य	महेश दत्त शर्मा	300.00
• कैलास-मानसरोवर	राजीव गुप्ता	500.00
• अर्थात् राष्ट्रवाद	नीरजा माधव	400.00
• फिर से जिंदगी	धीरा खंडेलवाल	200.00

• रहिमन पानी राखिए	मृदुला सिन्हा	400.00
• प्रियतमा	फनी महांति	200.00
• सबके राम	डॉ. प्रवेश कुमार/राजीव गुप्ता	300.00
• महाभारत रिसता है	डॉ. सत्यभामा	300.00
• शेयर Investment हैंडबुक	सी.ए. विक्रम नरसरिया	400.00
• शेयर मार्केट में रु. 10,000 की इन्वेस्टमेंट से रु. 100 करोड़ कैसे कमाएँ	श्याम सुंदर गोयल	250.00
• इन्वेस्टोनॉमी : अमीर बनने की स्टॉक मार्केट गाइड	प्रांजल कामरा	300.00
• ऑप्शन ट्रेडिंग से पैसों का पेड़ कैसे लगाएँ	महेश चंद्र कौशिक	250.00
• लिमिटलेस	जिम क्विक	500.00
• इकीगाई	राज गोस्वामी	400.00
• नौकरी नहीं, Business आइडिया ढूँढ़ो	एन. रघुरामन	200.00
• बिजनेस में Success की चाबी है Technology	एन. रघुरामन	200.00
• स्टार्टअप हो तो ऐसा हो	एन. रघुरामन	200.00
• गुड वाइब्स, गुड लाइफ	वेक्स किंग	600.00
• एलन मस्क के सक्सेस सीक्रेट्स	रेंडी किर्क	400.00
• बिल गेट्स के मैनेजमेंट सूत्र	प्रदीप ठाकुर	250.00
• वॉरेन बफे के इन्वेस्टमेंट लेसंस	प्रदीप ठाकुर	250.00
• 10 महान् व्यक्तियों के 100 महान् विचार	स्वाति गौतम	350.00
• 25 टॉप Motivators के Inspiring विचार	स्वाति गौतम	600.00
• व्यक्तित्व का संपूर्ण विकास	स्वामी विवेकानंद	300.00
• पर्यावरण बचाने के लिए 31 अच्छी-अच्छी आदतें	रोहित मेहरा, IRS	250.00
• एक IAS Aspirant की रोमांचक सक्सेस स्टोरी	पीयूष रोहनकर	300.00
• द पावर ऑफ योर सब्कॉन्शस माइंड	जोसेफ मर्फी	250.00
• द पावर ऑफ पॉजिटिव थिंकिंग	नार्मन विंसेंट पील	350.00
• सफल और अमीर बनने के 16 सीक्रेट्स	नेपोलियन हिल	250.00
• क्या आप अमीर बनना चाहते हैं?	नेपोलियन हिल	250.00
• Mastermind और सफलता	नेपोलियन हिल	250.00
• वैदिक गौ विज्ञान	सुबोध कुमार	400.00
• शादी का लड्डू	चैताली हातीसकर	400.00
• यायावर शब्दशिल्पी पं. बनारसीदास चतुर्वेदी	सं. आशुतोष चतुर्वेदी	350.00
• टोक्यो ओलंपिक के खिलाड़ियों की प्रेरक कहानियाँ	दिलीप कुमार	250.00
• मानस में लौकिक ज्ञान	एस.के. गुप्ता	400.00

प्रभात प्रकाशन
नवनूतन प्रकाशन की गौरवशाली परंपरा
इ-मेल : prabhatbooks@gmail.com

4/19 आसफ अली रोड, नई दिल्ली-110002
फोन : 011-23257555
हेल्पलाइन नं. ✆7827007777

बिना पूर्व-सूचना के मूल्यों में परिवर्तन किया जा सकता है।

हिमगिरि, तुम मौन ही रहना!

• नीता चौबीसा

कभी-कभी मेरे रोम-रोम पर अछोर मरुस्थल उग आता है, मैं नहीं जानती, ऐसा क्यों होता है? शायद जीवन की विद्रूपताओं, जटिलताओं से बौराया मेरा मन एक अनछुई चादर चाहता है, जिसके तले उनींदी पनियाली अँखियों को ढाँपकर कुछ पल ऐकांतिक सुस्ता सके, नव ताजगी पा सके। ऐसे में मेरी यह चादर बनता है नगराज हिमालय। मैं नहीं जानती क्या नाता है मेरा हिमालय से, किंतु इतना जरूर लगता है कि कोई पूर्व का नाता ही रहा होगा, जो मैं पूरी दुनिया की घुमक्कड़ी को छोड़ सदा हिमालय को ही चुनती रही हूँ। आत्मा की भी अपनी घुम्मकड़ी होती है, आत्मा की अपनी यात्रा होती है और जीवन उसका पड़ाव मात्र है, यह यात्रा तो जीवन के आद्योपांत चलती है। जीवन के उपरांत पुनश्च जीवनचक्र के इस क्रम का ही मेरा कोई नाता रहा होगा हिमराज से, जो वहीं जाकर मेरी तृषा तृप्त होती है। मेरे रोम-रोम पर उमगा मरुस्थल खामोशियों की हिम वादियों की अनछुई चादर ओढ़कर मेरे पोर-पोर में हरीतिमा का उपवन महका देती है।

हिमालय से मेरा नाता तब जुड़ा था, जब मैं दसवीं कक्षा में थी। प्रथम दर्शन में ही वह मेरे इतने गहरे पैठा कि प्रतिपल उसका संग पाने को मैं लालायित हो उठी। तब से अब तक लगभग प्रतिवर्ष मैं उसकी शरण में जाती हूँ, वहाँ से वापस लौटने का मन तो नहीं करता, पर जगत् की इस भूल-भूलैया में लौटना ही पड़ता है। प्रशांत नीरवता, प्रफुल्ल वातावरण, नीरव समीर, पर्वत और सैलाबों का अधीश, सुवर्णमयी ज्योत्स्ना के अमृतपुंजों का स्वामी, झर-झर निर्बाध बहते अक्षय निर्झरों का जनक, नीलवर्णी गगन के चँदोवे पर तैरते कपासी मेघों के वृंदसमूहों का पालना हिमालय। स्वयं को 'मैं' से विलग करता मखमली कोहरा, निचली तराइयों में पड़ने वाले ऊँचे देवदार, प्लम, चीड़ के वन प्रांतरों की झूलती श्रावणी डगर पर चिहुँकते, मादक कलरव करते पाँखी, सूर्य के आतप में नवोदित प्रकाशित हिमाच्छादित शिखर, हिमगिरि शृंगों से पथगामिनी हुई रुनझुन पगरव करती कल्लोलिनीया और इन सबके बीच उच्चस्थ शिखरों पर एकाकी कंदराओं तक की दुर्गमता को नापकर जीवन के मर्म को उद्घाटित करने को आतुर हुए कुछ मुट्ठी भर मुमुक्षुओं की शरणस्थली बना हिमालय, सबकुछ इतना अद्भुत, इतना गतिमान और इतना ओजमयी कि जी चाहता है, समय कुछ घड़ी ठहर जाए तो मैं विधु की इस सर्वोत्कृष्ट अभिव्यक्ति को सदा-सदा के लिए अपने अभ्यंतर में उतार लूँ। इन क्षणों को जीवन का पाथेय बनाकर कण-कण में अभिव्यक्त होती विराट् के इस शुचि-अस्तित्व की छवि में स्वयं को घोलकर तो मेरी समस्त जड़ता, अल्पज्ञता तत्क्षण विलीन हो जाती है। श्वास-प्रश्वास घुलते हिमशिखर मुझमें एक शीतल शून्य को भरते जाते हैं और तब मैं नतमस्तक हो कह उठती हूँ हे दिव्यात्मा! हे योगिराज! तुम से ही यह भूमि देवभूमि है, हे महात्मन! तुम भारत का गौरवगान हो, तुम हमारे पुरखों के पुण्यों का प्रसाद हो, तुम महर्षियों की मनश्चभूमि का आदि प्रमाण हो, तुम सचमुच ही रुद्र महाकाल का अतुल्य भाल हो, हे नगराज! तुम अनंत अपार हो।

सुपरिचित लेखिका। अब तक सुप्त वीणा के तार, अनछुए अहसास (काव्य-संग्रह), चकम छकाई (बाल-कविता-संग्रह), अग्निगंधा (ललित-निबंध), सप्तरथी का प्रवास (यात्रा-वृत्तांत) एवं अन्य पुस्तकें प्रकाशित। आकाशवाणी से काव्यपाठ का प्रसारण। अखिल भारतीय साहित्य संगम द्वारा 'काव्य कुसुम' की मानद सम्मानोपाधि सहित अनेक सम्मानों से सम्मानित। संप्रति माध्यमिक शिक्षा विभाग राजस्थान में कार्यरत।

पूरी दुनिया में अनेकानेक स्थल पर्यटन के लायक है, फिर भी क्यों हिमालय ही बार-बार मुझे बुलाता है, मुझे लगता है कि वह मुझे पुकारता है, जैसे गड़रिया अपनी खोई हुई भेड़ों को पुकारता है और उसकी एक पुकार पर दूर कही वन्य प्रांत में अपनी मस्ती में मग्न चरती भेड़ सबकुछ भूलकर आवाज की दिशा में व्याकुल हो दौड़ पड़ती है, वैसे ही मैं भी दौड़ पड़ती हूँ। और जब उस तक पहुँच जाती हूँ तो अवाक् सी, ठगी सी खड़ी रह जाती हूँ। कुछ पल के लिए कुछ भी नहीं सूझता, बस एक अपलक निहोरा, कोई चेत नहीं, कोई सुधि नहीं निस्पंद, निर्वात, निर्निमेष ठगी सी आत्मविस्मृत अपलक ठहरी, शेष कुछ भी नहीं रहता मुझ में। शायद मेरी अस्थिरता हिमवान की स्थिरता में समा जाती है। मैं मैं नहीं रहती शायद हिमांश हो जाती हूँ। हर बार यही होता है, अनोखी अनुभूति जिसे शब्दों में

बाँधना दुश्वार है, जिसका स्वाद उसी प्रकार अव्यक्त रह जाता है, ज्यों गूँगे को गुड़ का स्वाद। अनायास मैं अपने जीवनसाथी द्वारा झिंझोड़कर जगाई जाती हूँ और उँगली से इंगित कर ये कह उठते हैं—"देखो तो कहाँ खोई हो? देखो उधर कितना सुंदर दृश्य है।" मैं अपनी चिर अभीप्सित चंद्रशिला की चोटी पर खड़ी हूँ। मेरे समक्ष खुले आसमानी वातायन में झाँकती गगनचुंबी चौखंबा, नंदादेवी, त्रिशूल और केदार डैम की हिम शृंखलाएँ हैं। मेरे पैरों तले हिम, समक्ष हिम, चतुर्दिक् रुपहली आभा लिये हिमगिरि का मौन साम्राज्य, आकाश की ओर शीश उठाए एकमिक होती धवल चोटियाँ नीरवता में बोलती ठंडी हाड़ कँपा देने वाली मंद वायु से बातें कर रही है। मेरा रोम-रोम वायु स्नान कर रहा है। इस वक्त मेरा अंतर तर हो चुका है। मेरे समक्ष विशाल हिमालय खड़ा है। हिमालय अर्थात् अनजानी डगर, अधखुली पगडंडियाँ और मौन का निर्वासित साम्राज्य। जब भी कहीं घूमने की बात होती है तो मैं सुदूर हिमालय के तलहटी के प्रांतर को ही क्यों चुनती हूँ? अकसर घर में सभी पूछते हैं कि हर बार वही क्यों? और मैं हँसकर कहती हूँ, क्योंकि वह मेरा आत्मीय है, सगा लगता है।

कितना अनुपम, स्वाभाविक, सजीव, संवेदनात्मक, चित्रोपम, रोमांचक और रमणीय है हिमालय, बताओ तो कोई और दूजा है उसके जैसा? जगत् के जटिल रागात्मक संबंध सुख की सृष्टि तो कर सकते हैं, पर आनंद का वर्षण नहीं कर सकते, किंतु आत्मीय संबंधों की प्रगाढ़ता में मेरा परम-आत्मीय हितैषी हिमालय मुझे अपने दुर्गम थका देनी वाली यात्रा के बावजूद सुख, सुकून और आनंद सब देता है। आखिर क्या है ऐसा हिमालय में, जो दुनिया में अन्यत्र नहीं?

जगत् का कोलाहली जहरीला धुँआ सबको पार्थिव, क्षुब्ध कर देता है, छिन्न-भिन्न हुआ, आहत मानसिक-क्षयरोगी हुआ मनुज नीरव सन्नाटे और शांति को तलाशता दूर-दूर बहुत दूर किसी नीरव चुप्पी में जाना चाहता है। स्वयं मनुष्य के द्वारा पैदा किए तमाम आडंबरी संसाधन उसे अल्प जान पड़ते हैं और असुविधाओं में, दुर्गमता में अगम शांति को खोजता किसी हिमगिरि शृंग की सन्निद्धि तलाशता हिमालय की गोद में आ पहुँचता है।

दुनिया की भीड़ में कितना शोर-शराबा, कितना कोलाहल, कितना बकझक है। वहाँ कर कोई बोल रहा है, सब सिर्फ कहना चाहते है, किंतु कोई किसी को सुनना नहीं चाहता। हर कोई स्वयं को सत्यार्थी समझता है, अभिव्यक्ति के नैसर्गिक प्रवृत्ति में लीन मनुष्य यह भूल चुका है कि बोलने के लिए सिर्फ एक मुँह और सुनने के लिए दो कान दिए गए हैं। हर कोई सिर्फ अभिव्यक्त होने को आतुर है, ज्यों भरा हुआ गुब्बारा हो, छूते ही फट पड़ेगा। मनुष्य के भीतर का कोलाहल जब बाहर फूटता है तो बाहर भी गुलाब तो नहीं उगाएगा सिर्फ शैवालों को ही जन सकता है। सार्थक संवाद की गुंजाइश भी तभी हो सकती है, जब भीतर के घड़े में शांत जल हो। मानसी सरोवर की अशांति के उथले मलिन जल पर सिर्फ शैवाल ही जन्म ले सकते हैं, कमल नहीं। मनुष्य के भीतर की विषाक्त जलकुंभी का जाल इतना गहन, इतना विस्तीर्ण हो चुका है इतना कीच युक्त दलदली होता है कि वह जलकुंभी बाहर आने को उतावली हुई बैठी है, भीतर जो बीज है, वही नाल ही तो बाहर आएगी न? भीतर जलकुंभी हो तो बाहर कमलनाल कैसे आ सकती है? इसलिए दुनिया के कोलाहल में सिर्फ विष है, विषधर है जो डसने के लिए शिकार की घात लगाए बैठा है और कोई भी नीलकंठ यहाँ उपलब्ध नहीं, जो लोकहितार्थ उस विष को कंठस्थ करने को उद्यत हो।

जगत् का कोलाहली जहरीला धुँआ सबको पार्थिव, क्षुब्ध कर देता है, छिन्न-भिन्न हुआ, आहत मानसिक-क्षयरोगी हुआ मनुज नीरव सन्नाटे और शांति को तलाशता दूर-दूर बहुत दूर किसी नीरव चुप्पी में जाना चाहता है। स्वयं मनुष्य के द्वारा पैदा किए तमाम आडंबरी संसाधन उसे अल्प जान पड़ते हैं और असुविधाओं में, दुर्गमता में अगम शांति को खोजता किसी हिमगिरि शृंग की सन्निद्धि तलाशता हिमालय की गोद में आ पहुँचता है। हिमालय स्वयं भी मौन है और उसके मौन साम्राज्य में प्रवेश करते हैं, सबकुछ मौन हो जाता है। सारे प्रश्न तिरोहित हो जाते हैं, वह किसी भी क्रिया की कोई प्रतिक्रिया कभी नहीं देता। मौन शीतल होता है, ठंडेपन का द्योतक है, इसलिए दुनिया के उपद्रवों, हो हल्ला से विदीर्ण हुए मन का मानसोपचार कर अपनी मौनी सीवन देता हिमालय वर्षों से दुनिया से संत्रस्त हुए मनश्च का साक्षी चिकित्सक वैद्य रहा है। इसलिए हिमालय की सन्निद्धि में भोगी भी आते हैं और योग चाहने वाले उपासक भी। हिमालय उफ किए बगैर दोनों को बराबर छाँव देता है। कश्मीर से अरुणाचल तक विस्तृत देही से छाता बनकर भारत को छाँव देता, प्राचीर बनकर सुरक्षा देता हिमालय अपनी विशालता का गुमान नहीं करता, अपनी सर्वोच्च ऊँचाइयों पर उसे कभी तनिक भी दंभ नहीं हुआ। दिव्यता और पुण्य के प्रवाह का सेतु हुआ हिमालय देव, गंधर्व, यक्ष, किन्नरों के साथ मनुष्यों का भी उतने ही प्रेम से आतिथ्य सत्कार करता रहा है, कभी कोई भेद नहीं करता। जो जिस भाव से उसके पास आता है, वह वैसा ही पाता है। वह अपनी गोद में जितने प्रेम से ऋषियों की तपोवन संस्कृति को पालता है, उतनी ही प्रियता से देवों की रमण संस्कृति और मनुष्यों की रोमांच संस्कृति को भी पोषित करता है।

जिसकी जैसी पिपासा उसके लिए वैसा ही हिमालय। हिमालय यानी प्रेम का देवालय। प्रेम अर्थात् देहोपरि उद्गार, सहजीवन का अमृत आधार, चेतन्य-अचेतन्य के मिलन का अंतरद्वार, आकाशोन्मुखी सौम्य प्रवास, अंतर्मन का जीवंत तेजोमयी संवाद, परिमल का तरंगित नाद, आत्मसम्मोहन की तंद्रा से उन्मुक्त हुआ वाक, प्रेम, अर्थात् संवेदना के शिखर का अनुपम उपहार। कभी-कभी मैं सोचती हूँ कितने विपरीत गुणों को धारण किए हुए है हिमालय। स्पंदन रहित पर संवेदनशीलता का चरम, निशब्द होकर भी बहुभाषी, अटल अभेद्य होकर भी कितना ऋजु और मृदुल, आर्द्र होकर भी कितना अनाविल, प्रेमिल होकर भी नि:स्वं, एकाकी होकर भी कितना सहिष्णु, ऐंद्रजालिक होकर भी इंद्रियातीत, अगम्य और दुर्बोध होकर भी दर्शनीय व आद्योपांत जानने योग्य। दिनांत की टहनी पर मुसकराते हुए हिमगिरि को देखकर आत्मलीन होना कितना स्वाभाविक हो जाता है। चतुर्दिक् परिवेश अत्यंत सुनसान और दिव्य है और जब इनसान निपट

अकेला हो तो स्वयं से जुड़ना, आत्मलीन होना, आत्मसंवाद कर पाना सहज सरल हो जाता है। दुनिया की बकबक, चिल्लाहट, कोलाहल से जीर्ण-शीर्ण हुआ मन हिमालय के सन्नाटों में इतना ऐक्य भाव में रम जाता है कि द्वैत रह ही नहीं जाता, संभव है, इसलिए हिमालय अनादि काल से ही ऋषियों, महर्षियों, मुनियों की प्रिय शरणस्थली और कर्मभूमि रहा है। अद्‌भुत तथ्य यह भी है कि ऊँचाई पर खड़े व्यक्ति को नीचे की दुनिया कितनी निम्न और छोटी दिखाई पड़ती है शायद यही कारण है कि उच्च भूमा पर खड़े मनस्वियों को जगत् के प्रपंचों में लीन संसारियों के स्वार्थी कुकृत्यों पर क्रोध नहीं आता अपितु उनकी मूर्खताओं पर दया ही आती है। शायद हिमालय को भी हम सब मूर्खों पर जरूर दया ही आती होगी।

ऊँचाइयों पर विराजे हिमगिरि की दिव्यता तक पहुँचना उतना आसान भी कहाँ है? क्योंकि बने बनाए सहज सुविधाजनक मार्ग उस तक नहीं पहुँचा सकते हैं, उस दिव्यता तक पहुँचने के लिए अनेक दुर्गम चढ़ाइयाँ बड़े जीवट से ऐंकांतिक ही पार करनी होती हैं, अबूझ हिमवंत की देह पर अपनी पगडंडियाँ स्वयं बूझनी, गढ़नी होती हैं और लुढ़कनों, उतराइयों पर सभ्य, शालीन, समदर्शी एव विनम्र बने रहना होता है, महातपा हिमालय के दिव्य पथ का राही अपने शुष्क होंठों पर जुबान फेरकर गिला तो कर सकता है, पर बिल्लोरी झरनों के गमकते पानी को पीने की लालसा में उसे संयमित भी रहना पड़ता है। प्यास चाहे कैसी भी, किसकी भी हो, इंद्रियों का संयम आवश्यक है, प्रतिपल फिसलनों पर पैर जमाकर रखते हुए दृढ़ प्रतिज्ञ हुए बगैर, मृत्यु के आसन्न भय पर विजय प्राप्त करके ही उस दिव्यता को प्राप्त हुआ जा सकता है। पीछे पुकारते संसार के आकर्षणों से मुक्त और बेखबर हुए बिना उस दिव्यात्मा को प्राप्त करना असंभव है। दुस्साहसी और फकीर हुए बिना हिमालय से मिलना असंभव है। अगर इतना आसान होता हिमालय होना तो कितने ही उससे हिमगिरि होते और इतना सरल होता हिमगिरि से मिलना तो प्रत्येक व्यक्ति पहुँच चुका होता, पर विरले कदम ही मुमुक्षु होते हैं, कुछ तो पथ की विकटता से मध्य से ही लौट जाते हैं और जो नहीं पहुँच पाते, उनके लिए हिमगिरी-शृंग खट्टे अंगूर होते हैं और प्राय: उन्हें ही यह कहते हुए सुना जाता है कि आखिर वहाँ रखा ही क्या है? मुमुक्षत्व इतना सरल नहीं होता और बिना मुमुक्षु हुए हिमालय कभी नहीं मिलता। पर आश्चर्य की बात यह है कि मुमुक्षुओं की कोई कमी किसी युग में भारत में नहीं रही, क्योंकि शायद अगम्य को पाने की नैसर्गिक इच्छा मानव कभी मार नहीं पाया है। अव्यक्त का सौंदर्य सदा मनुष्य को आकर्षित करता आया है, प्राप्य की कद्र करना इनसान के कभी बस में नहीं रहा और अप्राप्य का आकर्षण उसे लुभाता है।

हिमालय भी हिमालय ही है, ज्यों-ज्यों उसकी ओर बढ़ते जाते हैं, वह और भी दूर सरकता प्रतीत होता है, अपनी ओर आते कदमों की आहट सुन चौकन्ना हो जाता है, कभी हुंकार भरकर डराता है तो कभी बर्फीले तूफान भेजकर परीक्षा लेता है, कभी उसकी देह की दरारें निगलने का प्रयास करती हैं तो कभी हाड़ कँपाने वाले शीत अस्थियों की गरमाहट खींच लेती है। पर जो अपनी पगडंडियाँ खुद गढ़ते हैं, वह कदम कब रुकते हैं! दूसरों के बनाए सहज-सरल रास्ते सुख-सुविधाएँ तो दे सकते हैं, परंतु जीवट और आनंद नहीं दे पाते। खुद की गढ़ी, चाहे छोटी ही सही, अपनी पगडंडियाँ आत्मसम्मान का भाव पैदा करती हैं, जीवट से चुनौतियों का सामना करने की हिम्मत देती है। इन टेढ़ी-मेढ़ी वक्र पगडंडियों पर हुनर और हौसले के पग रखते वे हिमालय को औचक जा मिलते हैं। उस ऊँचाई पर पहुँचने पर अपने पराए राग द्वेष का भेद तो दृष्टव्य ही नहीं होता, बस विराट् के समूचे अस्तित्व में घुल के हिमालय हुए मन को पूरी धरती ही अपना नन्हा सा घर लगती है। वहाँ पहुँचकर ही वह समझ पाता है कि ऊँचाइयों पर तमाम क्षुद्रताएँ विलीन हो जाती हैं और समरूप एकता ही दृष्टव्य होती है। वसुधैव कुटुंबकम् की अनुभूति ऊँचाइयों पर ही संभव है, क्योंकि वहाँ कुछ भी लघु व्यापक नहीं रह जाता, सब मिलाकर पूरी पृथ्वी ही एक कॉलोनी नजर आती है। हालाँकि यह मार्ग बहुत कठिन और अनजाना है, किंतु मार्ग की विप्लवी कठिनाइयों, चुनौतियों को जो सहज गले लगाता जाता है, अपना मान आलिंगन कर लेता है, फिर उसे वे नहीं सताती, नहीं डराती, उसके लिए मार्ग प्रशस्त कर देती है और हिमालय तक पहुँचा देती है।

नगराज हिमगिरि की धवलता लकीर के फकीरों के लिए अप्राप्य ही है, पर नवोन्मेषी साहसियों को वे सद्‌भावना से गले लगाती है। पवित्र हुए बगैर पवित्रता को न तो समझा जा सकता है और न ही पाया जा सकता है, इसलिए हिमालय आर्द्र होकर भी मलिन नहीं होता। हाथ के स्पर्श से छू भर लेने से भरभराकर गलने की संवेदनशीलता हिमगिरि की महानता है। वह सदियों से खड़ा है, सदियों से गला है फिर भी अशेष है, क्योंकि संवेदना का शिखर गलता जरूर है, क्योंकि उसके गलने से ही देवपगा भगीरथी मंदाकिनियों की जीवनदायी प्रार्थनाएँ लिखी जा सकती हैं, परंतु जो परोपकार में गलने का हुनर जानता हो, उसकी अचल छवि कभी धूमिल नहीं हो सकती, इसलिए कटकर, छँटकर, बँटकर, गलकर भी हिमालय आज भी सम्मुख खड़ा है। उसकी अस्थिरता में भी धीर थिरता है और स्थिरता में भी एक वक्र गति है, जिसे समझना टेढ़ी खीर है। उसका अस्फुट सौंदर्य यही है कि उसमें हर विपरीत गुण का चरम संयमित सामंजस्य है। वे अबोला भी बहुत कुछ अभिव्यक्त करता है और मौलीक अभिव्यक्तियों के बाद भी सघन खामोश है। कभी-कभी मैं सोचती हूँ कि अगर हिमालय बोलना शुरू कर दे तो हमारा क्या होगा? छोटी-छोटी उपलब्धियों पर आत्मप्रवंचना में रत होकर स्वयं के गुणगान करते हम मनुष्यों का क्या होगा? किसी का थोड़ा सा हित करके बरसों तक उस पर अहसान जताते हम मनुष्य किस प्रकार उसे मुँह दिखा पाएँगे? आत्मश्लाघा में तत्पर अपनी डफली कूटते हम मनुष्य किस प्रकार उस नगराज का सामना कर पाएँगे? किसी को चार आने दान में देकर हम अपनी स्व प्रशंसा के गीत गाते नहीं अघाते, स्वयं को दानवीर समझ भामाशाह सम्मानों से लेस होने का जतन करते हैं, उस महान् दाता का हम निर्लज्ज हुए मनुज कैसे ऋण उतार पाएँगे, जबकि हम सभी सदियों से उसके ऋणी हैं? हम किसी की एक कमजोरी, एक बात तक को कभी गुप्त नहीं रख पाते उसे भी भुनाने का जतन कर स्वयं लाभ उठाने के कोशिश करते हैं, ऐसे में सदियों से हमारे अतीत की संपूर्ण गाथाओं को अपने सीने में दबाकर बैठा हिमालय अगर बोलने लग जाए और हमारी

ही औकात पर उतर आए तो हमारा क्या होगा ?

और सब से बड़ी बात मनुष्य छलावों और झूठ के व्यूह गढ़कर अपनी जिन भ्रमित ऊँचाइयों का जी भर बखान करता है, सुविधाओं के अंबार में दोगले चरित्र को जीता उपलब्धियों का जीना चढ़ने, जाने कितने दरवाजे खुद गढ़ता है, कितनी ही दीवारें बनाता है और दरवाजे बंद मिलें तो अनजान खिड़कियों से भी कूद जाता है। हाँ, खुद की बनाई दीवारों को खुद गिराने में वह अल्प समर्थ होता है और उन्हीं दीवारों से घिर उन्हीं में सिर पटकता रहता है, वे दीवारें भी उसके झूठ को नहीं छुपा पाती है, क्योंकि मनुष्य भूल जाता है कि सच को झूठ तो आसानी से बनाया जा सकता है, पर झूठ को सच कभी नहीं बनाया जा सकता। सत्य को गहरे कही जमीन में दफन कर दो, गाड़ दो तब भी एक-न-एक दिन वह जमीन खोदकर बाहर आ ही जाता है, सत्य मुखरित होता है, तब मनुष्य की बनाई कोई दीवार न तो उसे पनाह देने में समर्थ होती है और न ही कोई दरवाजा, खिड़की उसके काम आती है। सत्य अवधूत शिव की भाँति स्वयं भी नग्न होता है और आदमी को भी तमाम ओढ़े हुए चोलों को एक-एक कर अनावृत करता नग्न करता जाता है। इस प्रकार एक-न-एक दिन खुद के बनाए चक्रव्यूह में मनुष्य खुद ही कुंठित हो फँसकर उलझ जाता है, तब इस बेतुके कोलाहल में उसे बचाने कोई नहीं आता और तब रोगी मनो-मस्तिष्क को चिकित्सक द्वार हिमगिरि याद दिलाया जाता है। जिसे जीवन भर हिमालय कभी याद न आया उसे भी नगराज तुम सहलाकर सहारा देते नजर आते हो। तब भी तुम कुछ नहीं बोलते, मौन ही मुसकराते हो। हे मौनी नगराज! तुम सचमुच अद्‌भुत हो, बेजोड़ हो, दिव्य हो!

हिमालय तुम पर न तो कोई दीवार है, न ही कोई दरवाजा, न ही कोई खिड़की, न ही कोई प्राचीर, तुम विधाता के मुक्त आँगन की चिहुँकती खिलखिलाहट हो, मौन के तटस्थ द्वंद्वरहित, निरपेक्ष प्रांगण में बर्फ की शीतलता के बीच अगन के ज्वालामुखी बरसों से दबाए हिमालय, यदि तुमने मुँह खोला तो हमारी अति वाचाल तृषा कहाँ जाकर तृप्त होगी ? फिर हम सब का क्या होगा, यह विचारणीय है ? इसलिए हे हिमराज! तुम सबके राज जानकर भी जो मौन खड़े हो, वही श्रेयस्कर है, तुम ऐसे ही मौन बने रहना, क्योंकि मौन और चुप्पी में बड़ा भारी अंतर होता है, कुंठाओं में घिरा मनुष्य चुप तो रह सकता है, पर मौन नहीं हो सकता और दुनिया के इस अजब-गजब खेले में एक तुम्हें छोड़कर सब अपना-अपना राग गाने में व्यस्त, मस्त है और फिर एक दिन थके हारे, टूटे, हताश, पस्त होकर वे तुम्हें निहारकर ही शांति पाते हैं, क्योंकि मौन के विटप पर ही शांति के फूल खिलते हैं, अत: हे हिमालय! तुम सदा मौन ही रहना, यहाँ बोलने वाले महारथी बहुत हैं, तुम कभी न बोलना, इसी में हम सबका हित है। तुम्हारी दुर्गमता ही तुम्हारा अभेद्य कवच है, जिसमें तुम्हारी अवधूत निर्मलता दुनिया के मायावी फरेबी जालसाजियों से अक्षुण्ण रही है, उसका रंग तुम पर न चढ़ सका है। पगडंडियों की विषमताओं ने तुम्हें भ्रष्ट नजरों से सदा बचाए रखा है। जिन विरल मुमुक्षुओं को तुम प्रिय हो, वे तो बिन शिकवा-शिकायत उसे नाप ही लेते हैं, जिन कामियों को तुम प्रिय हो, वे तुम्हारी तलहटियों में ही पहुँचकर खुश हैं, जिन जिज्ञासुओं को तुम्हारी देह नापनी है, वे मृत्यु से खेलकर भी तुम तक आ ही जाते हैं और तुम निरपेक्ष साक्षी मौन हुए सबको सहारा देते हो, कुछ नहीं कहते। दुनिया के बकवादी सर्कस में पथभ्रष्ट हुई मनुजता को राह दिखाते हिमगिरि तुम मौन ही रहना, तुम्हारा निष्ठुर निस्तब्ध अनिश्चित गंतव्य तुम्हारी मौन हुई अनिश्चित संभावनाओं का ऊर्जस्वित द्वार है, दुनिया के मायावी निस्तेज दस्युओं के विक्षिप्त कोलाहल से दूर अनभिज्ञ निश्छल है, हे महामना! हिमगिरि तुम कभी न बोलना, मौन ही रहना, तुम्हारी वक्तृता पर हमें तनिक भी संदेह नहीं।

साअ
'सर्वमंगला' ७३,
वृंदावन कॉलोनी, सुभाष नगर,
बाँसवाड़ा-३२७००१ (राज.)
दूरभाष : ९४१४५६७७४८

पॉकेटमनी का दंश

लघुकथा

● सत्य शुचि

उस दिन रिश्ते को लेकर दोनों परिवार एक-दूसरे के निकट आए थे। चुनाँचे लड़का रंग-रूप में लड़की से साँवला था, किंतु उसका परिवार अच्छा था। और पारिवारिक पृष्ठभूमि भी लड़के की मजबूत थी।

दिलचस्प नजारा यह है कि फर्स्ट सिटिंग में ही लड़के को लड़की पसंद थी और लड़की को भी लड़का।

मगर बनते-जुड़ते इस रिश्ते में कहीं से एक अड़चन सी महसूस की जाने लगी और लड़की के नेत्रों में थोड़ा सा संशय डोलने लगा।

अब कुछ समय में ही संचार साधनों की बढ़ती तकनीक से लड़की ने समस्त जानकारियाँ हासिल कर लीं और अभी उसकी नजरों में लड़के का कारोबारी धंधा सुई की मानिंद खुभ गया। आखिरकार उसने अपने इस रिश्ते को मंजूरी नहीं दी।

हकीकत में लड़के के हर माह की पॉकेटमनी से वह असंतुष्ट हो चली। और फिर उसके कमजोर वेतन के चलते रिश्ते की राह भी डगमगा गई। सहसा वातावरण में एक कड़वापन पसरकर रह गया।

साअ
साकेत नगर, ब्यावर-३०५९०१ (राज.)
दूरभाष : ९४१३६८५८२०

गिरगिट

• संजय कुमार मालवीय

मिलना और बिछड़ना जीवन का खेल है। कब, कौन, कहाँ और कैसे मिलेगा, कुछ पता नहीं। कुछ लोग मिलते हैं और बिछड़ जाते हैं। कुछ अचानक मिलकर भी इतने करीब हो जाते हैं कि बिछड़कर भी अपनी चंद मुलाकात की यादें हमेशा के लिए छोड़ जाते हैं। आदमी चाहकर भी जीवन भर उन्हें भुला नहीं पाता। निहित स्वार्थ से कोई किसी से जुड़ता है, कोई निस्स्वार्थ से। कई बार मिलने वाले प्रत्येक व्यक्ति को सहज समझ लेना भी मुश्किल होता है। ऐसी ही एक पुरानी घटना है।

अचानक एक नवयुवक का मिलना किसी अनजान युवती से हो जाता है। उस आकस्मिक मिलन के घटनाक्रम को वह युवती तो भुला देती है, परंतु बिछड़ने के बाद भी मिलन के वे सारे पल हमेशा के लिए उस युवक के दिल में दर्ज हो जाते हैं, जिसे वह ताउम्र भुला नहीं पाता।

घटना वर्षों पुरानी है। किसी कार्यक्रम में एक सर्वांग सुंदरी युवती का मिलना अचानक एक आकर्षक नवयुवक से हो जाता है। समारोह में सम्मिलित लोग न जाने क्यों उस युवक से बस एक बार मिल लेने को आतुर थे। यह सब देखकर वह लड़की भी अपने परिजनों से पूछ लेती है कि आखिर वह नवयुवक है कौन? वार्त्ता के क्रम में ही उसे पता चलता है कि वह नेक दिल इनसान समीर है, जो हवा के झोंके की तरह इस समारोह में सम्मिलित होने आया है और कुछ समय में ही चला भी जाएगा, इसलिए उसको चाहने-जानने वाले लोग उससे मिल लेना चाहते हैं। युवती के परिजन भी उसे जानते थे। उन्होंने भी उसका परिचय समीर से कराया। उत्सुकतावश वह युवती समीर से उसका दूरभाष नंबर माँग लेती है और उससे पूछ बैठती है, "क्या मैं आपको कभी फोन भी कर सकती हूँ?"

मुसकराते हुए समीर सहमति दे देता है और उस समारोह से चला जाता है।

अधीरता में कुछ माह बीते। सारिका ने चलित दूरभाष पर एक औपचारिक संदेश भेजकर समीर का कुशल-क्षेम पूछा। समीर ने भी सारिका की कुशलता जाननी चाही। अब थोड़े अंतराल पर दोनों के बीच

सुपरिचित लेखक। 'प्रायश्चित' एवं 'बदलते मौसम' आदि कहानियाँ पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित। संप्रति उत्तर प्रदेश की प्रशासनिक सेवा में कार्यरत हैं।

संदेशों का आदान-प्रदान हो जाया करता था। सारिका ने एक दिन समीर को फोन पर बताया, "आजकल वह भी उसी शहर में रह रही है, जहाँ समीर रहता है।"

"किस उद्देश्य से हमारे शहर में तुम एकाएक आ गई, सारिका?" समीर ने पूछा।

"बस, ऐसे ही कुछ माह के लिए एक परीक्षा की तैयारी हेतु कोचिंग करने आई हूँ और पेइंग गेस्ट की तरह यहीं पर एक हॉस्टल में रह रही हूँ। ज्यों ही परीक्षा हो जाएगी, अपने घर वापस चली जाऊँगी।" सारिका ने आने का उद्देश्य बताया।

"तब तो कभी हमारी मुलाकात भी होनी चाहिए।" समीर की आँखों में रोशनी तैर गई।

"आप जैसे व्यस्त व्यक्ति के पास मुझसे मिलने का समय ही कहाँ होगा।" सारिका ने समीर को टटोला।

"तुम अपना पता तो बताओ, मैं किसी दिन समय निकालकर तुमसे मिलने अवश्य आऊँगा।" समीर ने हँसते हुए कहा।

एक दिन शाम को समीर सारिका से मिलने के लिए उसके आवास पर गया। उसने सारिका के हॉस्टल के निकट स्थित चौराहे पर पहुँचकर गाड़ी में बैठे-बैठे ही फोन किया कि वह इस चौराहे से आगे का रास्ता नहीं जानता है।

"आप वहीं रुको, मैं आपको लेने आ रही हूँ।" सारिका ने उसे आश्वस्त किया।

सारिका पैदल ही उस चौराहे पर पहुँच गई और समीर को अपने साथ कमरे पर लिवा लाई। यहाँ पहुँचकर दोनों ने गरमागरम चाय पी।

समीर लगभग आधे घंटे तक सारिका के पास रुका रहा, फिर चला गया। समीर से मिलकर सारिका बहुत खुश थी। हफ्ते-दस दिन में समीर और सारिका की ऐसी ही मुलाकातें हो जाया करतीं। परस्पर बातचीत का सिलसिला भी बढ़ता और गहराता गया। धीरे-धीरे दोनों की आत्मीयता व समरसता भी बढ़ती गई।

कुछ माह बाद उस शहर को छोड़कर सारिका अपने शहर चली गई। जाते-जाते उसने दु:खी मन से समीर को फोन किया, "अब हम आपसे कहाँ मिल पाएँगे? कितना अच्छा लगता था, जब आप कभी-कभी शाम को मुझसे मिलने आया करते थे और मुलाकात का वह समय कितनी जल्दी बीत जाया करता था!"

"सारिका, मैं तुम्हारे शहर में भी तुमसे मिलने आ सकता हूँ, बशर्ते तुम मुझसे मिलना चाहो।"

समीर ने सारिका के भीतर राख में दबी चिनगारी को कुरेदा।

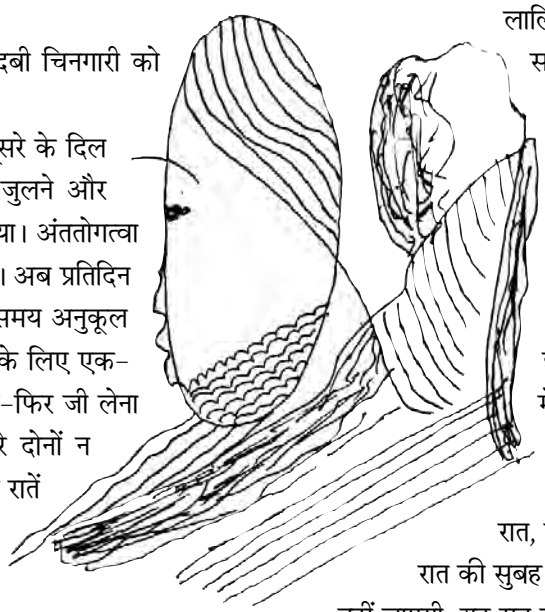

समीर और सारिका धीरे-धीरे एक-दूसरे के दिल के करीब होते जा रहे थे। उनके मिलने-जुलने और बातचीत करने का सिलसिला भी बढ़ता गया। अंततोगत्वा वे दोनों एक-दूसरे से गहन प्यार करने लगे। अब प्रतिदिन दोनों घंटों परस्पर बातें करते और जब भी समय अनुकूल होता, मिलने का प्रयास करते। कुछ समय के लिए एक-दूसरे से मिलकर वे उस बीते क्षण को फिर-फिर जी लेना चाहते थे। समय साथ देता रहा। धीरे-धीरे दोनों न जाने कहाँ-कहाँ घूमने गए, कितने दिन और रातें साथ-साथ बिताईं। बीते दिनों की कितनी यादें समीर और सारिका ने अपने-अपने दिलों में समेट ली थीं। परंतु यह अच्छा समय बहुत जल्दी ही बीत गया और समय बदलने लगा।

कुछ ही समय बाद, सारिका धीरे-धीरे समीर से दूर होने लगी। प्रारंभ के कुछ दिनों तक समीर इस आकस्मिक परिवर्तन को समझ ही नहीं सका। बाद में उसे पता चला कि उससे मिलने के पूर्व ही सारिका किसी अन्य से प्यार करती थी और उससे मिलने के बाद भी पूर्ववत् कर रही थी। सारिका पुन: अपने एक पुराने प्रेमी के करीब होती जा रही थी और उसी के साथ शेष जीवन बिताने के सपने बुनने लगी थी।

सारिका से किए गए प्यार पर समीर को कोई पछतावा नहीं था। वह सच में अब सारिका से प्यार करने लगा था। सारिका ज्यों-ज्यों समीर से दूरियाँ बढ़ा रही थी, त्यों-त्यों समीर भीतर से टूटता जा रहा था। वह सोचता—किसी ने सच ही कहा है कि दिल है ही बड़ी अजीब चीज, हजारों से लड़ जाता है, पर किसी एक से हार जाता है।

आखिरकार, सारिका ने समीर को अपने से एकदम अलग कर दिया और अपने पुराने प्रेमी के निकट हो गई। वह समीर की तुलना में उसी को दुनिया का सबसे वफादार व खूबसूरत इनसान बताने लगी थी।

सारिका का समीर से दूरी बढ़ाना भी एक बार स्वीकार किया जा सकता था; किंतु सारिका का अब उससे नफरत करना, उसमें सिर्फ कमियाँ निकालना, उसे बात-बात पर उलाहना देना आदि हरकतें समीर से किए गए सारिका के प्रेम पर प्रश्नचिह्न लगा रही थीं।

समीर को अब सारिका के प्रथम मिलन से बिछड़ जाने तक की सारी यादें रुलाया करती थीं। वह सोचता कि एक दिन वह भी था जब सारिका ने उसका हाथ पकड़कर अपनी ओर खींचा था और अब यह भी दिन देखने को मिला कि सारिका ने उसका हाथ छोड़ दिया। कभी सारिका ने आजीवन साथ न छोड़ने का जो वादा किया था, कभी न भूलने व दूर न होने की जो कसमें खाई थीं, वे सब वह कैसे भूल गई। उसे यह विश्वास नहीं होता कि उसके साथ गंगा में नौका-विहार के समय डूबते सूरज की लालिमा को पानी में निहारते हुए उसकी बाँहों में समा जाना सारिका कैसे भूल सकती है! उसके साथ सारिका ने न जाने कितने मनोरम स्थलों की यादगार यात्राएँ की थीं और कितने दिन व रातें उसके साथ हँसकर बिताए थे, समीर यह भूल नहीं पाता था।

अतिथि-गृह में उस रात सारिका द्वारा पहनी गई वे जरीदार काली साड़ी, वे झुमके, हाथों की वे चूड़ियाँ, होंठों की लाली, हाथों की मेहँदी, माथे की वे गोल लाल बिंदी और कटि तक लहराते-बलखाते काले केश समीर को अब भी भूले नहीं थे। पूर्णिमा की वह चाँदनी रात, उसकी और सारिका की मिलन की रात थी। उस रात की सुबह सारिका ने समीर से कहा था, "रात गई पर याद नहीं जाएगी, यह रात बहुत खास थी।"

बीते दिनों की स्मृतियों के पन्ने पलटकर वह अकेले में रोता रहता था। ढलते सूरज की किरणों से बचाने के लिए उसके माथे पर रखा जाने वाला सारिका का हाथ अब उसका नहीं रह गया था। उसे विंध्य पर्वत की खूबसूरत हरी-भरी पहाड़ी, विंडम-फाल की गड़गड़ाती आवाज में सारिका का खो जाना, उस पहाड़ी की तेज हवा में सारिका के दुपट्टे का सरसराते हुए उड़ना समीर को नहीं भूलता था। समीर का हाथ पकड़कर सारिका का यह कहना कि 'इस हाथ को मुझसे कभी न छुड़ाना समीर और मेरे अधिकार को भी मुझसे कभी न छीनना।' समीर को बहुत याद आता था।

अब भूले से भी अगर कभी सारिका से समीर की बातें होतीं, तो सारिका अनमने ढंग से कुछ क्षण बातें करके व्यस्तता बताती हुई फोन रख देती; क्योंकि अब उसे समीर में कोई दिलचस्पी नहीं रह गई थी। सारिका जिस समीर को पाना ईश्वर का वरदान कहती थी, उसी समीर से अतीत में हुई मुलाकातों को वह अब अभिशाप बताने लगी थी। सारिका के ऐसे परिवर्तन को समीर ने स्वप्न में भी नहीं सोचा था। परंतु समय की

चाल को भला कौन जान सका है! अब बंद दरवाजों के भीतर समीर की आँखों से सिर्फ अश्क बहा करते थे। समीर कई बार सोचता कि बस एक आलिंगन ही तो था, जिसे उसने अपनी दुनिया समझ लिया था। अब हृदय में गुदगुदी और प्यार जगा देने वाला समीर का वह आलिंगन सारिका को याद नहीं रह गया था, परंतु समीर के लिए बीते हुए दिन पूरी उम्र की दास्ताँ बन चुके थे।

लगभग दो वर्ष बीत गए। सारिका ने पुन: एक सामान्य सा संदेश समीर को भेजा। एक अंतराल के बाद सारिका को फिर अचानक मेरी याद कैसे आ गई—समीर को अजीब सा लगा। उस संदेश से वह बहुत खुश हुआ, क्योंकि वह सारिका की तरह पाला बदलने वाला इनसान नहीं था और न ही सारिका के प्रति उसका प्रेम किंचित् परिवर्तित हुआ था।

सारिका फिर से समीर के पास लौटना चाह रही थी। उसके पास अब खोने को कुछ भी नहीं रह गया था। वह अपनी कल्पित समझदारी व समीर की सलाह को न मानकर सबकुछ गँवा चुकी थी। उस फरेबी जालसाज सुदर्शन ने उसे कहीं का नहीं छोड़ा था। इतना सबकुछ होने व जान लेने के उपरांत भी समीर ने सारिका को स्वीकार कर लिया।

सारिका अब पुन: समीर का विश्वास जीतने का प्रयास कर रही थी। वह भली-भाँति जानती थी कि समीर सिर्फ उससे ही प्यार करता है और उसी के प्यार में पागल है। पहले की ही तरह वह फिर समीर से प्यार भरी बातें करने लगी थी। समीर बहुत भोला इनसान था। उसे लगा कि सारिका उसके पास लौट आई है, परंतु सारिका का यह भी एक छलावा ही था। सच तो यह है कि सारिका अब पहले की तरह समीर को नहीं चाहती थी। वह जानबूझकर अपनी की गई गलतियों पर परदा डालने के लिए समीर का विश्वास जीतकर, उसकी नजर में अपने आपको निर्दोष सिद्ध करना चाहती थी। वह ज्यादा दिनों तक अपनी बातों पर स्थिर न रह सकी। गिरगिट की तरह रंग बदलना उसकी प्रवृत्ति में था।

धीरे-धीरे सारिका के व्यवहार में पुन: बदलाव आने लगा। अब वह समीर से यदा-कदा ही बातें करती। समीर जब कभी सारिका से मिलने और आमने-सामने बैठकर बातें करने का प्रस्ताव रखता, वे मिलने से सीधे मना तो न करती किंतु कोई-न-कोई बहाना बताकर उससे मिलती भी न थी। समीर बातों-बातों में जब कभी सुदर्शन की बुराई सारिका से कर देता, तो सारिका को एकदम अच्छा नहीं लगता था और वह सुदर्शन का बचाव करने लगती थी। सारिका को सुदर्शन ने अपने प्रेमजाल में फँसाकर ठगा था और अब उसे ब्लैकमेल करने का भी प्रयास कर रहा था। तब भी उसकी सच्चाई और असली चेहरा जानकर भी सारिका उससे दूर क्यों नहीं हो सकी! उसके साथ बिताए गए पल अब भी सारिका के लिए यादगार क्यों थे और उसके विरुद्ध वह एक शब्द भी क्यों सुनना पसंद नहीं करती थी। समीर के लिए यह प्रश्न एक अनबूझ पहेली बनकर रह गया था।

एक रात सारिका ने समीर के फोन पर अपने स्वर में रिकार्ड की हुई एक कविता भेजी—

अब उससे बात नहीं करनी, पर बात उसी की करनी है।
दिन-दिन दे दिया ऐ जिंदगी तुझे अपनी,
पर अब रात उसी की करनी है।
बख्से अगर मुफ्त में खुदा मुझे, इक हसरत खास उसी की करनी है,
मैं क्या करूँ इन दीवानों का,
मुझे बद्तमीजियाँ बरदाश्त बस उसी की करनी हैं।
बातें बेहिसाब बताना, कुछ कहते-कहते चुप हो जाना,
उसे जताना उसे सुनाना, उसे पसंद है।
वे कहता है ये आँखें खुला मयखाना हैं, दरबान बिठा लो,
हलका-हलका बस हलका सा, वे कहता है काजल लगा लो
वैसे ये मेरा शौक नहीं है, पर हाँ उसे पसंद है।
मन्नत पढ़कर नदी में पत्थर फेंकना,
मेरा जाते-जाते यों मुड़कर देखना
और वे गुजरे जब इन गलियों से,
मेरा खिड़की से छत से छुपकर देखना
वे कहता है, उसे पसंद है।
जुल्फों को खुला ही रख लेती हूँ,
उसके कुल्हड़ से ही चाय चख लेती हूँ,
मैं मंदिर में सर जब ढक लेती हूँ, वे कहता है उसे पसंद है।
ये झुमका उसकी पसंद का है और ये मुसकराहट उसे पसंद है
लोग पूछते हैं सबब मेरी अदाओं का, मैं कहती हूँ उसे पसंद है।

कविता के कथ्य को सुन-सुनकर समीर को अपने भोले पागलपन पर तरस आ रहा था। इसमें सारिका ने सुदर्शन के प्रति अपने मजाजी इश्क का बयान किया था और उसके साथ की यादों को, जिसे वह भूली न थी और न ही भूलना चाहती थी, को दुहराया था। इस कविता ने इश्क की सारी परतें खोलकर रख दी थीं। सारिका आज भी सुदर्शन से ही प्यार करती थी, न कि समीर से। वह समीर के जज्बातों से सिर्फ खेल रही थी। इसे समीर समझता भी था, परंतु उसका अपने ऊपर भी वश नहीं था।

सारिका कई बार समीर से यह भी कह चुकी थी—"समीर, मैं आज भी तुमको पहले की तरह ही प्रेम करती हूँ। बस उस फीलिंग को प्रकट नहीं करती।" इस पर समीर ने कहा था, "सारिका तुम मेरे बारे में अपने दिल की बातें लिखकर ही दे दो।" सारिका ने समीर के इस प्रस्ताव को स्वीकार करते हुए कहा था, "मैं तुम्हारे बारे में अपने दिल की बातें लिखकर तुमको अवश्य दूँगी समीर, यह मेरा वादा है।" परंतु सारिका हमेशा की तरह अपने इस वादे पर भी खरी नहीं उतरी।

जिस समीर ने सारिका से कभी झूठ नहीं बोला, धोखा नहीं दिया, हर परिस्थिति में सदैव उसके साथ खड़ा रहा, सिर्फ उसी से प्यार किया, वही समीर सारिका के लिए आज एक विलयन से ज्यादा कुछ भी नहीं था। कविता में कहे गए जज्बात से स्पष्ट था कि उसके दिल में समीर के लिए लेशमात्र प्यार नहीं था। वह उसके भोलेपन का फायदा उठाकर सिर्फ उसे बेवकूफ बना रही थी। वह कहीं और की मुसाफिर थी। समीर

का शहर तो उसके लिए रास्ते में एक पड़ाव की तरह आया था, जहाँ उसने कुछ समय विश्राम किया और फिर आगे बढ़ गई।

समीर एक धर्मभीरू इनसान था। ज्योतिष की गणना में भी उसे पूर्ण विश्वास था। अब उसे लगने लगा था कि सारिका किसी से सच में प्यार नहीं करती, बल्कि अपनी आवश्यकता की पूर्ति के लिए प्रेम का जाल बिछाती है। समीर कई बार सोचता कि यदि वह अच्छे दिल की होती और उसे किसी से दिल से प्रेम हुआ होता तो उसने अपने जीवन में कई लोगों को प्यार का झाँसा देकर उनसे रिश्ता न बनाया होता।

यह सब सोचकर समीर ने सारिका की कुंडली एक प्रकांड ज्योतिषी से दिखाई। ज्योतिषी ने सारिका के बारे में जो भी बताया, वह शत-प्रति-शत सही निकला। ज्योतिषी ने बताया था, "इस युवती में स्त्रीत्व के गुणों की कमी है, इसका चेहरा आकर्षक और बनावटी है। यह वाक्-चातुर्य में निपुण है। गुस्से में बोलने पर इसे नियंत्रण नहीं है, कुटुंब के साथ समन्वय रखना इसके लिए कठिन है। इस कन्या के बहुमित्र हैं, पर स्थायी कोई नहीं है। यह जैसी दिखती है, वैसी है नहीं और जैसी है वैसी दिखती नहीं। कन्या का मन अस्थिर है। इसके मन में एक बार में ही कई विचार आएँगे, जिनमें से सही का चयन करना इसके लिए मुश्किल होगा और इसके द्वारा लिये गए निर्णय सदैव इसके लिए आत्मघाती सिद्ध होंगे। जो भी इसका शुभचिंतक बनकर इसे सही रास्ता बताने का प्रयास करेगा, वह इसकी दृष्टि में विरोधी और दुश्मन होगा। ऐसी ही अन्य कई बातें उस ज्योतिषी ने बताईं।

सारिका समीर से दूर हो चुकी थी। उसके दूर हो जाने का कारण पूछने का मौका समीर को फिर कभी नहीं मिला। अब सारिका के लिए समीर अजनबी हो गया। वह दूर होकर भी सारिका की प्रेमाग्नि में जलता रहता था। सारिका का विवाह निर्धारित हो गया, किंतु सारिका ने समीर को आमंत्रण तक देना जरूरी नहीं समझा। पता चल जाने पर समीर विवाह के दिन उसे बधाई एवं शुभकामनाएँ देने के लिए विवाह-स्थल पर गया। सारिका जयमाल के लिए परी की तरह सजी थी और हमेशा की तरह ही खूबसूरत दिख रही थी। परंतु सारिका ने समीर से आँखें मिलाना भी उचित नहीं समझा और उसे देखकर ऐसा भाव प्रकट किया, जैसे उसने उसे पहले कभी देखा ही न हो। समीर के लिए यह जीवन की सबसे हृदयविदारक घटना थी। वह बहुत आहत हुआ और सारिका को शुभकामनाएँ देकर वहाँ से लौट आया। सारिका ने हमेशा के लिए समीर से रिश्ता तोड़ लिया।

रिश्ता समाप्त कर देने के बाद भी समीर उसे भुला नहीं पाया था। उसने सारिका से बस एक बार मिल लेने की मिन्नत की थी, ताकि वह मिलकर अपने दिल की बातें उससे कह सके। परंतु सारिका ने यह मौका भी उसे कभी नहीं दिया। समीर सदा के लिए अतीत से रिश्ता बना लेना चाहता था। दिन-प्रति-दिन समीर की आँखों के आँसू सूखते जा रहे थे। कुछ न कर पाने की मजबूरी और सारिका को न भुला पाने का अहसास ही उसे जिंदा रखे हुए थे। उसकी साँसें चलती तो थीं, पर जरा थम सी जाती थीं। वह खुद ही लिखता और मिटा देता, पर अपने जज्बात भेजने की हिम्मत जुटा नहीं पाता। उसने सारिका के साथ बिताए गए पलों को हमेशा के लिए सहेजकर रख लिया था, जिनके सहारे वह हर पल जीने का प्रयास करता। उसे अपनी मुहब्बत पर कई बार किसी शायर का कलाम याद आता था—'मोहब्बत पहली, दूसरी या तीसरी नहीं होती, मोहब्बत वही होती है, जिसके बाद मोहब्बत न हो।'

समय एक-एक दिन करके बीत रहा था। समय के साथ ही समीर भी प्रतिदिन सारिका की याद में दुनिया से कटता जा रहा था। वह हमेशा यही चाहता था कि आखिरी साँस तक उसकी यादों का तोहफा उसके दिल में रहे। समीर के दिल की अंदर वाली सफेद दीवार पर सारिका की जो एक तस्वीर टँगी थी, पास जाकर उसके अक्स को महसूस करता और उसे देखकर खुद को उसके साथ ही देखने का प्रयास करता।

सारिका को याद करते-करते एक दिन समीर ने दुनिया को अलविदा कह दिया। समीर के दिवंगत होने की खबर सुनकर सारिका उसे अंतिम बार देखने के लिए जाने से अपने को रोक न सकी। मौके पर उपस्थित लोग उसके शरीर पर टँगे जीर्ण-शीर्ण कुरते की जेब की तलाशी ले रहे थे। जेब से बस एक मटमैली सी पुरानी तसवीर व एक फटा और मुड़ा-तुड़ा कागज ही मिला। वहाँ एकत्र भीड़ में से न तो कोई उस तस्वीर को पहचान पा रहा था और न ही उस फटे कागज पर अंकित लिखे को पढ़ ही पा रहा था। सारिका ने उस तसवीर व कागज को किसी से लेकर ध्यान से देखा। वह पुरानी तसवीर सारिका की ही थी तथा उस कागज पर वर्षों पहले समीर ने सारिका के लिए ही कुछ लिखा था, जिसे कभी उसे भेजने का साहस न कर सका था। सारिका अपनी फोटो और समीर के लिखे पत्र को देखकर दहाड़ मारकर चिल्लाने लगी। वह समीर के मृत शरीर से लिपट गई और बिलखती हुई यही कहती रही कि समीर, तुम सच में मेरे ही प्यार में पागल थे। तुम मरने के बाद भी मुझसे दूर न हो सके। उपेक्षा करने पर भी तुम जीवन भर मुझको ही जीते रहे। तुम इनसान के रूप में एक देवता थे। मैं तुम्हारे जीते जी तुम्हारे समर्पित प्यार को नहीं समझ सकी और तुम मरते दम तक मुझे अपने दिल में बसाए अकेले ही फिरते रहे। तुमने सच ही कहा था—'सारिका, तुमको समीर के निश्छल प्रेम और समर्पण का अहसास कभी-न-कभी जरूर होगा, परंतु तब तक बहुत देर हो चुकी होगी।' यह कहते-कहते सारिका निश्चेत हो गई।

साअ

१६/१३२७, सेक्टर-१६ इंदिरा नगर,
लखनऊ-२२६०१६ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९८३८५३६६५१

स्वतंत्रता आंदोलन में हिंदी कवियों की भूमिका

• पुरुषोत्तम पाटील

आज जब हम स्वतंत्रता का 'अमृत महोत्सव' मना रहे हैं तो भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में साहित्यकारों के योगदान का स्मरण करना समीचीन होगा। जब हम स्वतंत्रता आंदोलन का सिंहावलोकन करते हैं, तब पाते हैं कि भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन रूपी महायज्ञ में हजारों लोगों ने अपने-अपने सामर्थ्य के अनुसार प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। जब हम साहित्यकारों की बात करते हैं तो पाते हैं कि हिंदी साहित्यकार भी इस यज्ञ में तन-मन-धन से सम्मिलित हुए हैं। जब कभी भी देश पर कोई बाहरी संकट आया है, तब कवियों ने अपने ओजपूर्ण शब्दों से जनमानस में चेतना का संचार कर विदेशी आक्रांताओं के विरुद्ध संघर्ष को बल दे राष्ट्रप्रेम के अनूठे उदाहरण प्रस्तुत किए हैं, फिर चाहे वे आक्रांता हूण, शक, यवन, मुगल, फ्रांसीसी, पुर्तगाली या फिर अंग्रेज ही हों।

स्वतंत्रता आंदोलन के पूर्व भी कवि चंदबरदाई तथा कवि भूषण राष्ट्रप्रेम की भूमिका के साथ हमारे सामने आते हैं। चंदबरदाई हिंदू सम्राट् पृथ्वीराज चौहान के राजकवि, मित्र तथा सहयोगी थे, वे हर युद्ध में सम्राट् के साथ युद्ध के मैदान में जाते थे, उनका हौसला बढ़ाते थे। अंत में वे अपने शब्द रूपी शस्त्र से मोहम्मद गोरी के वध का कारण बनते हैं, जब वे सम्राट् पृथ्वीराज को कहते हैं—

चार बाँस चौबीस गज, अंगुल अष्ट प्रमान।
ता ऊपर सुल्तान है, मत चूके चौहान॥

इसी तरह महान् कवि भूषण ने छत्रपति शिवाजी महाराज तथा ओरछा नरेश महाराजा छत्रसाल जैसे वीर राष्ट्र सपूतों के शौर्य का वर्णन कर जन-जन में राष्ट्रीय भावना का संचार किया। मुगल शासक औरंगजेब के अत्याचारों से त्रस्त जनता को यदि किसी ने दिलासा दी तो वे थे छत्रपति शिवाजी महाराज और उनकी वीरता को वाणी दी कविराज भूषण ने। 'शिवा बावनी' में महाराज शिवाजी के राष्ट्रप्रेम तथा योगदान का बखान करते हुए वे कहते हैं—

मीड़ि राखे मुगल मरोड़ि राखे पातसाह,
बैरी पीसि राखे बरदान राख्यौ कर मैं।
राजन की हद्द राखी तेग-बल सिवराज,
देव राखे देवल स्वधर्म राख्यो घर मैं॥

सुपरिचित लेखक, अनुवादक व राष्ट्रभाषा प्रचारक। अनेक पत्र-पत्रिकाओं में कहानियाँ, कविताएँ, ग़ज़लें एवं लेख प्रकाशित। आकाशवाणी से अनेक वार्ताएँ तथा कहानियाँ प्रसारित। अनेक राष्ट्रीय तथा अंतरराष्ट्रीय संगोष्ठियों में सहभागिता। संप्रति व्याख्याता-हिंदी विभाग, कवयित्री बहिणाबाई चौधरी उत्तर महाराष्ट्र विश्वविद्यालय, जलगाँव, महाराष्ट्र।

इस स्वधर्म (राष्ट्र धर्म) को बरकरार रखने का कार्य कर भारतीय राष्ट्रीय काव्य चेतना के बीजारोपण-अंकुरण का कार्य इन्हीं महान् कवियों के काव्य से हुआ है, जो आगे चलकर भारतीय स्वतंत्रता के आंदोलन के कालखंड में पल्लवित हुआ और परवान चढ़ा। आगे आने वाले समस्त राष्ट्रीय अस्मिता काव्य में कहीं-न-कहीं इनके राष्ट्रीय गान के ओज तत्त्व का अंश समाहित है, इसे हम नकार नहीं सकते।

स्वतंत्रता का समर

सन् १८५७ में सुलगी क्रांति की आग तभी बुझी, जब भारतवर्ष को १९४७ में पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त हुई। कई सदियों की दासता और अत्याचार के उपरांत भी भारतीय कवियों ने राष्ट्रीय चेतना की अपनी भूमिका को न केवल बनाए रखा, अपितु उसे और अधिक बलवती कर स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान अपनी भूमिका को तीव्र कर अपना राष्ट्र धर्म सिद्ध किया है।

सन् १८६८ के आसपास प्राचीन से नवीन के संक्रमण काल में भारतीय नवोत्थान के अग्रदूत व राष्ट्रीयता के प्रतीक कवि भारतेंदु हरिश्चंद्र राष्ट्र पटल पर उभरे, उनसे अंग्रेजों द्वारा की जा रही स्वदेश दुर्दशा देखी न जाती थी, अत: उन्होंने अपनी लेखनी से समाज को जाग्रत् करने की भूमिका निभाई। उनकी कविताओं में राष्ट्रप्रेम, भारत की विपन्नावस्था का दु:ख, स्वधर्म-स्वभाषा-स्वसंस्कृति के प्रति गौरवपूर्ण लगाव तथा विदेशियों के अन्याय और अत्याचारों के प्रति तीव्र आक्रोश छलकता था।

वे कहते हैं—

अँगरेज राज सुख-साज सजै सब भारी,
पै धन बिदेश चलि जात इहै अति ख्वारी।
रोवहुँ सब मिलि के आवहुँ भारत-भाई,
हा-हा! भारत दुर्दशा न देखी जाई॥

भारतेंदु का यह क्षोभ केवल अरण्यरुदन मात्र नहीं था, वे इस दुर्दशा के मूक दर्शक मात्र नहीं थे, वे जनता को इसका मार्ग भी सुझाते थे, ताकि भारतवर्ष को पुन: वही पुरातन गौरवशाली राष्ट्र बनाया जा सके, इसकी बानगी उनकी 'भारत जय' कविता में किए गए आह्वान में दिखाई देती है—

चलहुँ वीर उठि-तुरत सबै जय ध्वतति उड़ाऔ,
लेहु म्यान सों खड्ग खींचि रण-रंग जमाऔ।
परिकर कसि कटि उठौ धनुष पै धरि सरसाऔ,
केसरिया बाना सजि-सजि रन कंकन बाँधौ।

इसी कालखंड में हुए कविवर पं. जगन्नाथदास रत्नाकर ने इस परंपरा को जारी रखा। अपनी ओजपूर्ण काव्य रचनाओं से उन्होंने स्वतंत्रता की अलख जगाए रखी। रानी लक्ष्मीबाई के शौर्य के माध्यम से वे समाज को क्रांति की याद दिलाते हुए कहते हैं—

अचल उदंड बरि बंडनि के मंडल में,
डंड लौ अखंडल के खंडत हली गई।
झारति कृपान सौं गुमान ज्वान जंगिनी के,
फारत फिरंगिनि के फर को चली गई।

तो उधर हिंदी की सबसे मुखर कवयित्री श्रीमती सुभद्रा कुमारी चौहान भी रानी लक्ष्मीबाई की वीरता का गान गाती हुईं—

बुंदेले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसीवाली रानी थी॥

× × ×

रानी से भी अधिक हमें अब,यह समाधि है प्यारी,
यहाँ निहित है स्वतंत्रता की, आशा की चिनगारी।

जैसी रचनाओं से जन-मन के हृदयों में सुप्त स्वतंत्रता आंदोलन की आग को हवा दे रही थी। और जब वे देशहित हेतु सर्वस्व समर्पण का स्वर बुलंद करती हैं तो मानो सुप्त हृदयों में भी ज्वार सा उठने लगता है—

बढ़ जाता है मान वीर का, रण में बलि होने से,
मूल्यवती होती सोने की भस्म यथा सोने से।

इसी तरह विरह वेदना की गायिका महादेवी भी भारत माता के प्रति अपनी आस्था को रोक नहीं पातीं और उसकी जय कर उठती हैं—

भारत जननी! अंब तेरी विजय है,
गगन छू रहा हिम मुकुट शुभ्र सुंदर,
रजत-स्वर्ण किरणें रहीं हों निछावर,
विविध रंग नभ के बने छत्र तेरा,
अनिल चाँदनी का व्यजन स्नेहमय है।

इनके अलावा भी कई अनाम कवियों के गीत प्रभात फेरियों में जनता के मन में उत्साह का संचार करते थे—

वदनी-जननी! तुझे मुक्त कर देंगे,
शृंखलाएँ ताप के डर से गलेंगी,
भित्तियाँ यह लौ की रज में मिलेंगी,
रक्त से अपने खिलाकर लाल बादल,
तिमिर अब हम उषा का आरक्त कर देंगे।

यह तत्कालीन कवियों की निस्सीम राष्ट्रवादी भूमिका के चलते ही हो रहा था कि वे स्वतंत्रता समर के पथ पर जाते वीरों के कदमों में एक नई ऊर्जा का संचार कर रहे थे। इसके अलावा स्वामी दयानंद, गुरुदेव रवींद्रनाथ टैगोर, स्वामी विवेकानंद जैसे महापुरुषों ने भी अपनी लेखनी और वाणी से भारत जन का यथोचित मार्गदर्शन किया। स्वामी विवेकानंद के अंग्रेजी काव्य 'सॉन्ग ऑफ द संन्यासी' का बड़ा ही मार्मिक अनुवाद कविवर्य पंत ने किया है, जिसमें एक ही भाव है, एक ही मंत्र है, एक ही ध्येय है कि किसी भी तरह दासता का यह कुपर्व समाप्त होना चाहिए—

तोड़ो सब शृंखला, उन्हें निज जीवन बंधन जान,
हो उज्ज्वल कांचन के अथवा क्षुद्र धातु के म्लान,
प्रेम-घृणा, सद-असद, सभी ये दवंद्वों के संधान।
दास सदा ही दास, समादृत वा ताड़ित, परतंत्र,
स्वर्ण निगड़ होने से क्या वे सुदृढ़ न बंधन यंत्र?
अत: उन्हें सन्यासी तोड़ो, छिन्न करो, गाओ मंत्र,
ओम तत्सत ओम।

स्वयं पंतजी भी अपनी 'स्वर्ण धूलि' कविता में यही जयगान करते हैं—

चिर प्रणय यह, पुण्य अहन, जय गाओ सुरगण,
आज अवतरित हुई चेतना भू पर नूतन।
नव भारत फिर चीर युगों का तमस आवरण,
तरुण अरुण सा उदित हुआ परिदीप्त कर भुवन।
सभ्य हुआ अब विश्व सभ्य धरणी का जीवन,
आज खुले भारत के संग भू के जड़ बंधन।

तो इसी तरह दूसरी ओर—

पाएँगे पवित्र परिधान, पाप होंगे दूर
जब परदेशी-वस्त्र ज्वाला में जलाएँगे।

की घोषणा देने वाले, कई बार बंदी बनाए जाने के उपरांत भी, कभी छिपकर, कभी भूमिगत रहकर भी अपने लक्ष्य से कभी विचलित नहीं होने वाले कवि श्यामलाल गुप्ता 'पार्षद' अपनी 'असहयोग कर दो', 'परतंत्रता की गाँठ', 'भारत संतान', 'राष्ट्रीयता', 'आजादी आ रही है' इत्यादि कविताओं से अलख जगा रहे थे।

जब प्रात: फेरियों में निकले भारत वासी गर्व से तिरंगे को फहराते हुए चलते थे तो उनके कंठ से एक ही स्वर निकलता था—

विजयी विश्व तिरंगा प्यारा, झंडा ऊँचा रहे हमारा,
सदा शक्ति बरसाने वाला, वीरों को हरषाने वाला।

शांति सुधा सरसाने वाला, मातृभूमि का तन-मन सारा।
झंडा ऊँचा रहे हमारा।

उनके इस झंडा गीत को भला कौन भुला सकता है, तो 'प्रसाद' के इस प्रयाण गीत की पुकार मानो अचेत को भी झंकृत कर देती है—

हिमाद्रि तुंग शृंग से,
प्रबुद्ध शुद्ध भारती।
स्वयंप्रभा समुज्ज्वला,
स्वतंत्रता पुकारती॥
अमर्त्य वीर पुत्र हो, दृढ प्रतिज्ञ सोच लो।
प्रशस्त पुण्य पंथ है, बढ़े चलो बढ़े चलो॥

सन् १९३१ में बंगाल के बरहमपुर जेल में बंदी कवि जगदंबा प्रसाद मिश्र 'हितैषी' कथनी और करनी को चरितार्थ करते हुए कह रहे थे—

ऐ उर के जलते उच्छ्वासों जग को ज्वलदांगार बना दो,
क्लांत स्वरों को, शांत स्वरों को, सबको हाहाकार बना दो,
सप्तलोक क्या भुवन चतुर्दश को, फिरकी सा घूर्णित कर दो,
गिरि सुमेर के मेरुदंड को, कुलिश करों से चूर्णित कर दो,
शूर क्रूर इन दोनों ही को, रणशय्या पर शीघ्र सुला दो।

कवि गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही' तो उस व्यक्ति को मृतक ही समझते हैं, जिसके मन में अपने देश के प्रति प्रेम-लगाव न हो—

जिसको न निज गौरव तथा निज देश का अभिमान है,
वह नर नहीं नर पशु निरा और मृतक समान है।

और उसे एक निर्जीव पत्थर से अधिक नहीं मानते—

जो भरा नहीं है भावों से,
बहती जिसमें रसधार नहीं।
वह हृदय नहीं है पत्थर है,
जिसमें स्वदेश का प्यार नहीं।

कई कविताएँ ऐसी हैं, जिनकी रचना विभिन्न आंदोलनों में सहभागी सत्याग्रहियों हेतु की गई थी, जिससे उनमें निरंतर उमंग-उत्साह व त्याग-बलिदान की भावना का संचार होता रहे। कवि 'मैथिलीशरण गुप्त' ने बारदोली सत्याग्रहियों की विजय पर उसकी तुलना हल्दी घाटी से की है—

ओ विश्वस्त बारदोली! ओ भारत की धर्मापोली,
नहीं-नहीं फिर भी सशस्त्र थी ग्रीक सैनिकों की टोली,
हल्दी घाटी के रण की वही पूर्व परिपाटी थी,
बढ़-बढ़कर बैरी की सेना वीरवरों नें काटी थी।

वहीं 'साकेत' में रावण द्वारा अपहृत सीता माता को भारत की स्वातंत्र्य लक्ष्मी के रूप में साकारित करते हुए अपना संदेश जनमन तक पहुँचाते हुए कहते हैं—

भारत लक्ष्मी पड़ी राक्षसों के बंधन में,
सिंधु पार वह बिलख रही है व्याकुल मन में।

हर कोई माता की इस व्याकुलता को महसूस कर रहा था, स्वयं भी विचलित था कुछ करना चाहता था तभी 'निराला' झकझोरते हुए कहते हैं—

जागो फिर एक बार,
समर में अमर का प्राण।
गान गाए महासिंधु से,
सिंधु-नद-तीरवासी।
सैंधव तरंगों पर,
चतुरंग चमू संग।

इसके उपरांत भी जो नहीं चेत पाए, उनका आह्वान करते शिवमंगल सिंह 'सुमन' का स्वर सुन कइयों का खून खौल उठता है—

आओ वीरोचित कर्म करो,
मानव हो तो कुछ शर्म करो।
यों कब तक सहते जाओगे,
इस परवशता के जीवन से,
विद्रोह करो-विद्रोह करो।

और इस विद्रोह के आह्वान से भी काम न बनता देख राष्ट्रकवि बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' मर्म-भेदक शब्दों से हुंकार भरते हुए अपने कवि कुनबे से कहते हैं—

कवि कुछ ऐसी तान सुनाओ, जिससे उथल-पुथल मच जाए,
एक हिलोर इधर से आए, एक हिलोर उधर से आए,
प्राणों के लाले पड़ जाएँ, त्राहि-त्राहि रव-नभ में छाए,
नाश और सत्यानाशों का धुआँधार जग में छा जाए।

महाकवि दादा माखनलाल चतुर्वेदी 'एक भारतीय आत्मा' के नाम से जाने जाते थे। अटूट देशप्रेम से उपजे उनके ओजपूर्ण शब्द क्रांति का सामर्थ्य रखते थे, दादा स्वयं जीवन भर स्वतंत्रता आंदोलनों में सक्रिय रहे, कई बार जेल यात्राएँ कीं, अपना संपूर्ण जीवन मातृभूमि को अर्पित कर दिया था। उनके अथाह काव्य-सागर का प्रत्येक शब्द राष्ट्रभक्ति, त्याग, बलिदान व आत्मोसर्ग का द्योतक है। उनके काव्य का शब्द-शब्द क्रांतिकारियों के लिए बारूद और सत्याग्रहियों के लिए दृढ़ विश्वास था। स्वतंत्रता के सिपाहियों को परतंत्रता से खुलकर संघर्ष की प्रेरणा देते हुए उन्हें माँ भारती के चरणों में अपना सर्वस्व न्योछावर करने का आह्वान करते हुए वे कहते हैं—

मिले रक्त से रक्त, मने अपना त्योहार सलोना,
भरा रहे अपनी बलि से, माँ की पूजा का दोना।
हथकड़ियों वाले हाथों में, शत-शत बंदनवारें,
और चूड़ियों की कलाइयाँ, उठ आरती उतारें।

और फिर पूजा-आराधना से काम न बने तो फिर अपनी बलि हेतु भी तत्पर रहें—

तीस करोड़ धड़ों पर गर्वित, उठे तने ये सिर हैं,
तुम संकेत करो, कि हथेली पर शत-शत हाजिर हैं।

क्योंकि दासता में लिप्त इस नश्वर जीवन का एक ही लक्ष्य होना चाहिए—

मुझे तोड़ लेना बनमाली, उस पथ पर देना तुम फेंक,
मातृभूमि पर शीश चढ़ाने, जिस पथ जावें वीर अनेक।

क्योंकि दासता से बढ़कर दुर्भागी जीवन हो ही नहीं सकता, फिर चाहे वह दासता स्वयं ईश्वर की ही क्यों न हो—

इसके बाद विदेशी शासन, हो चाहे जगदीश्वर का,
वह स्वराज्य कहला न सकेगा, हो अपना, अपने घर का।
अपने पैरों पर चल पड़ना है, असहयोग व्रत ठान चलो,
हो जाओ आजाद, मर मिटो, दो दिन के मेहमान चलो।

बंदी कवि जगदंबा प्रसाद मिश्र 'हितैषी' की ये पंक्तियाँ किस हिंदुस्तानी के दिल को ना झकझोर दें—

उरूजे कामयाबी पर कभी हिंदोस्ताँ होगा
रिहा सैयाद के हाथों से अपना आशियाँ होगा।

चखाएँगे मजा बरबादिए गुलशन का गुलचीं को
बहार आ जाएगी उस दम जब अपना बागबाँ होगा।

ये आए दिन की छेड़ अच्छी नहीं ऐ खंजरे कातिल
पता कब फैसला उनके हमारे दरमियाँ होगा।

जुदा मत हो मेरे पहलू से ऐ दर्दे वतन हरगिज
न जाने बाद मुर्दन मैं कहाँ औ तू कहाँ होगा।

वतन की आबरू का पास देखें कौन करता है
सुना है आज मकतल में हमारा इम्तिहाँ होगा।

शहीदों की चिताओं पर लगेगें हर बरस मेले।
वतन पर मरनेवालों का यही बाकी निशाँ होगा।

कभी वह दिन भी आएगा जब अपना राज देखेंगे
जब अपनी ही जमीं होगी और अपना आसमाँ होगा।

समग्र रूप में देखें तो संपूर्ण भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में कवियों की भूमिका देशभक्ति, त्याग और बलिदान की भावना से ओतप्रोत थी। इनके शब्दों से ऊर्जा पाकर सुप्त हृदयों में भी क्रांति की लहरें हिलोरें लेने लगती थीं, इस कालखंड में इन कवियों ने एक मार्गदर्शक तथा प्रेरक की भूमिका निभाकर स्वतंत्रता पथ पर आगे बढ़ते असंख्य वीरों का पथ प्रदर्शन किया और उन्हें एक लक्ष्य देकर ध्येय प्राप्ति की ओर उन्मुख किया।

अंत में इन सभी के लिए कवि 'दिनकर' के शब्दों में यही कहा जा सकता है—

जला अस्थियाँ बारी-बारी,
चटकाई जिनमें चिनगारी,
जो चढ़ गए पुण्यवेदी पर,
लिए बिना गरदन का मोल।
कलम, आज उनकी जय बोल।

इस विवेचन में जिनका उल्लेख किया गया है, उनके अलावा भी ऐसे हजारों-लाखों ज्ञात-अज्ञात स्वतंत्रता के अनाम सिपाही हैं, जिनके नाम भी संभवत: किसी को ज्ञात न हों, किंतु ये सब वही हैं, जिनके आत्मोत्सर्ग के चलते ही आज हम सभी यों मुक्त होकर साँस ले रहे हैं। माँ भारती के ऐसे समस्त अनाम वीरों को भी कोटि-कोटि नमन!

व्याख्याता हिंदी विभाग
कवयित्री बहिणाबाई चौधरी
उत्तर महाराष्ट्र विश्वविद्यालय
जलगाँव-४२५००१ (महाराष्ट्र)
दूरभाष : ९३२६२०३२७७
drpbpatil73@gmail.com

मजदूर और कवि

कविता

● चंद्रकांत गुप्ते

मैं खो जाता हूँ
ऊँचे पेडों के घने जंगल में।
मैं गुम हो जाता हूँ
हरियाली राहों के लपेट में।
चाँदनी रातों के दरिया में
मैं बह जाता हूँ।

यह सूरज आता
कड़ी धूप की किरणें लेकर।
भूख, प्यास और दुनियादारी
मुझे निभानी, करके मजदूरी।

मैं घायल हो जाता हूँ
यह स्वप्न-सत्य के संघर्ष में
एक बहुरूपी हूँ मैं
जो दिन में है मजदूर, रात में कवि।

बिल्डिंग नं. डी-२, प्लाट नं-२, शिरीन गार्डन,
अपोजिट आईटीआई, नियर परिहार चौक,
औध, पुणे-४११०६७ (महा.)
दूरभाष : ९९२२४२६८२३

पानी की आत्मकथा

● राकेश चक्र

प्रिय मित्रो! मैं पानी हूँ, जिससे आप अपनी प्यास बुझाते हैं। बल्कि प्यास ही क्या नहाना-धोना, खाना-पीना आदि से लेकर सब कुछ मुझसे ही तो करते हैं। तपती गरमी में तो मैं शरीर के लिए रामबाण हूँ। तभी मुझे लोग 'अमृत' भी कहते हैं, अमृत इसलिए कि मेरे बिना पृथ्वी के प्राणियों का जीवन असंभव है। वैसे मेरे बहुत सारे पर्यायवाची शब्द भी हैं—नीर, जल, द्रव्य आदि और इंग्लिश में वाटर भी कहते हैं। आपके जिस शरीर का निर्माण हुआ है उन पंचतत्त्वों—अग्नि, वायु, आकाश, पृथ्वी और मैं पानी प्रमुख अंग हूँ, अर्थात् आपके पूरे शरीर का ६० प्रतिशत से अधिक भाग मैं ही होता हूँ।

वैज्ञानिक भाषा मैं एक रासायनिक पदार्थ हूँ। UPAC के अनुसार मेरा नाम ओक्सीडेन है।

IUPAC (International Union of Pure and Applied Chemistry) नामकरण रसायनों का नाम रखने की प्रणाली है, जिससे केमिस्ट्री की व्याख्या करने में मदद मिलती है।

साथ ही मुझ पानी को 'डाइहाइड्रोजन मोनो ऑक्साइड', 'हाइड्रोजन हाइड्रॉक्साइड' के वैज्ञानिक नाम से भी जाना जाता है। मुझ पानी का रसायनिक सूत्र H_2O (एचटूओ) है। मेरे एक अणु में दो हाइड्रोजन के परमाणु और एक ऑक्सीजन का परमाणु मिलकर जुड़ा रहता है। अर्थात् दो भाग हाइड्रोजन और एक भाग ऑक्सीजन मिलकर मैं पानी बनता हूँ। मैं शुद्ध पानी स्वाद में फीका होता हूँ।

मैं पूरी सृष्टि के जीवों का जीवन होते हुए अर्थात् इतना पॉपुलर होते हुए भी मुझे अपनी आत्मकथा इसलिए लिखनी पड़ रही है कि अधिकांश बच्चे और मनुष्य मेरी अनमोल कीमत को नहीं समझ रहे हैं, मेरा दुरुपयोग निरंतर कर रहे हैं, इसलिए मेरा पृथ्वी से जलस्तर नीचे की ओर बढ़ता ही जा रहा है, अर्थात् रसातल की ओर चला जा रहा है और जल्दी ही ऐसा समय आनेवाला है कि पृथ्वीवासी बूँद-बूँद को तरसेंगे, तब पश्चात्ताप कर कहेंगे कि हमसे बहुत बड़ी भूल हो गई। तब से तो और ही अधिक मुझ पानी की बरबादी बढ़ गई है, जब से घर-घर में समरसेबिल लगने का चलन बढ़ा है अर्थात् भौतिक विकास का पहिया घूम रहा है। तब से तो लोग घोर मनमानी करने में शान और मान समझ रहे हैं। मेरे शुभचिंतक तो इस मनमानी पर बहुत चिंतित हैं, लेकिन करें भी तो बेचारे क्या करें, बस मुझ बहते पानी को बचाने के लिए वह लोगों की घरों की घंटियाँ बजा के जगा देते हैं या उनको मोबाइल पर सूचना दे देते हैं कि आपकी टंकी भर गई है, कृपया मोटर बंद कर दें, कुछ तो इतने अभिमानी हैं कि इसका भी बुरा मानकर कहते हैं कि तुमको क्या परेशानी है, बिजली हमारी और पानी हमारा। और तो और, ऐसे मेरे शुभचिंतकों को वे अपना शत्रु समझते हैं।

सुपरिचित लेखक। विविध विधाओं में लगभग सौ पुस्तकें प्रकाशित। संस्कृति मंत्रालय के 'बाल साहित्यश्री सम्मान' सहित अन्य कई सम्मानों से सम्मानित। यू.पी. पुलिस के इंटेलिजेंस विभाग से सेवानिवृत्त। संप्रति एक्यूप्रेशर की निशुल्क चिकित्सा सेवा में रत।

मैं पानी हूँ और ऐसे लोगों को चेतावनी दे रहा हूँ कि सुधर जाओ वरना एक दिन बूँद-बूँद को तरसा दूँगा। सब तुम्हारी मनमानी धरी की धरी रह जाएगी।

ऐसा भी नहीं है कि सब लोग मनमानी ही कर रहे हों, कुछ लोग मुझे बहुत सोच समझकर खर्च कर रहे हैं। कई शुभचिंतक तो वर्षा का जल भी सहेजकर कार्य में लेते हैं। पोंछा लगने के बाद जो पानी बचता है उसे पौधों में डालते हैं, आरओ से निकले अवशेष पानी से पोंछा लगवाते हैं या बरतन धोने या कपड़े धोने के कार्य में लेते हैं। बल्कि कुछ तो ऐसा भी करते हैं कि कपड़े धोने के लिए बहुत पानी की आवश्यकता पड़ती है। पहले तो साबुन या पाउडर डालकर कपड़ों को रगड़ते हैं, फिर उन्हें पानी से धोते हैं। कुछ पानी तो कपड़ों की गंदगी के साथ निकल जाता है और सबसे बाद में कुछ पानी ऐसा बचता है, जिसे लोग अकसर फेंक देते हैं, उस पानी से वाशबेसिन और फर्स की धुलाई या पोंछा अच्छे से लग जाता है।

मुझ पानी के सच्चे दोस्त एक दादाजी हैं, जो मेरी बचत कुछ इस प्रकार करते हैं आप भी चकित रह जाएँगे। मुझे सहेजने और बचाने के लिए वह अपने पड़ोसियों को भी प्रेरित करते रहते हैं—

उन्हीं के शब्दों में—"मैं पानी की बचत कैसे करता हूँ।"

"मैंने देखा, मेरा एक पड़ोसी पानी का स्विच ऑन करके भूल जाता है, बल्कि दिन में एक बार नहीं, बल्कि कई-कई बार। सदस्य दस के आसपास, लेकिन सभी बादशाहत में जीने वाले, देर से सोना और देर से जगना। ऐसे ही कई बादशाह और भी पड़ोसी हैं, जो पानी की बरबादी निरंतर करने में गौरव का अनुभव कर रहे हैं। मैं कई बार उन्हें फोन करके बताता हूँ, तो कभी आवाज लगाकर जगाता हूँ। उनमें कुछ बुरा मानते हैं तो अब उनके कान पर जूँ रेंगाना बंद कर दिया है। सब कुछ ईश्वर के हवाले छोड़ दिया है कि जो करा रहा है वह ईश्वर ही तो है, क्योंकि वे सब भी तो उसकी संतानें हैं। उनमें भी जीती जागती आत्माएँ है, जो पानी बहाकर और बिजली फूँककर आनंदित होती हैं। पानी की बरबादी करने में दो ही बात कदाचित हो सकती हैं कि या तो वे बिजली का प्रयोग चोरी से कर रहे हैं या उन्हें दौलत का मद है। खैर, जो भी हो, लेकिन मुझे पानी की झरने जैसी आवाजें सुनकर ऐसा लगता है कि यह पानी का झरना मेरे सिर पर होकर बह रहा है, जो मुझमें शीत लहर सी फुरफुरी ला रहा है। मैं उनकी दृष्टि में बुरा बनकर भी पानी को बचाने का अथक प्रयास करता रहता हूँ। थकता नहीं हूँ।

पता नहीं क्यों मैं पानी की बचत करने की हर समय सोचा करता हूँ। बल्कि, पानी की ही क्यों, मैं तो पंच तत्त्वों को ही संरक्षित और सुरक्षित करने के लिए निरंतर मंथन किया करता हूँ। बस सोचता हूँ कि ये सभी शुद्ध और सुरक्षित होंगे तो हमारा जीवन भी आनंदित रहेगा। वर्षा होने पर उसके जल को स्नान करनेवाले टब और कई बाल्टियों में भर लेता हूँ। उसके बाद उस पानी से पौधों की सिंचाई, स्नान, शौचालय आदि में प्रयोग कर लेता हूँ। अबकी बार तो मैंने उसे कई बार पीने के रूप में भी प्रयोग किया। जो बहुत मीठा और स्वादिष्ट लगा। टीडीएस नापा तो ४०-४१ आया। जबकि जो जमीन का पानी आ रहा है, उसका टीडीएस ४०० के आसपास रहता है। क्योंकि जमीन में हमने अनेकानेक प्रकार के केमिकल घोल दिए हैं। लगातार घोले जा रहे हैं। कपड़े भी साबुन की बजाय रेह से धुलते थे, जो जमीन का ही एक तरह प्राकृतिक साबुन था। मेरे गाँव के कुएँ का जल भी वर्षा के जल की तरह मीठा और स्वादिष्ट होता था, अब इधर ४० वर्षों में क्या हुआ होगा, मुझे नहीं मालूम।

सेवानिवृत्त के बाद कपड़ों की धुलाई घर में मशीन होते हुए भी मैं हाथों से करता हूँ, ताकि शरीर भी फिट रहे और पानी भी कम खर्च हो। बल्कि सर्विस में रहने के दौरान भी यही क्रम चलता रहा, तब कभी मेरे साथ धुलाई मशीन नहीं रही।

कपड़ों से धुले हुए साबुन के पानी को कुछ तो नाली की सफाई में काम में लेता हूँ और शेष पानी से जहाँ गमले रखे हैं, अर्थात् छोटा सा बगीचा है, उसके फर्स की धुलाई भी करा देता हूँ। कई प्रकार के हानिकारक कीट पानी के साथ बह जाते हैं और बगीचा भी ठीक से साफ हो जाता है।

आरओ से शुद्ध पानी होने पर जो गंदा पानी निकलता है, उसे मैं शौचालय में या कपड़े धोने में या पोंछे आदि में प्रयोग करता हूँ। आरओ का प्रयोग घर-घर में हो रहा है, अब सोचिए, लाखों लीटर पानी बिना प्रयोग करे ही नालियों में बहकर बरबाद किया जा रहा है। लेकिन मैं उसकी भी बचत करता हूँ। मुझे ऐसा करके सुख मिलता है।

स्नान मैं सावर से भी कर सकता हूँ और काफी देर तक कर सकता हूँ, लेकिन मैं नहीं करता, बस एक बाल्टी पानी से ही अच्छी तरह रगड़-रगड़कर नहाता हूँ, नहाते समय जो पानी फर्स पर गिरता है, उससे भी बनियान आदि या रसोई का मैला कपड़े धो लेता हूँ। प्राय: नहाने के लिए साबुन प्रयोग नहीं करता हूँ। बाल कटवाने पर महीने में एकाध बार ही करता हूँ, वैसे मैं बाल और मुँह आदि धोने के लिए आँवला पाउडर और ताजा एलोवेरा प्रयोग करता हूँ। स्नान करने के बाद कमर को तौलिए से अच्छे से रगड़ता हूँ, ताकि पीठ की ७२ हजार नस नाड़ियाँ जाग्रत् होकर सुचारु रूप से अपना काम करती रहें।

सब्जी, फल आदि को धोने के बाद जो पानी बचता है, उसे भी मैं शौचालय आदि में प्रयोग कर लेता हूँ।

घर में लोग दाल बनाते हैं, तो उसे कई बार धोते हैं और पानी फेंकते जाते हैं। मैं एकाध बार थोड़े पानी से धोकर, उसे पकाने से दो-तीन घंटे पहले भिगो देता हूँ, वह जब अच्छी तरह फूल जाती है, तब उसे धोकर स्टील के कुकर में धीमी आँच पर पकाने रख देता हूँ, इस तरह दाल एक दो सीटी आने तक अच्छी तरह पककर तैयार हो जाती है। गैस का खर्च आधा भी नहीं होता है। इस तरह पानी और गैस दोनों ही कम व्यय होते हैं। इसी तरह-तरह मैं सब्जियाँ बनाते समय करता हूँ कि पहले सब्जी को अच्छे से धोता हूँ, फिर उसे छील काटकर बनाता हूँ, इस तरह पानी भी कम खर्च होता है और सब्जी के विटामिंस भी सुरक्षित रहते हैं। उसे धीमी आँच पर पकाता हूँ, अकसर लोहे की कड़ाही या स्टील के कुकर का प्रयोग करता हूँ, ताकि पकाने में उपयोगी तत्त्व मिलें, क्योंकि एलुमिनियम आदि के कुकर या कड़ाही, पतीली आदि बरतनों में पकाने से एलुमिनियम के कुछ-न-कुछ हानिकारक गुण सब्जी या दाल में अवश्य समाहित हो जाते हैं, जो धीमे जहर का काम कर रहे हैं, कैंसर जैसी बीमारियाँ बढ़ने का एक बहुत कारण यह भी है, जिसे हम कभी नहीं समझना चाहते हैं। क्योंकि अंग्रेजों ने सबसे पहले इसका प्रयोग भारतीय जेलों में रसोई में प्रयोग करने के लिए इसलिए किया था कि देश स्वतंत्रता दिलाने वाले भारतीय जेलों में ही बीमार होकर जल्दी मर जाएँ। इस देश में तो रसोई में मिट्टी, लोहे, पीतल, काँसा आदि के बरतनों का प्रयोग होता था, जो शरीर के लिए बहुत उपयोगी थे। जब से एलुमिनियम का चलन बढ़ा है, तभी से नए-नए रोगों की भरमार है।

मैं सड़क राह चलते, रेलवे स्टेशन आदि कहीं पर भी खुली टोंटियाँ

देखता हूँ, तो रुककर उन्हें बंद कर देता हूँ। मकान में जब कभी कोई टोंटी आदि खराब होती है, उसे तत्काल ही ठीक करने के लिए प्लंबर बुलाकर ठीक कराता हूँ।

मेरा संकल्प रहता है कि पानी का दुरुपयोग मेरे स्तर से न हो, उसका सही सदुपयोग हो। जो भी लोग मेरे संपर्क में आते हैं, चाहे वह कामवाली हों या कोई अन्य तब मैं उन्हें जागरूक कर समझाता हूँ कि पानी जीवन के लिए अमृत तुल्य होता है, इसका दुरुपयोग जो भी लोग करते हैं उन्हें ईश्वर कभी भी क्षमा नहीं करते हैं। बल्कि पानी के साथ-साथ हमें पंच तत्त्वों का संरक्षण भी अवश्य करते रहना चाहिए। मैं तो इन्हें सुरक्षित एवं संरक्षित करने लिए निरंतर प्रयास करता रहता हूँ।"

हमारे जानने वाले एक दादाजी की कहानी आपने सुनी कि वह किस तरह दैनिक जीवन में मुझ पानी की बचत करते हैं।

मैं अब और विस्तार से बताता हूँ कि मैं आपके शरीर के लिए क्यों उपयोगी हूँ?

जी हाँ, मुझ शुद्ध पानी के औषधीय गुण भी हैं, प्रत्येक मनुष्य को मुझे प्रतिदिन तीन से चार लीटर तक अवश्य पीना चाहिए। मुझमें कोई कैलोरी नहीं होती है अर्थात् मैं निरापद हूँ, सभी के लिए हितकारी हूँ।

मैं शरीर के लिए कितना आवश्यक हूँ कि शरीर के हर अंग की कार्यप्रणाली मुझ पानी पर ही निर्भर करती है। कान, नाक और गले के ऊतकों को पर्याप्त नमी मुझ पानी से ही मिलती है। मैं ही शरीर के तापमान और क्रियाओं को संतुलित रखने के साथ ही मैं शरीर के हानिकारक (विजातीय) तत्त्वों, अर्थात् टॉक्सिनस को बाहर निकाल कर पोषक तत्त्वों व ऑक्सीजन पूर्ति करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता हूँ।

मैं ही ऊर्जा के स्तर को बनाए रखकर कोशिकाओं के अंदर और बाहर पानी का प्रवाह ऊर्जा उत्पन्न करता हूँ। यह ऊर्जा के दूसरे स्रोतों के साथ शरीर में उत्पन्न हो जाती है। यदि शरीर में मुझ पानी की कमी होगी तो ऊत्तक सूखने लगेंगे तथा शरीर की वास्तविक रासायनिक गतिविधियाँ घट जाएँगी। तब शरीर की वसा को जलाने अर्थात् सही उपयोग करने और शारीरिक कार्य करने के लिए ऊर्जा नहीं मिल पाती है। इसलिए मुझे प्रतिदिन पर्याप्त मात्रा में घूँट-घूँट करके अवश्य पीना चाहिए।

मुझे पर्याप्त मात्रा में पीते रहने शरीर का पाचन तंत्र स्वस्थ रहता है। कब्ज की समस्या नहीं होती है। जब मैं शरीर को पर्याप्त मात्रा में नहीं मिलता हूँ, तब बड़ी आँत में मेरा स्तर कम हो जाता है और पाचन संबंधी समस्याएँ हो जाती हैं।

मैं पानी शरीर के अंगों को सफाई करने का कार्य भी करता हूँ। जो लोग मुझे गरम करके सुबह को पेट भर के प्रयोग करते हैं, मैं शरीर के विजातीय तत्त्वों पसीने, मल-मूत्र के द्वारा बाहर निकाल कर आमाशय, किडनी, छोटी आँत, बड़ी आँत आदि सभी अंगों की सफाई कर देता हूँ।

जो भी लोग ऐसा करते हैं उनके ९० प्रतिशत रोग स्वयं भाग जाते हैं। वे जीवन भर स्वस्थ रहते हैं।

मैं पानी ही शरीर के तापमान को नियंत्रित रखता हूँ और ठंडक प्रदान करता हूँ। जो लोग शरीर को स्वस्थ रखने के लिए योग, भ्रमण, शारीरिक व्यायाम या अन्य रूप से परिश्रम करके पसीना शरीर से निकाल लेते हैं, वे जीवन भर स्वस्थ और मस्त रहते हैं। ऐसा करने से शरीर का तापमान ठीक बना रहता है, साथ ही शरीर के विजातीय तत्त्व अर्थात् टॉक्सिनस बाहर निकल जाते हैं।

मुझ पानी को आप भी सहेजिए, मेरी बूँद-बूँद बचाइए, ठीक उसी तरह, जैसे इजरायल, ऑस्ट्रेलिया, सिंगापुर, चीन, जापान आदि देश जल प्रबंधन नीति अपनाकर कम वर्षा होने के उपरांत भी वर्षा की बूँदों को सहेजकर अपनी आवश्यकताओं को पूरा करते हैं। भारत तो नदियों का देश है, लेकिन यहाँ तो मेरा संकट बहुत नजर आता है, उसका कारण है कि लोग मेरा अंधाधुंध दोहन करके बरबाद कर रहे हैं। वर्षा की बूँदों को सहेज नहीं रहे हैं। एक सर्वे रिपोर्ट कहती है कि यदि वर्षा की १० प्रतिशत बूँदों को सहेज लिया जाय तो कहीं भी मेरी कमी नहीं हो सकती है। मुझे सहेजिए, वही पुरानी परंपरा शुरू करिए, अपने कुएँ, बाबड़ी, तालाबों आदि का पुनरुद्धार करिए, वर्षा के पानी को प्रबंधन कर जमीन के अंदर पहुँचाइए। अधिक से अधिक पेड़ पौधों को लगाइए। पेड़ की जड़ें ही मुझ पानी को सहेजकर रखती हैं।

मित्रो! मैंने अपनी आत्मकथा में बहुत कुछ लिख दिया है। अब सभी जाग जाइए, मुझे अपने दैनिक कार्यों में बचाइए, मेरी बरबादी रोकिए, इसके लिए कानून बनाइए, वर्षा के जल की बूँद-बूँद सहेजिए। मैं बादल बनकर बरसता और सरसता रहूँगा। मुझे बचाकर अपना जीवन खुशहाल बनाइए। मुसकराइए।

मैं पानी हूँ मुझे बचाओ
मैं तो अमरित होता हूँ
बिन मेरे सब सून है मित्रो
धरती पर सोना बोता हूँ

साअ
९०-बी, शिवपुरी,
मुरादाबाद-२४४००१ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९४५६२०१८५७
rakeshchakra00@gmail.com

पाँच मराठी कविताएँ

मूल : **वृषाली किन्हाळकर**

अनुवाद : **उमा केवळराम-देशमुख**

श्रीमती वृषाली किन्हाळकर महाराष्ट्र में एक सुपरिचित डॉक्टर और संवदेनशली कवयित्री के रूप में सुप्रसिद्ध हैं। इनके 'वेदन', 'तारी' (काव्य-संग्रह), 'सहज रंग', 'संवेद्य' (ललित लेख-संग्रह) चर्चित रहे हैं। इनकी रचनाएँ अनेक पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई हैं। इन्होंने एम.डी. (प्रसूति शास्त्र एवं स्त्री-रोग शास्त्र), एम.एस. (परामर्श और मनोचिकित्सा) की हैं। महाराष्ट्र कवि यशवंत पुरस्कार, उत्कृष्ट काव्य पुरस्कार, इंदिरा संत पुरस्कार सहित अनेक पुरस्कार से पुरस्कृत।

श्रीमती उमा केवळराम-देशमुख एक सुपरिचित अनुवादिका हैं। दिगंबरराव बिंदु महाविद्यालय, भोकर जि. नांदेड में २८ साल से हिंदी विभागाध्यक्ष रहीं। तीन पुस्तकों का मराठी से हिंदी में अनुवाद। यहाँ उनके द्वारा अनुवादित पाँच मराठी कविताएँ दे रहे हैं।

स्पष्ट होती जाती है
देह की रेखाएँ धीरे-धीरे
और
सबकुछ
समझ में आ जाता है।
कसकर बँधी हुई
मुट्ठी में से
जिंदगी
रेत की तरह
छूटती जाती है।

मिला ही नहीं
तू मुझे
कभी ऐसे।
उत्सव और त्योहारों की भीड़ में
और
मेलों के कोलाहल में,
भूखा पेट
जलते पैर,
हाथ में पूजा की थाली
और मुख से मंत्रोच्चार…
बहुत बार ऐसी
कलाबाजियाँ हो गईं,
फिर तुझसे मिलने की
इच्छा ही पिघल गई।
और फिर
अकस्मात् मिला तू मुझे
मेरे ही ऊपर के मेरे
असीम विश्वास से
मेरा इंतजार करने वाले
मेरे ही लोगों की आँखों में।
और
सुबह-सवेरे 'कराग्रे वसते लक्ष्मी'
कहते हुए जुड़े
मेरे ही हाथों की रेखाओं में।

बहुत दिनों बाद
तुझे देखकर
कदम मुझसे
बेईमान हो गए,
ठिठके
क्षणभर…
बहुत सारी वजह
तेरे पास होंगी
न आने की।
मेरे पास
सिर्फ हैं
कुछ चिनगारियाँ
यथार्थ की।

तुम्हारी तमाम
इच्छाओं का बोझ
ढोते-ढोते
मैं
भूल ही गई थी कि
मेरी पीठ भी
सीधा होना जानती है।

निरभ्र आकाश
और
दिन के तन पर लुढकती हुई
एक छुट्टी…
तेरा फोन पर खिलखिलाना
खुद में रम जाना
कभी तेरे साथ कुट्टी
पुनः फोन
और सिर्फ तुझे सुनना
यह कैसे खत्म होता गया
धीरे-धीरे… ?
अब तेरे हैलो के बाद
मुझे शब्दों को
न्योता देना पड़ता है!

साई मेन्शन अपार्टमेंट
फ्लैट नं.-२०१, पावडेवाडी नाका,
नांदेड-४३१६०२ (महा.)
दूरभाष : ९४२३६५७१४९

विष्णु प्रभाकरजी के साथ शांतिनिकेतन में कुछ दिन

● रति सक्सेना

सुपरिचित कवि, आलोचक एवं अनुवादक। हिंदी एवं अंग्रेजी भाषा में कविता-संग्रह राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित। मलयालम के अलावा विदेशी भाषाओं का अनुवाद। साहित्य अकादमी द्वारा अनुवाद पुरस्कार सहित अनेक सम्मानों से सम्मानित।

विष्णु प्रभाकरजी का नाम केरल के हिंदी प्रेमियों के बीच हमेशा से लोकप्रिय रहा है। जब मैंने हिंदी प्रचार सभा में काम करना आरंभ किया तो तत्कालीन सचिव वेलायुधन नायर के हिंदी साहित्य के प्रति अनुराग के कारण उन दिनों हिंदी प्रचार सभा में आए दिन गोष्ठियाँ आयोजित होती थीं। वहीं मेरा सर्वप्रथम परिचय प्रभाकरजी से हुआ। विशाल व्यक्तित्व के स्वामी होते हुए भी प्रभाकरजी की बाल सुलभ निश्चल हँसी और खुलकर बात करने की कला युवकों को भी आकर्षित करती थी। मुझे उनके भाषण की कुछ पंक्तियाँ आज तक याद हैं, जैसे कि युवकों को विश्व-भ्रमण जरूर करना चाहिए, चाहे इसके लिए घर से पैसे चुराकर जाना ही क्यों नहीं पड़े, चाहे जेब में पैसा भी नहीं हो। वे बताया करते थे कि 'आवारा मसीहा' के लिए शोध करते वक्त उन्होंने कितनी धूल फाँकी, कहाँ-कहाँ नहीं गए। वे अनेक विषयों पर खुलकर संवाद करते थे, जो युवाओं को भी आकर्षित करते थे।

हम लोगों की पीढ़ी के लिए 'आवारा मसीहा' कालजयी रचना रही है। हालाँकि विष्णु प्रभाकरजी की अनेक रचनाएँ दक्षिण भारत में छात्रों के कोर्स में थीं। लेकिन उनकी वक्तव्य कला, सहज व्यक्तित्व और स्पष्टवादिता सबको आकर्षित करती थी। प्रभाकरजी का अनुभव-संसार इतना विशाल रहा है कि कॉफी हाउस से लेकर कवि-सम्मेलनों के किस्से तक उनके पास थे। उन्हें सुनना बेहद ज्ञानप्रद था। हिंदी प्रचार सभा में वे माननीय अतिथि थे, हम उन्हें सुनते थे। लेकिन उनके व्यक्तित्व से रूबरू होने का सौभाग्य मुझे शांतिनिकेतन में मिला।

वर्ष २००१ के सितंबर मास की बात है, शांतिनिकेतन में स्वदेश भारतीजी का कार्यक्रम था। कुछ कार्यक्रमों में स्थान भी महत्त्वपूर्ण होता है। मुझे लगा कि शांतिनिकेतन जाने का इससे अच्छा अवसर नहीं मिल सकता है, उन दिनों सेकेंड ए.सी. का किराया मिलना ही काफी हुआ करता था। दरअसल रेल में सफर अनुभव को विस्तारित भी करता है। त्रिवेंद्रम से हैदराबाद, हैदराबाद से कोलकाता और वहाँ से शांतिनिकेतन, करीब भारत के दक्षिण से पूर्व के सफर के बाद जब मैं शांतिनिकेतन पहुँची तो झुटफटा सा छाया था। मुझे एक गेस्ट हाउस में ठहराया गया, जो काफी सुनसान लग रहा था। मैंने रिसीव करने वाले छात्र से पूछा कि अन्य साहित्यकार कहाँ हैं, तो ज्ञात हुआ कि वे दूसरे गेस्ट हाउस में टिकाए गए हैं, विष्णु प्रभाकरजी का नाम सूची में था। मैंने सोचा कि हिंदी प्रचार के परिचय के आधार पर प्रभाकरजी से मिलना तो बनता है, इसलिए मैं आयोजक मंडली के छात्र के साथ प्रभाकरजी के कमरे में जा पहुँची। मुझे बहुत आश्चर्य हुआ, जब उन्होंने मुझे न केवल पहचान लिया, बल्कि यह भी कहा कि इतनी दूर दूसरे गेस्ट हाउस में क्यों पड़ी हो, यहीं पर आ जाओ। यहाँ कोई कमरा तो खाली होगा। उन्होंने आयोजकों से पता लगाया तो कुछ कमरे इस गैस्ट हाउस में थे। मेरी खुशी का ठिकाना नहीं रहा। प्रभाकरजी के साथ निशा निशांत भी थीं, उनसे भी मेरी एक बार भेंट हो चुकी थी। निशा से मेरी पहले दिन से ही आत्मीयता हो गई, ऊपर से प्रभाकरजी का सान्निध्य सोने पर सुहागा।

अब हम साथ घूम-फिर सकते हैं और देर रात तक बातचीत कर सकते हैं।

शांतिनिकेतन का वातावरण कुछ ऐसा है कि रवींद्र टैगोर की छाप अभी भी दिखाई देती है। शांति और सरलता, दोनों मुखर होते हुए भीतर तक अनुराग से भर देती हैं।

मैं निशा और प्रभाकरजी शाम के गहराने पर भी टहलते थे। शांतिनिकेतन की कलात्मकता और कविवर की कल्पना सहज आकर्षित करती है। हर स्थान कला और कृतियों से सज्जित था। वहीं पर रवींद्रजी का संग्रहालय भी था। हम लोग बात कर रहे थे कि हिंदी में हम अपने कवियों-लेखकों को कितना सम्मान देते हैं। मैंने केरल में आशान स्मारक देखा है, जो कविवर कुमाराशान के घर पर स्थित है, वहाँ मानो साल

भर मेला लगा रहता है। आस-पास के गाँवों के लोग बार-बार आते हैं। शांतिनिकेतन में हमें वहाँ पढ़ाने वाली गरिमा श्रीवास्तव मिलीं। वे हम लोगों की गाइड बन गईं। मैंने देखा कि प्रभाकरजी हर जगह साथ चलने को तैयार रहते थे। सुबह-सवेरे वे नहा-धोकर नेहरू जैकेट और गांधी टोपी में तैयार होकर कमरे से निकलते थे। उनके परिधान में किसी तरह की अस्तव्यस्तता दिखाई नहीं देती थी। वे घंटों बोल सकते थे, स्मृति का पुंज थे। पूरे कार्यक्रम में उन्हें मंच पर किसी-न-किसी रूप में आसीन होना था, लेकिन उसके बावजूद वे हमारे साथ शाम को टहलने का मौका निकाल लेते थे।

शांतिनिकेतन कल्पनाशील मन को आंदोलित करता है। विष्णु प्रभाकरजी ने आवारा मसीहा के लिए शरतचंद्र पर बहुत शोध किया था, वे एक-एक पात्र के साथ उसके गाँव पहुँचे थे, बर्मा भी गए, और बँगला साहित्य की खाक भी छानी। प्रभाकरजी के पास अनेक कहानियाँ थीं, जिनसे शरतचंद्र की सहृदयता का पता चलता है। उन्होंने समाज की त्यक्ता स्त्रियों को विषय बनाया और उनके लिए उन्हें चरित्र भ्रष्ट भी कहा गया। लेकिन विष्णु प्रभाकर जब उन्हें आवारा मसीहा कहते हैं, उसी में अर्थ निकल आता है। रवींद्रनाथ को गुरु का स्थान दिया गया है, उनका भी अपना योगदान है, लेकिन विष्णु प्रभाकरजी ने शरत को रवींद्रनाथ के समकक्ष लाने की कोशिश की है। कई मायनों में शरत चंद्र कहानीकार के रूप में ठाकुर से बेहतर थे, क्यों कि जिंदगी को करीब से देखते थे। वे दलित कहलाने वाले समाज के पक्ष की भीतरी कहानी खोजकर लाते रहे। उनकी कहानियाँ भटकन की आवाज देती थीं। विष्णु प्रभाकरजी के साथ-साथ घूमना इसलिए भी बढ़िया होता था कि उनसे अनेक कहानियाँ सुनने को मिल जाती थीं। मुझे याद है, एक दिन हम घूमते-घूमते नदी के तट तक पहुँच गए, वहाँ पुल के पास तसवीरें खिंचवाईं। तभी वहाँ से आइसक्रीम वाला साइकिल पर निकला। मैंने कहा, चलो बर्फ की आइसक्रीम खाते हैं। अब तक मैं भी उन्हें निशा की तरह बाबाजी कहकर पुकारने लगी थी। हमने पूछा, बाबाजी, आप खाएँगे? उन्होंने बच्चों की तरह ललककर कहा, क्यों नहीं? वे भी हमारे साथ ही स्वाद लेकर चूस-चूसकर खाने लगे।

विष्णु प्रभाकरजी से मिलने बहुत से लोग आते थे, डॉ. गरिमा श्रीवास्तव तो हमेशा ही हम लोगों के साथ रहती थीं, वे शांतिनिकेतन के वर्तमान रूप के बारे में बताया करती थीं। इतने सुंदर प्रांगण का स्तर और महत्त्व कम हो रहा है, यह तो महसूस होता ही है। डॉ. मंजू रानी सिंह उसी बँगले में रहती हैं, जिसमें हजारी प्रसाद द्विवेदीजी रहा करते थे। नि:संदेह हमारे लिए इस घर की ईंट तक महत्त्वपूर्ण हो गई। हजारी प्रसाद की 'बाण भट्ट की आत्मकथा' संस्कृत और हिंदी के मध्य घूमती यह कथा कभी शूद्रक की याद दिलाती तो कभी बाणभट्ट की शैली।

उनके निबंध जीवन के साथ जुड़े रहते हैं। हम लोग इसी बात पर विचार करने लगे कि हिंदी अपने पूर्वज लेखकों को सहेजकर नहीं रख पाती, जब कि अन्य भारतीय भाषाओं में लेखकों के प्रति बहुत सम्मान रखा जाता है।

उन्हीं दिनों अमर्त्य सेन की पत्नी देवनीताजी आईं, उन्होंने आते ही विष्णु प्रभाकरजी को प्रणाम किया। उनकी पुत्री नंदिता सेन उन दिनों वहीं थी। बाबाजी का स्वभाव ही ऐसा था, वे सबसे स्नेह करते थे। वही पृथ्वीनाथजी रहते थे, जिनकी स्वदेश भारतीजी से नहीं बनती थी। संभवतया वे स्पष्ट भाषी और उग्र स्वभाव के हैं। इसलिए आयोजकों ने इंगित किया था, उनके पास न जाया जाए। लेकिन विष्णु प्रभाकरजी को जब पृथ्वीनाथजी ने भोजन के लिए आमंत्रित किया था, वे हम सब को लेकर उनके घर भोजन के लिए गए, उनका हँसमुख चेहरा सबको शांत कर देता था। हम लोगों ने छककर भोजन किया। पृथवीराजजी प्रभाकरजी से बातचीत करते रहे, कुछ शिकायतें, कुछ उलाहने भी होंगे, मैंने और निशा ने अधिक ध्यान भी नहीं दिया, क्यों कि प्रभाकरजी थे। वे सभी से समान भाव रखते थे और उनके सामने किसी की बुराई नहीं हो सकती थी।

पूरे समारोह में विष्णु प्रभाकरजी को लगभग हर गोष्ठी में अध्यक्ष बनाया था और प्रत्येक मीटिंग में उन्हें बोलना था। वे शिकायत किए बिना घंटों बोल सकते थे, हर विषय पर उनकी पकड़ थी। स्पष्ट भाषा, गहरी आवाज उनके भाषण को आकर्षक बनाती थी। उन्होंने कभी थकने की शिकायत ही नहीं की। ऐसे ही नहीं, उन्होंने बर्मा आदि देशों की भटकन भरी यात्राएँ की थीं।

दिल्ली में रहते हुए भी वे बिना नागा कॉफी हाउस जाया करते थे, लोगों को सुनते थे। उनकी प्रत्येक लेखक से आत्मीयता हो जाती थी। मुझे लगता था कि उनकी अति संवेदनशील स्वभाव के कारण कुछ लोग उनका फायदा भी उठाते थे। केरल की एक ईसाई लड़की थी, जिसने विष्णु प्रभाकरजी से अपने परिवार और समाज की अनेक शिकायतें विष्णु प्रभाकरजी से की थीं। मुझे उसका नाम याद नहीं आ रहा है, लेकिन प्रभाकरजी उसकी बात पर विश्वास कर कभी कुछ धन अपने आप देते तो कभी केरल में रहने वाले अन्य लोगों से सहायता करने को कहते। एक बार मेरे पास भी पत्र आया कि मैं उस लड़की की मदद करूँ, वह समस्या में है। तब मैंने उन्हें लिखा कि केरलीय परिस्थिति में वह लड़की ट्यूशन आदि करके अपनी समस्या का हल कर सकती है, वह क्यों बार-बार दिल्ली से पैसा मँगवाना चाहती है। शायद वे आहत हो गए, उन्होंने काफी वक्त तक खत नहीं लिखा।

मैं यही सोचती रही कि उनकी सहृदयता का न जाने कितने लोगों ने लाभ उठाया होगा। विष्णु प्रभाकरजी बताया करते थे कि उनके परिवार का खयाल उनकी पत्नी ने रखा, वे लगभग घर की समस्याओं से मुक्त रहे। पत्नी के बाद भी उनकी बड़ी बहू उनका बहुत खयाल रखती थीं। वे लंबे वक्त तक मसिजीवी रहे, इसलिए यह स्वत: समझा जा सकता है कि उनका जीवन कितना कष्टपूर्वक रहा होगा।

शांतिनिकेतन में चार-पाँच दिन साथ समय बिताने के बाद हम कलकत्ता तक साथ आए, रास्ते में हमने मजे में मूढ़ी खाई, फिर बाउल गायक आया तो उससे संगीत सुना।

शांतिनिकेतन की यात्रा बहुत मनोहर रही, उसका सबसे बड़ा कारण यह था कि विष्णु प्रभाकरजी के सान्निध्य ने भी हमें समृद्ध किया। मैंने लौटते ही एक छोटी सी कविता उनके लिए लिखी और उनके पते पर भेज दी। विष्णु प्रभाकरजी को न जाने कितने साहित्यकार पसंद करते थे, न जाने कितनों ने उनके लिए लिखा, लेकिन मेरा सौभाग्य था कि उन्होंने मेरी कविता को महात्मा गांधी विश्वविद्यालय से निकलने वाले अपने जीवन वृत्त के कवर पेज पर स्थान दिया और तुरंत मुझे अपने हाथ से खत लिखा, जो मेरे लिए किसी भी धनराशि से बड़ा है।

बाबाजी के लिए कविता इस प्रकार थी—

नव दशाब्दियों को लाँघ आए
तुम्हारे तलवों में
कोई फफोले नहीं?
संभव ही नहीं
खूबसूरती यह कि
तुमने इन्हें नासूर नहीं बनने दिया
जिया
जिंदगी को
जिंदगी भर जिया
उसी मुसकान के साथ
जो तुममें रची-बसी है।

आखिर में मैं यह कहूँगी कि जब मैं २००९ में नॉर्वे गई तो वहाँ के पुस्तकालय में कुछ हिंदी की पुस्तकें दिखाई दीं, कहने में गर्व होता है कि वे सब विष्णु प्रभाकरजी की थीं।

के.पी. ९/६२४, विजयंत, डीसीएनआरए,
सी-४८, चेत्तीकुन्नू, मेडिकल कॉलेज
पीओ, त्रिवेंद्रम-६९५०११ (केरल)
दूरभाष : ९४९७०१११०५

कविता

तेरा गीत गाऊँ, माँ

● चंद्रमणि झा

तू धरती पर की जन्नत है, तू मिनती है तू मन्नत है
तू वेदों की ऋचाएँ है, तेरी गाथा समुन्नत है
जो गिनते दाँत शेरों के तू उस बालक की माता है,
सिंधु को अँजुरी भरते तू ऋषियों की सुगाथा है
जो भारत माँ से है वैसा कहीं न प्रीत पाऊँ माँ
अकिंचन हूँ शब्दों के फिर भी तेरा गीत गाऊँ माँ!

विधाता स्वर्ग से आते, कलश-घट में समा जाते
जो विपदा भक्त पर आती तो हरि खंभे में आ जाते
चलाकर हल यहाँ राजा सुता सीता सी पा जाते,
तुम्हारे अंक में रघुवर उछलते खेलते गाते
तेरे दम पर ही जल थल नभ को पल में जीत पाऊँ माँ
अकिंचन हूँ शब्दों के फिर भी तेरा गीत गाऊँ माँ!

तू धरती का है नंदनवन विचरते ईश यदुनंदन
नर्मदा कृष्णा कावेरी नदी गंगा-यमुना संगम
यहाँ पर ब्रह्मपुत्र कोशी यहाँ दिनकर का है उद्गम,
यहाँ चारों दिशाओं में स्वयं शिव करते हैं बमबम
सभी रंगों में जी लेना तुम्हीं से सीख पाऊँ माँ
अकिंचन हूँ शब्दों के फिर भी तेरा गीत गाऊँ माँ!

तेरे सुत बन जाते भगवान् बुद्ध या महावीर वर्धमान
महाराणा कोई होता शिवाजी भारत माँ की शान
कोई लक्ष्मीबाई बनती कुँवर सिंह वृद्ध वीर बलवान,
कोई गांधी सुभाष बनता विवेकानंद संत संतान
भगतसिंह चंद्रशेखर राजगुरु अरिजीत पाऊँ माँ
अकिंचन हूँ शब्दों के फिर भी तेरा गीत गाऊँ माँ!

तेरी खातिर तेरे बेटे बरफ के बीच में सोते
रेगिस्तानों में जलते हैं कदम फिर भी नहीं थमते
तेरी सीमा की रक्षा में बिहँसकर गोलियाँ खाते,
शत्रु की छाती पर चढ़कर मारते खुद नहीं मरते
अमर हैं 'चंद्रमणि' कितने इन्हें कैसे गिनाऊँ माँ
अकिंचन हूँ शब्दों के फिर भी तेरा गीत गाऊँ माँ!

शिवसागर, वार्ड ४४, लहेरियासराय,
दरभंगा-८४६००१ (बिहार)
दूरभाष : ९४३०८२७७९५

यह मेरा दर्द है

● केदारनाथ 'सविता'

सुपरिचित कवि-लेखक। सैकड़ों कविता, कहानी एवं लेख अनेक पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित। आकाशवाणी, वाराणसी से एक कहानी प्रसारित।

परवशता

हृदय पर उभरे
प्यार के दो-चार शब्द,
परिस्थितियों के 'इंक रिमूवर' ने
उड़ा दिए।

प्रयोग

कवि को
खूब सताओ-तड़पाओ,
उसका अंतस
अधिक सुंदर काव्य रचेगा।

झूला

सावन में नहीं जरूरत
अब झूले की,
वस्तुओं के भाव-अभाव बीच
स्वत: झूलता व्यक्ति।

स्वप्न

अब कोई स्वप्न
न बनाना
टूट जाएँगे,
अब किसी कंगन को
हाथ न लगाना
खनक जाएँगे।

किसान

पहले
किसान था किसान,
अब हो रहा पिसान।

इंटरव्यू

इंटरव्यू में प्रश्न—
'वकालत का कोई अनुभव?'
उत्तर—'जी हाँ, यह डिग्री मैंने कॉलेज से कानूनन हासिल की है।'

प्रतिबिंब

कल हिंदी के दो शोध-छात्र
प्रख्यात कथाकार स्व. मुंशी प्रेमचंद के
टूटे मकान व स्मारक के पास आए
उनपर विशद अध्ययन करने की
उनमें उत्कंठा थी
किंतु अचानक
वह इस अवहेलित स्थल पर
अपना, अपने परिश्रम
और हिंदी के प्रतिबिंब देखने लगे
और कराह उठे,
फिर तुरंत कुछ सोच
दोनों शोधकार्य से
लेकर निष्काषन
ड्राइवरी सीखने लगे।

रोजी-रोटी

हड़तालियों के बीच
मंत्रीजी उन्हें समझा रहे थे—
तुम सब क्यों मेरी कुरसी
छिनवाने पर तुले हो,
मेरी रोजी-रोटी का
कुछ तो खयाल करो।

दर्द

यह मेरा दर्द है
इसे सुनो,
तुम्हारा मनोरंजन करेगा
यदि गहराई तक न समझो।

जनता के साथ

सदियों से
नारी सहती आई है
पुरुष बलात्कार,
वही दुहरा रहा है अब
शासन
बिचारी जनता के साथ।

अस्तित्वहीन

तुम और हम
क्या कर सकते हैं,
इस घुन लगे प्रजातंत्र में
सिवाय धूप सेंकने का।

डिप्लोमा

सरकारी कार्यालय में
आवश्यकता थी सफाई-कर्मचारी की
प्रकाशित विज्ञापन में
झाड़ू लगाने का डिप्लोमा
व दो वर्ष का अनुभव अनिवार्य था।

पुलिस चौकी रोड, लालडिग्गी
सिंहगढ़ गली (चिकाने टोला)
मीरजापुर-२३१००१ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९९३५६८५०६८

आपका शुभचिंतक, यमराज!

• अशोक गौतम

अबकी दफा होरी फिर मरने के लायक हुआ तो सही, पर पंडित मातादीन ने कोरोना के चलते उससे उसके घर जाकर गऊदान करवाना तो छोड़ो, अपने घर से ही मंत्र पढ़ उससे गऊदान करवाने को भी साफ इनकार कर दिया।

तब थक-हारकर गोबर ने सोचा कि क्यों न अबके पंडितजी के बदले अस्पताल के रास्ते होरी को स्वर्ग भेजा जाए। बहुत हो लिए पंडितजी के झूठे आश्वासनों के बाद स्वर्गलोक जाने के बदले फिर चौथे ही दिन होरी के जन्म लेने के किस्से।

गोबर ने बंद फैक्टरी से छुट्टी ली और होरी को अस्पताल ले आया। तब धनिया ने गोबर को होरी को शहर अस्पताल ले जाने से बहुत रोका भी, "रे गोबर! होरी पर क्यों बेकार पैसा खर्च करता है। इसको तो हर जन्म में समय से पहले मरने की आदत है। मुझे पता है, होरी जब-जब बीमार हुआ है, तब-तब इसके ठीक होने के चांस जीरो ही रहे हैं। सात जन्मों से नहीं, बीसियों जन्मों से इसके साथ रहते इसकी इस बीमारी से मैं अच्छी तरह वाकिफ हूँ।" पर गोबर नहीं माना तो नहीं माना।

होरी को घर में भी मरना था और अस्पताल में भी। सो वह अस्पताल में भी मर गया।

होरी के मरने के बाद डॉक्टर साहब ने गोबर की पीठ थपथपाकर उससे कहा, "गोबर! गुड लक! होरी चला गया! इसको अबके मोक्ष हमारे हाथों मिलना था। ज्यादा खर्च नहीं करवाया उसने तुम्हारा। वरना कई बाप तो अपने बेटों का यहाँ आकर इतना खर्च करवा देते हैं कि उन्हें अपने बाप के इलाज के लिए बैंक से लोन तक लेना पड़ता है और रोगी होते हैं कि उसके बाद भी हमारे हाथों से बच नहीं पाते। ठीक ही हुआ, उसे इस जन्म से फिर मुक्ति मिली।"

"पर डॉक्टर साहब! जो बापू थोड़ा और जी लेते तो अगला जन्म होने की पीड़ा से तो तनिक दूर रहते।"

"अब होरी का टेस्ट करना पड़ेगा।"

"मरने के बाद भी टेस्ट?"

"हाँ गोबर! आजकल मरने के बाद भी टेस्ट होते हैं। जानते नहीं, इन दिनों यमराज भी उन्हीं आत्माओं को अपने यहाँ इंट्री दे रहे हैं, जिनके पास मरने के बाद बगल में केवल उसके निगेटिव होने का सर्टिफिकेट हो।"

सुपरिचित लेखक एवं व्यंग्यकार। देश की प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में रचनाओं का निरंतर प्रकाशन।

"पर साहब! जब मर गए तो क्या निगेटिव और क्या पॉजिटिव?" गोबर ने जेब मलते हुए कहा।

"तुम नहीं जानते, इन दिनों मत्युलोक से पॉजिटिव होकर जाना कितना बड़ा अपराध है। हत्या से भी बड़ा अपराध। यमराज जीव का हर पाप क्षमा कर सकते हैं, पर उसके पॉजिटिवपन को कतई माफ नहीं कर रहे। सच पूछो तो पॉजिटिव अत्माओं की इंट्री इन दिनों यमलोक में पूरी तरह बंद है। आदमी तो आदमी, इन दिनों वहाँ पॉजिटिव भगवान् भी पूरी तरह बैन हैं।"

"मतलब?"

"कोई बात नहीं। जहाँ बेकार के टेस्टों पर इतने खर्च कर दिए, वहाँ मरने के बाद एक टेस्ट और सही। क्या हुआ जो यहाँ होरी चैन से न रह सका। इस टेस्ट के बाद कम-से-कम ऊपर तो होरी चैन से जा सकेगा। डरो मत! मरने के बाद के टेस्ट से आत्मा को कोई दर्द नहीं होता।"

…और गोबर बापू के आखिरी टेस्ट को मान गया, इस इरादे से कि जिंदा-जी जिस होरी का प्रवेश हर जगह वर्जित रहा, उसे कम-से-कम मरने के बाद यमलोक में तो बिना किसी डर के इंट्री मिलेगी।

अस्पताल वालों ने कोरोना टेस्ट के नाम पर होरी के खास-खास अंग निकाल लिये।

सदा पॉजिटिव रहने वाले होरी को ऊपर जाने से पहले टेस्ट के

ग्यारह सौ लेकर निगेटिव किया गया।

होरी को मारने के बाद डॉक्टर ने प्रसन्न होकर होरी के मरने के बाद के टेस्ट की रिपोर्ट गोबर को सौंपते कहा, "लो गोबर! अब होरी फुली निगेटिव हो गया। अब इसे यमलोक में यमलोक की कोई ताकत नहीं रोक सकती। अब निडर होकर जहाँ मन करे वहाँ घूमे। अभी जो होरी कागजों में पॉजिटिव हो मरता तो ··· तुम तो जानते ही हो कि आजकल पॉजिटिव माँ-बापों को श्रवण कुमार तक हाथ लगाने से डर रहे हैं। जाओ, अब मजे से इसका अंतिम परिष्कार करो, पर हाँ! गलती से भी इसकी बॉडी खोलना मत। भीतर से अभी भी ये पॉजिटिव ही है।" डॉक्टर साहब ने गोबर को और भी कई गैर-जरूरी हिदायतें बहुत जरूरी बताकर होरी सादर सौंप दिया।

···और होरी यमलोक को हाथ में पहली बार ग्यारह सौ में खरीदी अपने निगेटिव होने के टेस्ट की कॉपी ले हवा हो लिया, पंडित मातादीन को अँगूठा दिखाते बोला, "रे पंडित! आँखें हो तो देख, तेरे बिना भी अपना काम हो लिया।" होरी को यमलोक को हवा से बातें करते जाते देख यह सब फटी आँखें से देखते पंडितजी का गुस्सा आठवें आसमान पर। होरी में इतनी हिम्मत कहाँ से आ गई? उसके बिना ही यमलोक को रवाना हो गया? अब प्रलय आने में ज्यादा देर नहीं यजमानो! कंबख्त कहीं कोरोना मिले तो उसके श्राद्ध पर इतना खाएँ कि उसके परिवार वाले भी याद रखें कि उन्होंने मातादीन से किसी का कभी श्राद्ध करवाया था।

जाने-पहचाने रूट से होरी यमलोक में पहुँचा तो बैरियर पर हेड कांस्टेबल मातादीन के सब इंस्पेक्टर बेटे लाटादीन ने उसकी निगेटिव होने की रिपोर्ट चेक करते कहा, "और होरी! रिपोर्ट भी लाए हो या···"

"हाँ साहब! रिपोर्ट साथ में है। होरी की आत्मा ने अपनी जेब में सँभालकर रखी अपने टेस्ट की रिपोर्ट निकाली और सब इंस्पेक्टर लाटादीन की आँख पर दे मारी। उसने गौर से रिपोर्ट को देखा तो बोला, "नकली बनाकर तो नहीं ले आए? आजकल ऐसा धंधा नीचे जोरों पर है।"

"असली है बाबा असली! होरी ने आज तक नंबर दो का काम किया ही नहीं। अगर वह दो नंबर का काम करता तो एक जन्म में दस-दस बार न मरा करता।" होरी की आत्मा ने पहली बार सीना तानकर झूठ कहा और अपने टेस्ट की रिपोर्ट पर ओके का ठप्पा लगवा आगे हो ली।

अगले बूथ पर यमलोक के डॉक्टर ने ज्यों ही होरी की आत्मा के शरीर का फुल्ल चेक करने लगे तो उन्हें यह देखकर हैरानी हुई कि उसके शरीर में से कुछ कीमती अंग गायब थे। उन्होंने पूरी ईमानदारी से बार-बार होरी की आत्मा के शरीर को चेक किया, पर उसके शरीर से दिल, किडनियाँ, आँखें, लिवर सब गायब देख वे हैरान थे। आखिर अगली काररवाई के लिए यमलोक के अस्पाताल के डॉक्टर ने उसे उसकी रिपोर्ट देते कहा, "डियर! साँस तो नहीं फूल रही तुम्हारी?"

अगले बूथ पर यमलोक के डॉक्टर ने ज्यों ही होरी की आत्मा के शरीर का फुल्ल चेक करने लगे तो उन्हें यह देखकर हैरानी हुई कि उसके शरीर में से कुछ कीमती अंग गायब थे। उन्होंने पूरी ईमानदारी से बार-बार होरी की आत्मा के शरीर को चेक किया, पर उसके शरीर से दिल, किडनियाँ, आँखें, लिवर सब गायब देख वे हैरान थे। आखिर अगली काररवाई के लिए यमलोक के अस्पाताल के डॉक्टर ने उसे उसकी रिपोर्ट देते कहा, "डियर! साँस तो नहीं फूल रही तुम्हारी?"

"नहीं तो साहब! हमें नहीं पता, साँस कैसे फूलती है।" होरी की आत्मा ने हँसते हुए कहा।

"खाना-पीना सही पच रहा है क्या?"

"भरपेट खाना आज तक मिला ही कहाँ साहब! आधा-सवा जितना मिला, वह मजे से पचा ही।"

"ओके", होरी की आत्मा ने डॉक्टर से रिपोर्ट ली और अगले बूथ पर चली गई।

ज्यों ही यमलोक में यह बात आग की तरह फैली कि कोई आत्मा पहली बार बिना दिल, आँखें, किडनियाँ और लिवर के भी यहाँ सही सलामत पहुँची है तो सारे यमलोक का मीडिया होरी को देखने को बेताब हो उठा और सारे काम छोड़ होरी का मीडिया-ट्रायल शुरू हो गया।

चित्रगुप्त के थ्रू जब इस बात का पता यमराज को चला तो यमराज ने जिस अस्पताल के माध्यम से आया था, अविलंब वहाँ के डॉक्टर को विनम्र निवेदन करते नोटिस भेजा, "आदरणीय भगवान् रूपा डॉक्टर साहब!

नमस्कार! आपने जिस होरी को समय से पहले हमारी सेवा में भेजा है, उसके लिए आपका बहुत-बहुत आभार! आपकी कर्मठता, सदाशयता को हमारे लोक का सलाम!

अब आपसे एक और निवेदन है कि आपने जिस होरी को हमारे पास भेजा है, उसका दिल, किडनियाँ, आँखें, लिवर सब गायब हैं। उसने इन्हें आपको तो नहीं बेचा है कहीं? गरीब आदमी ईमानदारी के सिवाय अपना कुछ भी बेच सकता है। हो सकता है, गलती से नोटिस में दरशाए इसके अंग आपके अस्पताल में रह गए हों। गलती किससे नहीं होती? हमने तो उसको जब अपने लोक से धरती पर भेजा था तो उसको चालाकी के सिवाय सब दिया था।

अत: आपसे करबद्ध निवेदन है कि उसके आपके अस्पताल में रह गए अंग तत्काल हमारे लोक केवल और केवल कूरियर से भिजवाने की व्यवस्था करें, ताकि होरी पर आगे की काररवाई जल्द से जल्द शुरू की जा सके। आपसे आगे भी अनुरोध रहेगा कि आप जब किसी को अपने अस्पताल से हमारे यहाँ को डिस्चार्ज करें तो कृपया उसके पूरे अंगों की लिस्ट बनाकर उसके साथ सील बंद लिफाफे में भेजा करें। अनुग्रह से पूर्व आभार सहित,

आपका शुभचिंतक

यमराज।"

साअ

गौतम निवास, अप्पर सेरी रोड
नजदीक मेन वाटर टैंक,
सोलन-१७३२१२ (हि.प्र.)
दूरभाष : ९४१८०७००८९

लोकभाषाओं में लोकजीवन

● आस्था तिवारी

मनुष्य जैसे-जैसे सभ्यता की ओर बढ़ता गया, प्रकृति से दूर होता गया। प्रकृति का नैसर्गिक सौंदर्य आँखों से दूर होता चला गया और भौतिकता उस पर हावी होती जा रही है, लेकिन शांति की तलाश उसे बराबर रहती है। वह हमें मिलती है हमारी लोक-संस्कृति में। लोक-साहित्य किसी राष्ट्र की संस्कृति के दर्शन का माध्यम होता है। भगवान् राम को देखकर शबरी भाव-विभोर हो जाती है, दुनियादारी से परे होकर चख-चखकर बेर खिलाती है। प्रेम और भक्ति में डूबी शबरी के प्रेम व सरलता को देखकर वे भी अभिभूत हो जाते हैं। उसके निर्मल, निष्कपट प्रेम को देखकर वे नवधा भक्ति का उपदेश देते हैं—

नवम सरल सब सन छलहीना। मम भरोस हियँ हरष न दीना॥
नव महुं एकउ जिन्ह कें होई। नारि पुरुष सचराचर कोई॥

लोकाचार से दूर अभिमान रहित, मिथ्या आडंबर से दूर स्वाभाविकता लिये यही तो है लोकमानस की पहचान। लोकमानस में 'सर्वे भवन्तु सुखिन:' का भाव रहता है। कबीरदास ने कहा है—*'कबीरा खड़ा बाजार में, सबकी माँगे खैर, न काहू से दोस्ती, न काहू से बैर।'*

हमारा विशाल जनमानस जो स्वार्थ से परे आपस में सुख-दु:ख बाँटता, सामाजिक और सांस्कृतिक सूत्र से आपस में जुड़ा रहता है। किसी से अत्यंत निकटता दिखाए बगैर सभी की खैरियत की दुआ करता है।

'लोक' शब्द का अर्थ

'लोक' शब्द से ही 'लोग' शब्द की व्युत्पत्ति मानी जाती है, जिसका तात्पर्य है—सर्व साधारण जनता। डॉ. वार्कर ने 'फोक' अर्थात् 'लोक' शब्द की व्याख्या करते हुए लिखा है कि फोक शब्द से सभ्यता से दूर रहने वाली किसी पूरी जाति का बोध होता है। महाभाष्यकार पतंजलि ने भी जनसाधारण के अर्थ में 'लोक' शब्द का व्यवहार किया है। महर्षि व्यास ने महाभारत ग्रंथ को सामान्य जनता के ज्ञान चक्षु खोलने वाला ग्रंथ कहा है। हिंदी के सुप्रसिद्ध विद्वान् हजारीप्रसाद द्विवेदीजी ने 'लोक' शब्द का अर्थ जनपद या ग्राम्य में सीमित न करके नगरों व गाँवों की समस्त जनता से लिया है, जो व्यावहारिक ज्ञान से सरोकार रखती है।

सुपरिचित लेखिका। विभिन्न राष्ट्रीय शोध-पत्रिकाओं एवं पुस्तकों में शोध-पत्रों का प्रकाशन, विभिन्न समाचार-पत्रों एवं पत्रिकाओं में रचनाओं का प्रकाशन। संप्रति सहायक प्राध्यापक (हिंदी), शा. नवीन महाविद्यालय, बेरला (बेमेतरा)।

हिंदी व लोकभाषाओं में निहित लोकजीवन

विष्णु खरे ने अपने साक्षात्कार में कबीर की ठेठ भाषा का उदाहरण देते हुए कहा है, "लोकभाषा में लिखकर ही आप लोक-संस्कृति से जुड़ पाते हैं और उसी से कविता जिंदा भी होती है।" आगे उन्होंने यह भी कहा, "लोकभाषा ही जीवित रहेगी और लोकभाषा में लिखा साहित्य ही जीवित बचेगा।" हिंदी के प्राचीन कवि तुलसी सूर, कबीर, घनानंद हों या आधुनिक कवि नागार्जुन आंचलिक कथाकार फणीश्वर नाथ रेणु, सभी का साहित्य हमें लोकजीवन से जुड़े ज्ञान का अनुभव कराता है। कबीर के दोहे हों या मानस गान, घर-घर में गाए जाते हैं। पं. रामनरेश त्रिपाठी ने सन् १९२९ ई. में अपनी कविता कौमुदी भाग-५ (ग्राम गीत) में लोकगीतों का संग्रह किया था। प्रसिद्ध साहित्यकार केदारनाथ सिंह ने भोजपुरी के संबंध में कहा कि 'भोजपुरी हमारा घर है और हिंदी देश'। हिंदी की विभिन्न बोलियाँ (उपभाषाएँ) है जैसे पूर्वी हिंदी में अवधी, बघेली, छत्तीसगढ़ी, पश्चिमी हिंदी में ब्रजभाषा, बाँगरू, कन्नौजी, बुंदेली इनके अलावा भोजपुरी, राजस्थानी, मैथिली, मगही, कुमाऊँनी आदि। सभी हिंदी की शक्तियाँ हैं। हिंदी की ये लोकभाषाएँ, जहाँ विभिन्नता लिये हुए हैं, वहीं अनेकता में एकता लिए हुए हैं, ऐसा हमें कहना चाहिए, क्योंकि भाषिक संरचना में भले भिन्न हो, कहीं समानता लिये भी हैं, लेकिन सांस्कृतिक रूप से ये आपस में जुड़ी हुई हैं। क्षेत्रगत इनका रूप अलग भले है, लेकिन तीज-त्योहार, रीति-रिवाज आदि में अलग-अलग नामों से हम एक ही तरह से मनाते हैं। वही कहावतें हिंदी में हैं, वही छत्तीसगढ़ी में, बुंदेली, अवधी में, वही सोहर गीत, विवाह-गीत सभी में है। इसलिए भारतीय

संस्कृति विभिन्नता में एकता लिये हुए है। विशाल जनमानस के अनुभव उनके लोक-विश्वास को और भी गहरा बनाते हैं। लोकभाषाएँ उस क्षेत्र के लोकजीवन की झलक अपने लोकगीतों, लोककथाओं, लोक मान्यताओं के माध्यम से देती है।

प्रकृति में लोकजीवन

प्राचीन काल में मनीषियों ने सृष्टि की रचना में पंचतत्त्व आकाश, वायु, अग्नि, जल और पृथ्वी के महत्त्व को स्वीकार किया है। किंतु प्रकृति की गोद में पैदा हुआ मनुष्य उसकी देन को भूल जाता है। अपने लाभ के लिए जैसे-जैसे उसने प्रकृति को नुकसान पहुँचाया, वैसे-वैसे संतुलन बिगड़ता गया। यही कारण है कि आधुनिक मनुष्य की स्वार्थ लोलुपता ने जैसे-जैसे पर्यावरण को नजरअंदाज किया, वैसे-वैसे प्रकृति का प्रकोप किसी-न-किसी आपदा के रूप में हमारे सामने आया है। ऋग्वेद में प्रकृति का मानव से साहचर्य व उसके उपागमों, जैसे ग्रहों, बादल, जलस्रोतों, वृक्ष, पशु-पक्षी, वन की महिमा का गुणगान मिलता है। लोकमानस प्रकृति के महत्त्व को समझता है, इसलिए प्रकृति के विभिन्न रूपों के प्रति भक्ति-भाव से ओतप्रोत रहते हुए प्रकृति की रक्षा का भाव उसमें होता है। सूर के काव्य में वनदेवी गाँव वालों की रक्षा करती है। पहाड़ी और जनजातीय क्षेत्र में बूढ़ा देव या ठाकुर देव की पूजा की जाती है।

प्राचीन काल में मनीषियों ने सृष्टि की रचना में पंचतत्त्व आकाश, वायु, अग्नि, जल और पृथ्वी के महत्त्व को स्वीकार किया है। किंतु प्रकृति की गोद में पैदा हुआ मनुष्य उसकी देन को भूल जाता है। अपने लाभ के लिए जैसे-जैसे उसने प्रकृति को नुकसान पहुँचाया, वैसे-वैसे संतुलन बिगड़ता गया। यही कारण है कि आधुनिक मनुष्य की स्वार्थ लोलुपता ने जैसे-जैसे पर्यावरण को नजरअंदाज किया, वैसे-वैसे प्रकृति का प्रकोप किसी-न-किसी आपदा के रूप में हमारे सामने आया है।

ग्रहों का पूजन : उत्तर प्रदेश और बिहार का खास त्योहार छठ पूजा पूरी श्रद्धा व धूमधाम से मनाया जाता है। सूर्य को पुत्र प्रदान करने वाले देवता के रूप में पूजा जाता है और उनके नाम से छठ का व्रत रखा जाता है फिर अर्घ्य देते हुए गाती हैं—'हाली-हाली ठग ए अदिल मल, अरघ दियाउ'।

वृक्षों के प्रति सम्मान : पेड़-पौधे, वृक्ष हमारे लिए जीवदायक माने जाते हैं। शुद्ध वायु के लिए ये अत्यंत आवश्यक है। पेड़-पौधों से ही फल, वस्त्र, आवास, ईंधन विभिन्न प्रकार की उपयोगी वस्तुएँ हमें प्राप्त होती हैं। वैज्ञानिक रूप से पीपल का वृक्ष सबसे अधिक ऑक्सीजन देने वाला होता है। लोकमानस इसमें देवता का वास मानकर इनकी पूजा करते हैं और इस वृक्ष को नुकसाान पहुँचाना, यानी देवता को कष्ट देना मानते हैं। इसी प्रकार तुलसी वर्षों से घरों में पूजी जाती है, जिसके औषधीय महत्त्व से हम अनभिज्ञ नहीं हैं। वटवृक्ष की पूजा पति की लंबी उम्र के लिए की जाती है। आँवला नवमी की पूजा मोक्ष-प्राप्ति के लिए की जाती है। हमें यह ज्ञात है कि आरोग्य प्रदान करने में वृक्षों का महत्त्व है।

पशु-पक्षियों संबंधी विश्वास : कौए का मुँड़ेर पर बैठकर बोलना अतिथि के आगमन की सूचना देता है। गाय को भारतीय संस्कृति में माता का रूप मानते हैं। धार्मिक और आर्थिक दृष्टि से गाय का अत्यंत महत्त्व है। स्वप्न में भी गाय और बछड़े का दर्शन शुभ माना जाता है। कहा जाता है, पहले आपदा का संकेत पशु और पक्षियों की हलचल और उनको इधर से उधर भागने की बचैनी से लोगों को हो जाता था। ऋग्वेद में पक्षियों से शुभ वचन बोलने के कामना ऋषि-मुनियों की वाणी में मिलती है। जायसी के पद्मावत में नागमती विरह का संदेश देने काग और भौंरे को पुकारती है *'पिउ से कहेहु सन्देशडा, हे भौंरा! हे काग! सो धनि बिरहे जरि मुई, तेहि क धुवाँ हम्ह लाग'*।

कहावतों में लोकजीवन

पुरखों द्वारा अपना अनुभव या सहज रूप से सीख देने या गुस्से में बहुत कम शब्दों में कह दिया जाता था, वही आगे चलकर कहावतें बनती गईं। जैसे झूठे लोगों को छत्तीसगढ़ी में लबरा कहते हैं, इसी लबरा शब्द पर एक कहावत बनी 'लबरा के नौ नागर', जिसका अर्थ होता है सफेद झूठ। को कहावतों में मुझे घाघ की कहावतें याद आती हैं। भारत के कृषक वर्ग के लिए उनकी कहावतें पथ-प्रदर्शन करती हैं। उनकी लोकजीवन पर आधारित कहावतें आज भी समाज में प्रचलित व चरितार्थ होते दिखती हैं। घाघ की स्वास्थ्य संबंधी कहावत है—

रहै निरोगी जो कम खाय, बिगरे न काम जो गम खाय।

घाघ व भड्डरी की कृषि व मौसम संबंधी कहावतें तो किसानों को मुखाग्र रहती हैं—

शुक्रवार की बादरी, रही सनीचर छाय।
तो यों भाखे भड्डरी, बिन बरसे ना जाए।
अरवै तीज तिथि के दिना, गंरू होवे संजूत।
नो भारवैं यो भड्डरी, उपजै नाज बहुत।

अर्थात् बैसाख में अक्षय तृतीया को गुरुवार पड़े तो खूब अन्न पैदा होता है।

लोकसंगीत में लोकजीवन

आधुनिक दौर में मनोरजंन के साधन इंटरनेट, टी.वी., फिल्म, मॉल-संस्कृति आदि है। लेकिन प्रचीन काल से आज तक आधुनिकता के इस दौर में भी लोक संगीत और लोक गीतों की धुन हमें सम्मोहित करती है। ग्रामीण क्षेत्रों में गाय चराते हुए चरवाहों को गीत गुनगुनाते, खेतों में व विभिन्न अवसरों पर महिलाओं द्वारा गाए जाने वाले गीत कितने मनमोहक लगते, लोकसंगीत के सामंजस्य से मनमोहक हो जाते हैं। लोकसंगीत में एक ही वाद्य पर निकली लोकधुन भी मधुर और आडंबरहीन होती है। कृष्ण की मुरली की तान पर पूरे गाँव की गोपियाँ दौड़ पड़ती थीं। इकतारा, चिकारा, तुरही, मांदर, ढोलक, बाँसुरी यही तो लोकजीवन के वाद्ययंत्र हैं, जिन्हें वह स्वयं तैयार करता है।

लोकगीतों में लोकजीवन

भारतीय संस्कृति का सहज और आत्मीय चित्रण हमें लोकगीतों के माध्यम से मिलता है लोकगीत लोकमानस के मनोरजंन का साधन होता है। लोकगीतों को एकल रूप से या सामूहिक रूप से प्रस्तुत किया जाता है। विभिन्न अवसरों पर विभिन्न प्रकार से इसे गाया जाता है— संस्कार संबंधी गीत, व्रत-त्योहार संबंधी गीत, ऋतु संबंधी गीत, जिन्हें भिन्न-भिन्न अवसरों पर गाया जाता है।

सोहर गीत : भोजपुरी, मैथिली, ब्रज, छत्तीसगढ़ी, अवधी, पूरे भारतवर्ष में शिशु के जन्म पर सोहर गीत गाया जाता है। भाई के घर शिशु जन्म के अवसर पर बहन बधाई देने जाती और काजल लगाने का नेग करती है। खुशी के अवसर पर मायके जाने की लालसा वह इस प्रकार व्यक्त करती है—

हमारो भाई के होय हवै लाले हम काजर आँजे ल जावो हो।

विवाह संबंधी लोकगीत : विदाई के समय माता-पिता, भाई-भाभी सभी दु:खी है, रो रहे हैं, लेकिन अलग-अलग संबंधों के दु:ख दरशाने वाले इस गीत में भाभी को कठोर हृदय बताया जा रहा है—

दाई मोर रोव थे नदिया बहत हे
ददा रोवय छाती फाटय हो, हाय-हाय मोर दाई
भाई रोवय समझाये, भौजी नयन कठोरे हो।

भोजली गीत : भोजली पर्व भारत के विभिन्न प्रांतों में धूमधाम से मनाया जाता है। कृषक वर्ग के उल्लास का प्रतीक यह पर्व भोजली तैयार होने फिर उसके विसर्जन तक चलता है। विसर्जन के समय महिलाएँ भोजली गीत गाते हुए गंगा मैया से सुख-समृद्धि की कामना करती हैं। भोजली गीत किसान जीवन के हर्षोल्लास के साथ ही कृषक बालिका की खुशी, उसके भाई के प्रति स्नेह व सामाजिक सद्व्यवहार को व्यक्त करने के साथ ही नदी, तालाब आदि जल स्रोतों के प्रति श्रद्धा का भाव रखते हुए उसके दाय के प्रति सम्मान व्यक्त करता है—

देवी गंगा/देवी गंगा लहर तुरंगा
हमरो भोजली देवी के/भीजे आठों अंगा।

लोकनृत्य में लोकजीवन

मनुष्य श्रम के बाद विश्राम के क्षणों में उल्लास के साधन ढूँढ़ता है। ग्रामीण हों या जनजातीय लोक, लोक नृत्य उनके उल्लास को व्यक्त करता है। लोकनृत्य में विभिन्न वाद्ययंत्र हो या वेशभूषा या फिर शृंगार के साधन सभी वह खुद ही प्रकृति से सृजित करता है। फसल तैयार होने पर, त्योहार के अवसर पर या श्रम के दर्द को भूलने हेतु ये लोकनृत्य लोक की सामूहिकता को व्यक्त करता है। सुआ नृत्य, गौर नृत्य, करमा नृत्य, सरहुल नृत्य, डंडा नृत्य आदि। पति के वियोग का चित्रण सुआ नृत्य के माध्यम विशेष रूप से आकर्षित करता है—

पहिली गवन के डेहरी बईठारे
छांड पिया जाथे बनिज ब्योपार
काकर संग खईहंव, काकर संग खेलिहँव
का देख रइहंव मन बांध, रे सुअना·· !

लोकगाथा में लोकजीवन

लोकगाथाओं में भरथरी के साथ चनैनी, पंडवानी, लोरिक चंदा, बाँस गीत, ढोलामारू, अहिमन रानी, रेवा रानी, फूलबासन लोकप्रिय हैं। नारी मन की भावनाओं के चित्रण के साथ ही क्षेत्र विशेष से जुड़ी मान्यताओं की सफल अभिव्यक्ति लोकगाथाओं के माध्यम से होती है। भरथरी के जन्म के पहले उनकी माता संतान की लालसा लिये अपने दु:ख को इस प्रकार व्यक्त करती है—

मोर ले छोटे अउ छोटे के/सुंदर गोदी मा ओ
देख तो दीदी बालक खेलते हैं/मोर अभागिन के ओ
मोर गोदी मा राम/बालक नइये गिंया
मोर जईसे विधि कर रानी ओ/बाई रोवय ओ, बाई ये दे जी।
तरिया बैरी नदिया मा/संग जंवसिहा ओ
देख तो दीदी ताना मारथे हे··

निष्कर्षत: कह सकते हैं कि लोकसाहित्य की किसी भी विधा चाहे वह लोकमान्यताएँ हों, लोकसंगीत हो, लोकगीत हो, लोकनाट्य हो या लोकगाथा हो उनमें हमें लोकजीवन के चित्रण मिलते हैं। जिन्हें असंस्कृत, अशिक्षित या असभ्य की श्रेणी में रखते हैं, वे वास्तव में प्रकृति के नजदीक रहा करते हैं। लोकमानस अपने अंदर छिपे नैसर्गिक गुणों को लोकगीतों, लोकधुनों के द्वारा व्यक्त करते हैं। अपना दु:ख, उल्लास, खुशी वह आडंबरहीन होकर सहज रूप से व्यक्त करते हैं। लोकभाषाएँ क्षेत्र विशेष की पहचान कराने वाली वहाँ की विशेषताएँ जैसे रहन सहन, वेशभूषा, आभूषण, बोली, प्रकृति से साहचर्य, रीति-रिवाज आदि बयाँ करने में अधिक सक्षम होती है। लोकभाषाएँ उस क्षेत्र विशेष की पहचान विश्वपटल पर कराती हैं। लोरिक चंदा भारत के विभिन्न प्रान्तों खासकर मध्य प्रांत में प्रसिद्ध है।

भारत में विभिन्न संस्कृति के लोग रहते हैं, लेकिन सभी एक सूत्र होकर भारतीय संस्कृति को गढ़ते हैं, चूँकि भाषा केवल अभिव्यक्ति का माध्यम नहीं, बल्कि अपनी संरचना में समूची संस्कृति को प्रकट करती है। हिंदी और उसकी लोकभाषाओं का भारतीय संस्कृति को एकसूत्र में पिरोए रखने में अमूल्य योगदान है। अत: भूमंडलीकरण और व्यावसायिकता के प्रभावों के प्रति जागरूक करता वर्तमान परिदृश्य हिंदी और लोकभाषाओं के संरक्षण के प्रति गंभीरतापूर्ण विचार करने का संकेत दे रहा है।

साअ

पं. दीनदयाल उपाध्याय नगर,
श्रीराम पार्क के पास सेक्टर-३,
रायपुर-४९२०१० (छ.ग.)
दूरभाष : ८७७०१८६४८७

लघु कविताएँ

मूल : **डेला हिक्स-विल्सन**

अनुवाद : **बालकृष्ण काबरा 'एतेश'**

कैरिबियन वंश की युवा अश्वेत ब्रिटिश कवयित्री और लेखिका। लंदन में जन्म। किंग्ज कॉलिज, कैंब्रिज से अंग्रेजी में बी.ए. और एम.ए.। वर्तमान में कैंब्रिजशियर में निवास।

: १ :

प्रेम के अंतिम दिवस
स्वयं को दें अनुमति
याद करने को इसका प्रथम दिवस।

: २ :

कभी-कभी
इन दोनों से होता है दर्द बहुत,
प्रेम करने और जुदा होने में
होता अनुभव एक समान।

: ३ :

सच्ची कविताएँ
लिखी नहीं अनुभव की जाती हैं।
शब्द हमें दिलाते स्मरण।

: ४ :

कभी-कभी, अधिकतर,
आप मरते अंश-अंश ही
पूर्णत: नहीं।
आप केवल रहते उपस्थित
अंतिम संस्कार में।

: ५ :

हूँ मैं तुम्हारी
स्मृतियों की शरण में।

: ६ :

चाँद से सीखो
कि अँधेरा है तुम्हारे लिए
एक आमंत्रण
स्वयं का प्रकाश
पैदा करने के लिए।

: ७ :

जब तुम्हारा हृदय हो
प्यासा
बारिश से न करो
समाधान
प्रतीक्षा करो
बाढ़ की।

: ८ :

लीजिए शब्द
और कला
और प्रेम
और सपने।
और सींचिए इसे
रोज स्वयं।

: ९ :

कोई भी यह कभी नहीं बताता
कि सामान्यत: स्वयं को ही हमेशा
स्वयं से बचाने में
है पूरी कहानी।
हम इसका प्रारंभ
और मध्य
गुजार देते हैं
और करते हैं भरपूर कोशिश
इसके अंत को
फिर से लिखने के लिए।

: १० :

प्रिय,
अपनी कहानी के प्रति रखो
मृदु भाव।
तुम ही हो इसके
पहले और एकमात्र प्रारूप।

: ११ :

हर क्षमा याचना के साथ
हम सीखते हैं एक भाषा।

: १२ :

अपनी बेटी से
और उसकी बेटी से भी
कहूँगा मैं,
'देखो अपनी सुंदरता
बिना प्रशंसा
या दर्पण के'।

: १३ :

करें सर्वप्रथम स्वयं की यात्रा।
दुनिया की
बाद में।

: १४ :

नहीं प्रिय।
तुम ही पूर्ण करते हो
तुम्ही को।

: १५ :

स्वयं को पूर्ण करो
स्वयं से।

: १६ :

याद रखो
तुम हो पवित्र भूमि।
चयन करो अपने यात्रिओं का
सूझ-बूझ से।

: १७ :

जादुई है स्वयं से प्रेम करना,
पर यह जादू नहीं।
है यह सामान्य
आवश्यक निर्णय।

: १८ :

जितना कि
उसका हृदय सँभाल सकता

शायद उससे अधिक
तुमने उससे प्रेम किया।

: १९ :

हम अपने सपनों को
दफनाते हैं खुली कब्रों में
और करते हैं आश्चर्य
कि वे हमें क्यों करते हैं परेशान।

: २० :

निष्ठुर स्मृतियों को
न बदलने दो
तुम्हारी मृदुता को पत्थर में।
बनकर मिट्टी,
जरा वापस आ जाओ
धरती पर।
जितना हो सके
जरा याद करो उन्हें
कोमल हृदय से।

: २१ :

जो युद्ध हुए
उनके घाव के निशान हैं
तुम पर,
लेकिन हैं निशान
उन युद्धों के भी
जो शेष हैं।

सुपरिचित लेखक एवं कवि और अनुवादक। अद्यतन कविता-संग्रह 'छिपेगा कुछ नहीं यहाँ'। विश्व काव्यों के अनुवादों का संग्रह 'स्वतंत्रता जैसे शब्द' प्रकाशित एवं दूसरा संग्रह 'जब उतरेगी साँझ शांतिमय' प्रकाशनाधीन।

: २२ :

अपने स्वयं की
की बाहों में आ जाओ
और थम जाओ।
थमे रहो।
शायद यही
तरीका है
स्वयं को
क्षमा करने का

११, सूर्या अपार्टमेंट, रिंग रोड,
राणाप्रताप नगर, नागपुर-४४००२२ (महा.)
दूरभाष : ९४२२८११६७१

कविता

सूखी टोंटी पर चिड़िया

● **बी.एल. आच्छा**

सुपरिचित लेखक। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के उपन्यास, सर्जनात्मक भाषा और आलोचना, 'जल टूटता हुआ की पहचान', 'आस्था के बैंगन', 'पिताजी का डैडी' संस्करण व्यंग्य प्रकाशित। देवराज उपाध्याय आलोचना पुरस्कार, पं. नंददुलारे वाजपेयी आलोचना पुरस्कार, समीक्षा सम्मान, भाषा भूषण सम्मान इत्यादि प्राप्त।

जंगल-जंगल
नदी-पोखर
उड़ान भर आई है चिड़िया
हाँफते पंख प्यासी चोंच
सिमट रहे प्राण
आ बैठी है नल की टोंटी पर
जंगल का दर्द लिये चिड़िया।
कहीं टपक जाएँ
बूँदें दो-चार।

गरदन को जल-योग कराती चिड़िया
देखती है घर के बाबा को।
बाबा! जब बिटिया को
विदा किया था पीले हाथों से
कितने ढलक गए थे आँसू
सुना था मैंने भी
बिटिया ने गाया था
'बाबुल मैं तो तेरे बाग की चिड़िया'
आज बैठी हूँ
दो बूँदों की आस लिये।

कितना मादक था
पनघट पर बहते पानी में
हम फुदकी लेते थे
छत पर के बरतन को
स्विमिंग पुल बना लेते थे
माथे पर पानी के बरतन
लेकर आती माँ
कोस भर दूरी से
हम भी नन्ही घूँटों से
प्यास बुझा जाते थे।
पर अब आँखों में
सूखी नदियों के प्यासे ओठ
दरकती जमीनें तालाबों की।

प्याऊ का जूठा पानी भी
हलक बुझा देता था
पर बिसलेरी सभ्यता में
संस्कृति सूखी है पानी की
बड़ी-बड़ी अट्टालिका में
आती है गिलास आधे पानी की।
पर अब तो बिलबिला रहे हैं
बस्ती के खाली बरतन
पूरी झोंपड़-बस्ती
राह तक रही टैंकर का।

वैसे ही मैं भी बैठी हूँ टोंटी पर
आस लिये दो बूँदों की
निहार रही हूँ पोस्टर
जल ही जीवन के
सेव वाटर के जलसों के
सबमर्सिबल और बोतल संस्कृति के।

फ्लैट नं-७०१, टावर-२७
स्टीफेंशन रोड (बिन्नी मिल्स)
पेरंबूर, चेन्नई-६०००१२ (तमिलनाडु)
दूरभाष : ९४२५०८३३३५

बायाँ-दायाँ हाथ

• एम.एल. खरे

शीर्षक देखकर मत चौंकिए कि दायाँ-बायाँ क्रम क्यों उलट दिया। आमतौर पर दायाँ पहले नंबर पर रहता है। कहते हैं न कि दाएँ-बाएँ देखकर चलो। तुलसीदास ने भी खलों की वंदना करते हुए लिखा है—"जे बिनु काज दाहिने-बाएँ"। यहाँ क्रम उलटने की जरूरत इसलिए हुई कि बाएँ हाथ का ऐसा आग्रह था। सुनिए, कैसे?

हुआ यह कि कुछ शुभचिंतकों, जिन्हें दूसरों को सलाह देने का मर्ज होता है, की बातों में आकर मुझे भी ध्यान लगाने का शौक चर्राया। बताया गया कि इससे मन को शक्ति मिलती है, शरीर स्फूर्तिमान होता है, पॉजिटिव इनर्जी आती है, वगैरह-वगैरह। अत: एक दिन मैंने ध्यान लगाने का उपक्रम किया। पद्मासन में तो नहीं, पालथी लगाकर भी नहीं, अपनी सुविधा और आरामतलबी की आदत के अनुसार पलंग पर तकिए के सहारे टिककर, पैर फैलाकर, अधलेटे, अधबैठे हुए आँखें बंद करके ध्यानावस्था में आ गया। मन को शून्य पर या ॐ पर केंद्रित करना चाहा। वह तो नहीं हुआ, परंतु मुझे अचानक दो हाथ दिखे, एकदम एक साथ, हथेलियाँ आमने-सामने फैलाए। वे मेरे ही हाथ थे, उनपर वही रेखाएँ थीं, जो रोज देखता हूँ। दूसरे ही क्षण रेखाओं में हलचल हुई और उनसे आदमी के चेहरे सा रेखाचित्र बन गया जुड़वा भाइयों की तरह।

पहले बाएँ हाथ का मुँह दाहिने वाले से बोला, "हम दोनों एक साथ जनमे, हमेशा साथ रहते हैं। फिर तुम क्यों अपने को बड़ा और मुझे हीन समझते हो? क्यों हर काम में आगे रहते हो। हाथ मिलाने में तुम तपाक से आगे बढ़ते हो। सलाम-सल्यूट करने में तुम फटाक से ऊपर उठते हो, खाना खाते समय तुम्हारी पाँचों उँगलियाँ घी में रहती हैं। पूजा जैसा पवित्र काम तुम करते हो। दान करके पुण्य कमाते हो। प्रसाद तुम झपट लेते हो, चरणामृत, पंचामृत भी। आरती तुम करते हो और घंटी मुझसे बजवाते हो। तुम मुझसे सहायक जैसा काम लेते हो। खुद पहले नंबर पर रहते हो और मुझे दोयम दर्जे का बना रखा है। शौच क्रिया में मलद्वार धोने का गंदा काम मुझे करना पड़ता है। तब तुम आगे नहीं आते। लिखने का काम ज्यादातर तुम ही करते हो। हाँ, कुछ लोग अवश्य वामहस्त होते हैं, वे लिखते समय मुझे मौका देते हैं। वह क्या देते हैं, मैं ही अपने बलबूते पर लिखने का काम हथिया लेता हूँ। परंतु सब अच्छे काम तो तुम करते हो, बड़े स्वार्थी हो। अच्छा-अच्छा खुद हड़प लेते हो और बुरे को छूते तक नहीं। क्यों?"

दाएँ हाथ ने उत्तर दिया, "प्रिय बंधु! तुम मेरे सहोदर हो, तुम्हारी सहायता के बिना मैं बहुत से काम नहीं कर सकता। तुम बाएँ जरूर कहलाते हो, किंतु यदि मुहावरे में बात कहूँ तो तुम मेरे दाएँ हाथ के समान हो। जब मुझे स्वयं को धोना होता है, तो तुम ही आकर मुझसे रगड़-रगड़कर मुझे साफ करते हो। वैसे तुम्हारी शिकायत जायज है, परंतु यह क्यों भूल रहे हो कि हम दोनों ही ऊपर वाले की कठपुतली हैं। ऊपर वाले से मेरा मतलब अपने मालिक आदमी की खोपड़ी से है, जो शरीर में सबसे ऊपर है। उसके भीतर जो दिमाग है, वह जैसा हमें नचाता है, हम नाचते हैं। नाचने से याद आया, नाच में हम दोनों बराबरी से हरकत करते हैं। बहुत से काम ऐसे हैं, जो हम दोनों मिलकर करते हैं। तुमने सलाम और सैल्यूट की बात कही, यह तो अभिवादन के विदेशी तरीके हैं। भारत में तो हम दोनों साथ जुड़कर नमस्ते करते हैं। हाथ मिलाना भी विदेश से आया है। हमारे यहाँ तो दोनों हाथों से सामने वाले के दोनों हाथ पकड़कर आत्मीयता दरशाते हैं। आरती का थाल भी हम दोनों थामते हैं। भगवान् के आगे दोनों जुड़कर विनती करते हैं, ताली भी दोनों मिलकर बजाते हैं। कोई भी बाजा हो, हम दोनों के बिना नहीं बजता। हम दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं, प्रतिद्वंद्वी नहीं। मैं तो तुम्हें हीन नहीं समझता। तुम अपने को हीन मानना छोड़ दो।"

सुपरिचित लेखक। अनेक पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। अब तक एक व्यंग्य-संग्रह, चार खंडकाव्य, एक लेखमाला और तीन पद्यानुवाद तथा वाल्मीकि रामायण का पद्यानुवाद छह खड़ों में प्रकाशित। कुछ सम्मान भी मिले।

बायाँ बोला, "यह तुम्हारी गलतफहमी है। मैं नहीं, दुनिया मुझे हीन समझती है। वह तुम्हें सीधा और मुझे उलटा हाथ कहती है। 'उलटे' का मतलब ही नकारात्मक है। मैं तो स्वयं को तुमसे ज्यादा चतुर मानता हूँ।" दाएँ हाथ ने बीच में कहा, "मानो, मुझे कोई एतराज नहीं, अपने मन में हर कोई यह मानने को स्वतंत्र है कि 'मुझसे भला न कोय', जहाँ तक तुम्हें दुनिया से शिकायत है, तो मालिक से कुछ मेरे काम अपने लिए आरक्षित करा लो १८ या १९ प्रतिशत। मुझे इसका कोई मलाल नहीं होगा। और हाँ, यदि बिना आरक्षण के तुम अपने दमखम पर बहुत से काम करने लगो तो तुम्हारे (और हमारे भी) मालिक को 'सव्यसाची' जैसी सम्मानजनक उपाधि मिल जाएगी। वह संबोधन अर्जुन जैसे महान् धनुर्धर को मिला था। खैर, यह तो बताओ तुम किस दृष्टि से स्वयं को मुझसे चतुर मानते हो?"

उत्तर मिला, "देखो, तुम्हारी कमाई से तो बस गुजर-बसर हो सकती है, जबकि मुझ बाएँ हाथ की कमाई आदमी को धनवान, ऐशो-आराम, शान-शौकत और गुलछर्रे उड़ाने लायक बनाती है। उलटे हाथ की कमाई वाले को स्विश बैंक में धन जमा करने का सुख मिलता है। अफसोस यह है कि उसे लोग दो नंबर का पैसा कहते हैं। मुझे दो नंबरी कहा जाता है, जबकि मुझे पहले नंबर पर होना चाहिए। लोगों को चाहिए कि दायाँ-बायाँ न बोलकर कहें 'बायाँ-दायाँ'।"

फिर दृश्य बदल गया, न जाने मुझे कब नींद आ गई।

ए-६०१, हिलक्रेस्ट,
हाउस आफ हीरानंदाजी, अक्षय नगर, बेगुर,
बैंगलुरु-५६०११४ (कर्नाटक)
दूरभाष : ९७५२७७७४६२

बाल-कहानी

घोंसला

• पवन चौहान

बसंत का मौसम अपने अंतिम पड़ाव पर है। पतझड़ में खाली हुई टहनियाँ अब फल, फूलों और ढेर सारे पत्तों से लद चुकी हैं। यह पक्षियों के प्रजनन का समय है। घोंसला बनाने के लिए सभी पक्षी अपना-अपना ठिकाना आबाद कर रहे हैं। कुछ इसे जल्दी तैयार कर अंडे भी सेने लग गए हैं, जबकि कुछ अभी थोड़ी देर लगाएँगे।

पिंटू, रमन और दीपू इस मौसम का बड़ी बेसब्री से इंतजार करते हैं। इस बार से नहीं बल्कि पिछले कुछ वर्षों से। तीनों की उम्र भी एक और कक्षा भी एक ही—आठवीं। गाँव की यह तिकड़ी सबसे शरारती भी है। अभी-अभी इनका वार्षिक परीक्षा परिणाम आया है। तीनों ही पास। नई कक्षा का यह शुरुआती महीना है। आजकल तीनों ही स्कूल के बाद निकल पड़ते हैं खेतों की ओर। उन छोटे-बड़े पेड़ों की ओर, घोंसलों की तलाश में। हर पेड़, मेंड़, गाँव के तालाब के आसपास, मिट्टी की कच्ची दीवार के सुराखों पर, हर जगह घोंसले पर इनकी नजर है। जैसे ही किसी पक्षी ने अंडे दिए नहीं कि ये अपने मनोरंजन के लिए उन्हें अपने हाथों में बार-बार उछालते हैं। एक-दूसरे को दिखा-दिखाकर मजे लेते हैं। इनकी इस हरकत से बहुत से अंडे खराब हो जाते हैं। इनकी इस खुशी में पक्षियों का नया परिवार बनने से रह जाता है। कई बार तो इनसे ये अंडे टूट भी गए हैं।

जब अंडों से चूजे निकलते हैं तो इनका उत्साह और भी बढ़ जाता। एक-एक घोंसले से उन नन्हे, नंगे और बिना पंख के चूजों को हाथ में उठाते हैं। एक-दूसरे को सौंपते, उछालते हैं। यदि थोड़े पंख निकल आए हों तो ऊपर से ही फेंककर उनके उड़ने की इच्छा पालते हैं। इनकी इस हरकत से कई चूजे तो भी मर जाते हैं। और जो बचते भी हैं तो उनकी टाँगें या फिर पंख टूट गए होते हैं। चूजों के माता-पिता पक्षी उन्हें बार-बार शोर मचाकर या फिर ठोंग मारकर हटाने की कोशिश करते हैं, लेकिन सब बेकार रहता है। वे पत्थर या डंडों से उन्हें वापस

सुपरिचित बाल-साहित्यकार। 'किनारे की चट्टान' (कविता-संग्रह), 'भोलू भालू सुधर गया' (बाल-कहानी-संग्रह), 'हिमाचल का बाल साहित्य' (शोध संदर्भ), 'जड़ों से जुड़ाव' (धरोहर संरक्षण की पहल), 'वह बिल्कुल चुप थी' (कहानी-संग्रह) प्रकाशित। '२१ श्रेष्ठ बालमन की कहानियाँ हिमाचल' (संपादन), स्कूल और कॉलेज पाठ्यक्रमों में रचनाएँ शामिल। कविता 'फेगड़े का पेड़' को वर्ष २०१७ का प्रतिलिपि संपादकीय चयन में प्रथम पुरस्कार तथा बाल-साहित्य में कई सम्मान।

परे उड़ा देते हैं। ज्यादा ही परेशान हुए तो उनका घोंसला ही गिरा देते थे। कई पक्षी तो असहाय से चुपचाप दूसरे पेड़ों पर बैठकर अपने घोंसले की दुर्गति देखते रहते हैं।

उनकी ये हरकतें पक्षियों के लिए बहुत दर्द देने वाली होती हैं। इस इलाके के सभी पक्षी उन्हें पहचान गए हैं। तीनों के आते ही वे शोर मचाना शुरू कर देते हैं, ताकि दूसरे पक्षी भी सतर्क हो जाएँ। कई तो उन्हें ठोंगे मार-मारकर वापस भेजने का असफल प्रयास करते हैं। घोंसला बनाने, अंडे देने और बच्चों के बड़ा होने तक का समय इस गाँव और आसपास के पक्षियों के लिए बहुत ही डरावना और परेशान करने वाला होता है।

इसका परिणाम यह रहा कि अबकी बरस यहाँ पक्षियों ने बहुत कम घोंसले बनाए। लेकिन इस बार उनके लिए एक नया आकर्षण था बाज का घोंसला। यह पहली बार था, जब किसी बाज ने इस गाँव में अपना घोंसला बनाया था। यह खेत के ऊँचे पेड़ पर था। अध्यापक ने उन्हें कक्षा में बताया भी था कि प्रदूषण और कई खतरनाक विकिरणों के चलते बहुत से पक्षी धीरे-धीरे अपना ठिकाना बदल रहे हैं या फिर खत्म हो रहे हैं। शायद इसकी भी यही वजह थी। कुछ ही समय में बाज की जोड़ी ने अपना घोंसला भी बना लिया था। शायद अब तक अंडे

भी दे दिए थे या उनसे बच्चे भी निकल आए होंगे। यह पत्तों के बीच से देख पाना मुश्किल था। इसका पता लगाने हेतु पिंटू का नाम तय हुआ। पिंटू भी तैयार था। वह मुश्किल से जब घोंसले के पास पहुँचा तो उसने देखा, वहाँ एक चूजा है। वह बहुत खुश हुआ। जैसे ही उसने नीचे खड़े रमन और दीपू को दिखाने के लिए उसे उठाना चाहा तो न जाने कहाँ से बाज आकर उस पर टूट पड़ा। बड़ी मुश्किल से बचता-बचाता वह आधे पेड़ तक उतर आया। बाज का हमला बराबर जारी था। अब पिंटू भी थकने लगा था। नीचे खड़े रमन और दीपू इस दशा में न पत्थर और न ही कोई डंडा बाज को मार सकते थे। चोट पिंटू को भी लग सकती थी। तभी अचानक पिंटू के हाथ छूटे और वह पेड़ से सीधा नीचे कनक के खेत पर आ गिरा। अस्पताल जाकर पता चला कि उसकी दाईं टाँग और बाजू टूट चुके हैं। फिलहाल उसकी टाँग और बाजू में कुछ दिनों के लिए प्लास्टर चढ़ गया। उसे डॉक्टर ने पूरी तरह से आराम करने की सलाह दी।

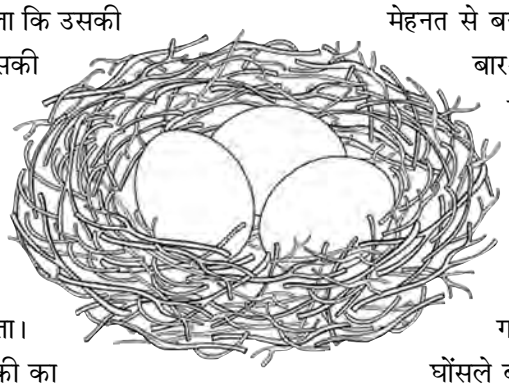

पिंटू अब घर के भीतर बैठा या तो टी.वी. देखता रहता या फिर अपने आँगन में लुकाठ की छाँव में एक मंजे पर लेटा रहता। एक दिन उसने देखा, लुकाठ के पेड़ पर फुदकी का जोड़ा अपना घोंसला तैयार कर रहा है। दोनों ही अपनी चोंच में नरम घास तथा बाल लाते तथा चुनी हुई छोटी टहनी पर बिछाते। उन्होंने इस प्रक्रिया को कई बार दोहराया। वे घोंसले का आधार तैयार कर रहे थे। शाम हो रही थी। लेकिन यह क्या? तभी एक तेज हवा के झोंके ने इस घोंसले को पल भर में ही उड़ा दिया। फुदकी का जोड़ा बेबस सा उसे उड़ते हुए देखता रहा। बड़ी देर तक उसी टहनी पर मायूस से वे बैठे रहे।

पिंटू ने देखा, अगले दिन वे दोनों फिर से अपने काम में लग गए। इस बार वे इस घास व अन्य सामग्री को टहनी व पत्तों के साथ बाँधने की कोशिश करते हैं। बड़ी कोशिशों के बाद फिर से घोंसले का आधार तैयार होने लगता है। वे दोनों खुशी से फुदकने लगते हैं। लेकिन यह क्या? उसी वक्त पेड़ पर बैठी मैना लुकाठ खाने को जैसे ही चोंच मारती है तो एक पका हुआ लुकाठ सीधा ही उस घोंसले पर गिरकर उसे तोड़ देता है। यह उनके लिए बहुत ही परेशान करने वाली बात थी। वे दोनों थोड़ी देर चुपचाप वहीं बैठे रहे। लेकिन फिर एक उड़ान भरी और दोबारा उसी जोश के साथ अपने काम पर लग गए। पिंटू बड़े ध्यान से सब देखता रहा। यह सारी प्रक्रिया देखकर उसका समय भी बढ़िया बीत रहा था। अबकी बार न हवा चली और न ही कोई लुकाठ गिरा। कुछ ही दिनों में उनका घोंसला बनकर तैयार हो गया। फुदकी ने वहाँ अंडे भी दिए।

उस दिन पिंटू पेड़ के नीचे ही अपने पलंग पर आराम कर रहा था। तभी एक कौआ फुदकी के अंडों को खाने के लिए झपटा। इसके चलते एक अंडा नीचे गिरकर टूट गया। यह फुदकी के लिए बड़ा आघात था। वह जैसे पागल सी हो गई थी। आज पहली बार वह खूब जोर-जोर से चिल्ला रही थी। वह कभी पेड़ पर इधर-उधर उड़ती तो कभी बड़ी देर तक उस टूटे अंडे के पास जा-जाकर उसे देखती। अपने पंजों से अंडे की जैली को समेटने और उसे जोड़ने की नाकाम कोशिश करती। वह सामने बैठे पिंटू से भी नहीं डर रही थी। यह दृश्य पिंटू के लिए बड़ा ही दुखदायी था। घायल पिंटू भी एकदम से कुछ न कर पाया था।

पिंटू इतने दिनों से उनकी घोंसला बनाने की मेहनत से लेकर घोंसले में अंडे सजाने तक को देखता आया था। उसने देखा कि जिन घोंसलों को तोड़ने में हम एक पल भी नहीं लगाते। ये पक्षी उन्हें कितनी मेहनत से बनाते हैं। उसे पूरी रात नींद ही नहीं आई। उसे बार-बार सपने में वे सभी पेड़, घोंसले, अंडे और चूजे ही दिखते रहे, जिनका उन्होंने नुकसान किया था। उसने देखा, सारे पक्षी उनके गाँव से चले गए हैं। पूरे गाँव में सन्नाटा पसरा है। किसी भी पक्षी की आवाज सुनाई नहीं दे रही है। यह सपना उसे कचोटता रहा। वह समझ गया कि उनके कारण ही इस बार गाँव में कम घोंसले बने हैं। कई पक्षियों ने अपनी पुरानी जगहों पर घोंसले भी नहीं बनाए हैं और कुछ पक्षी उन्हें इस बार दिखे ही नहीं। उसने सारी बात रमन और दीपू को बताई। सब सुनकर वे भी उदास हो गए।

तीनों ने एक-दूसरे से वादा किया कि अब वे पक्षियों को तंग नहीं करेंगे। साथ ही पक्षियों के नुकसान की भरपाई के लिए स्वयं कृत्रिम घोंसले तैयार करेंगे और जगह-जगह सुरक्षित स्थानों पर उन्हें लटकाकर पक्षियों को वापस आने का न्योता देंगे।

आज पिंटू को अच्छे से नींद आई। उसने अब यह कार्य अपने अंदाज में शुरू भी कर दिया था। सुबह ही उसने अपना पलंग पेड़ के नीचे लगवा दिया था। अबकी बार उसके पास एक लंबा डंडा था। घोंसला बनाने की सामग्री थी। अब जब भी कोई कौआ या बिल्ली फुदकी के घोंसले को नुकसान पहुँचाने की कोशिश करते तो वह इस डंडे या मुँह से अलग प्रकार की तीखी आवाज निकालकर उन्हें भगा देता था। जब तक चूजे उड़ने नहीं लगे, उसने अपनी ड्यूटी पूरी तरह से निभाई। वहीं दूसरी तरफ, रमन और दीपू भी बड़ी रुचि के साथ घोंसले बना रहे थे। उन्होंने अब तक कई घोंसले जगह-जगह पेड़ों पर टाँग भी दिए थे।

साअ

गाँव व डाक-महादेव, तहसील-सुंदरनगर,
जिला-मंडी-१७५०१८ (हि.प्र.)
दूरभाष : ९४१८५८२२४२
chauhanpawan78@gmail.com

हंपी, जहाँ शिलाओं पर खुदी है रामकथा

● अरुणा गुप्ता

दक्षिण भारत के पुराने शहर विजयनगर में एक छोटा सा गाँव हंपी स्थित है। बंगलुरु से लगभग ३२५ किलोमीटर की दूरी पर स्थित यह स्थल इतिहास, पुराण और वास्तुकला का अद्‌भत संगम है। तुंगभद्रा नदी के तट पर स्थित यह स्थल १३३६ से लेकर १५६२ तक प्राचीन विजयनगर की राजधानी था। राजा कृष्णदेवराय के शासनकाल में यह राज्य बेहद समृद्ध और संपन्न था। तेनालीराम की कहानियाँ तो हम सभी ने सुनी हैं। वे इनके ही दरबार में थे। कुछ ही वर्ष पूर्व यूनेस्को ने इसे विश्व धरोहर घोषित किया है। विश्वभर से पर्यटक इसका सौंदर्य देखने के लिए आते हैं। मेरे भीतर भी बरसों से यहाँ जाने की लालसा थी।

एक लंबी प्रतीक्षा के बाद आखिरकार वह दिन आ ही गया। काफी समय पहले कॉलेज में इतिहास विभाग के कुछ लोग एक बार हंपी गए थे। उन्होंने उसकी जो प्रशंसा की कि तब से ही मन और बेचैन हो गया। इधर कोविड के कारण बार-बार कार्यक्रम आगे-पीछे होते गए। आखिर ५ मार्च को जाना तय हुआ। सवेरे की फ्लाइट से हम पहुँचे बंगलुरु और वहाँ से सीधे टैक्सी में गए चित्रदुर्ग। लगभग २०० किलोमीटर की दूरी तय करते हुए हम शाम तक होटल पहुँचे। थक तो गए थे पर रास्ते भर हरे-भरे नारियल के वृक्ष और केलों और गन्ने के बड़े खेत मन को लुभाते रहे, आँखों को तर करते रहे। सड़क इतनी साफ-सुथरी थी कि पता ही नहीं चला कब पहुँच गए। कोई गड्‌ढा नहीं, ट्रैफिक नहीं।

अगले दिन तड़के ६ बजे चित्रदुर्ग पहुँच गए। बताया गया था कि सुबह जल्द ही जाना वरना गरमी हो जाएगी, चढ़ाई भी थी। अभी झुटपुटा सा अँधेरा था। पौं फटते ही हम किले के भीतर थे। यहाँ टिकट की सारी व्यवस्था ऑनलाइन ही थी, उसमें जरूर कुछ समय लगा, वही नेटवर्क की परेशानी, कोई खिड़की भी नहीं बनी थी। यदि किसी के पास यह सविधा न हो तो कहाँ से टिकिट खरीदे? खैर चौकीदार की सहायता से हल निकला और हम सूरज की पहली किरण के दर्शन करते किले के भीतर पहुँच चुके थे। सूर्योदय का अद्‌भुत दृश्य देखने को मिला। प्रवेश द्वार पर ही इस किले का वैशिष्ट्य बताया गया। गाइड ने वहाँ बनी सर्प की आकृति को दिखाते हुए बताया कि इस किले में सर्प के आकार में सात द्वार बने हैं, आक्रमणकारियों से बचने के लिए गजब की सुरक्षा व्यवस्था थी। दुर्ग के भीतर के ये घुमावदार प्रवेश स्थल सचमुच बड़ी सूझबूझ और योजना से बनाए गए थे। किले के ही भीतर जल प्रबंधन, गरम ठंडे तेल को एकत्र करने के कुंड और आक्रमण के समय शत्रु पर

सुपरिचित लेखिका व अनुवादक। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं व संकलनों में आलेख, कविताएँ, संस्मरण एवं सत्यकथाएँ प्रकाशित। दिल्ली विश्वविद्यालय से एम.ए. में सर्वाधिक अंक प्राप्त करने के लिए मैथिलीशरण गुप्त पुरस्कार (गोल्ड मेडल) सहित अनेक सम्मानों से सम्मानित।

विभिन्न प्रकार से हमले करने के सारे प्रबंध उन्हीं शिलाओं में शिल्पकार ने गढ़ दिए थे। १५वीं सदी का बना यह किला स्थापत्य कला का अद्‌भुत नमूना है।

अगले दिन सुबह ही हम लोग हंपी की ओर चल दिए। चित्रदुर्ग से हंपी लगभग १२५ किलोमीटर की दूरी पर है। रास्तेभर विड मिलस की कतारें और खेतों में बिखरी लाल रंग की मिट्‌टी सचमुच कुदरत और इंसान के कौशल का एक दर्शनीय नजारा था। ज्ञात हुआ कि यहाँ की माटी में भरपूर मात्रा में लौह खनिज हैं। यही कारण है कि बड़े-बड़े स्टील के प्लांट यहाँ लगाए गए हैं।

कुछ ही देर में दिखने लगे थे वे अवशेष जिन्हें देखने के लिए मन उत्सुक था। संकरी सी पगडंडी के चारों ओर दूर-दूर तक चट्‌टानें इस प्रकार एक-दूसरे पर टिकी थीं कि मानो अभी लुढ़क जाएँगी। पर टैक्सीवाले ने बताया कि ये तो बरसों से इसी प्रकार हर मौसम—धूप, गरमी, बरसात को सहती हुई यों ही एक पाँव पर खड़ी तपस्यारत हैं।

खँडहरों का विस्तार बढ़ता जा रहा था और साथ ही हमारी उत्सुकता भी। इन भव्य अवशेषों को देख मन में कल्पनाएँ साकार होने लगीं। कैसा विशाल और भव्य रहा होगा हमारा यह अतीत विजयनगर का यह गौरवशाली साम्राज्य, जिसका प्राचीन नाम था किष्किंधा वानर नगर। यों आज भी वानरों की संख्या यहाँ बहुतायत में देखी जा सकती है। शायद यह इसी का प्रमाण सिद्ध कर रहे हों। उन्हीं अतीत के क्षणों को एक बार पुनः साकार करने को हम सबसे पहले विरूपाक्ष मंदिर पहुँचे। वाह क्या गजब का नजारा था। मख्य द्वार का विशाल गुंबद और करीने से बनाए गए झरोखे जिससे सूर्य का प्रकाश छन-छनकर बराबर मंदिर को आलोकित करता रहता है।

भीतर प्रवेश करते ही बड़ा-सा प्रांगण। यही लक्ष्मी के दर्शन हुए। न, न यह कोई मूर्ति नहीं बल्कि एक हथिनी का नाम है। जब लोग उसे दस का नोट देते हैं तो वह आपको आपके सिर पर अपनी सूँड़ से आशीर्वाद

देती है। उसे पार करते ही हम मंदिर के भीतर पहुँचे। यहाँ वास्तु-कला और तकनीक दोनों का अद्‌भुत संगम देखने को मिला।

खंभों पर अनेक आकृतियाँ उकेरी गई थीं। हर आकृति के पीछे कोई-न-कोई कहानी छिपी थी। दीवारों पर अद्‌भुत चित्र। छत के कुछ चित्रों पर तो अभी भी उस समय के रंगों के अवशेष देखे जा सकते हैं। इन्हीं चित्रों में हमारी पौराणिक गाथाएँ उकेरी गई थीं। कैसे बने होंगे ये ऊँचे गोपरम और यह अद्‌भुत चित्र, कौतूहल और अनेक प्रश्नों से मन भर जाता है। अरे वाह यह क्या मंदिर के भीतर तो अँधेरा था पर यह एक छोटा सा गवाक्ष एक कोने में?

जरूर कोई रहस्य रहा होगा। जी हाँ, गाइड ने बताया, आइए जरा इस कोने में देखिए, आप देखेंगे यहाँ से इस ५० मीटर ऊँचे गोपुरम यानी गुंबद का उल्टा प्रतिबिंब। वाह क्या गजब है! गुबंद तो बहुत दूर है तो फिर कैसे इस दूरी का अनुमान लगाया गया होगा। सचमुच यह गवाक्ष कैमरे के लैंस का काम कर रहा था। वास्तव में यहाँ कला, तकनीक, विज्ञान और स्थापत्य कला का अद्‌भुत संगम देखने को मिलता है। विजयनगर की भव्यता इन खँडहरों में आज भी गुंजायमान है। मंदिर के बाहर थे उस समय के बाजार के अवशेष जहाँ हीरे-जवाहरात का बाजार लगता था और दुनियाभर से व्यापारी यहाँ खरीदारी के लिए आते थे। ये सारी कहानी यहाँ की हर शिला बयान कर रही थी।

इसके बाद हम पहुँचे हजाराराम मंदिर, एक ऐसा विशाल स्थल, जहाँ संपूर्ण रामकथा पत्थरों पर उकेरी गई है। शिल्पकारों की कला देखकर तो आँखें आश्चर्यचकित हो जाती हैं। मंदिर की दीवारों पर यहाँ देश-विदेश से आनेवाले यात्रियों को भी उनकी वेशभूषा और मुद्राओं के द्वारा दरशाया गया है। खंभों की चमक देखकर तो लगता है जैसे उन पर अभी-अभी पॉलिश की गई हो। अगला पड़ाव था क्वींस बॉथ। व्यवस्था और तकनीक दोनों का अद्‌भुत संयोजन। यही सौंदर्य और शिल्पकला का नमूना कमल महल, एलीफेंट पैलेस, लक्ष्मी नरसिंह मंदिर और रायल पैलेस में देखने को मिला। जल संचय के लिए जिस बावड़ी का निर्माण वहाँ किया गया था उसके पिरामिडी आकार को देखकर तो कह सकते हैं कि शायद ही विश्वभर में इंजीनियरिंग का ऐसा अजूबा कहीं और देखने को मिले। अद्‌भुत! अरे रुकिए, अभी तो सबसे महत्त्वपूर्ण भाग शेष है, जिसे देखने के लिए कम-से-कम पूरा दिन चाहिए, विजय विट्‌ठल मंदिर।

अगले दिन सवेरे हम विट्‌ठल मंदिर पहुँचे। आजकल वहाँ तक पहुँचने के लिए सरकार ने बैटरी की गाड़ियों का प्रबंध कर दिया है। हम लोग भी मंदिर के द्वार तक इसी कार द्वारा पहुँचे। भीतर पहुँचते ही आँखें चकाचौंध। द्रविड़ शैली में बना यह मंदिर स्थापत्य शैली का अद्‌भुत नमूना है। विशाल प्रांगण बेजोड़ नजारा। सामने ही शिल्पकारों द्वारा निर्मित हंपी रथ जिसे कोणार्क के रथ की तरह बनाया गया था। आज के ५० रुपए के नोट पर इसी रथ की छवि अंकित है। शिल्प का अद्‌भुत नमूना और सामने था विट्‌ठल मंदिर का वह अचंभित करनेवाला भवन जिसके खंभों से विभिन्न वाद्य यंत्रों की ध्वनि निकलती हैं। इस अजूबे शिल्प को देखकर तो अंग्रेजों ने दो खंभे तुड़वाकर भी देखे, पर आज तक इसका रहस्य कोई भी नहीं जान पाया।

इसके बाद हम गए अंजना पर्वत। इसे हनुमानजी का जन्मस्थान कहा जाता है। यह मंदिर एक ऊँचे पर्वत पर स्थित है। लगभग ५०० से अधिक सीढ़ियों पर चढ़कर वहाँ पहुँचा जा सकता है। हमारे कुछ साथी वहाँ गए थे। दृश्य भव्य बताया गया पर मुझ जैसे इतना साहस नहीं कर पाए और कल्पना के नेत्रों से ही आनंद पा लिया। अब दोपहर बीत चली थी बहुत कुछ शेष था। सारे पर्वत शिखर दूर से दिखाए गए। बालि पर्वत, सुग्रीव पर्वत, मार्तंड पर्वत। हर शिखर राम की वनवास कथा बयान कर रहा था। सुग्रीव से मिलन हो या फिर बालि वध सबके अवशेष वहाँ शेष हैं। राम-लक्ष्मण का शबरी से मिलन, शबरी गुफा, पंपा सरोवर आदि अनेक रामायण गाथाएँ यहाँ के कण-कण में बिखरी थीं।

अब रह गई थी तुंगभद्रा नदी किनारे की यात्रा। सुना था एक गोलाकार टोकरी जैसी तथाकथित नौका या कोरिकल या कोएरकल में बैठ तुंगभद्रा नदी से हंपी अवशेष देखने का मजा ही कुछ और है। और इस तरह हम पहुँचे नदी किनारे। वहाँ स्थित प्रचीन राम मंदिर तो बंद हो चुका था खैर हम बैठ उस टोकरीनकेमा नाव में।

खेवनहार मल्लाह हमारे साथ और संयोग से उसका नाम भी हनुमान था। उसने इस रोमांचक यात्रा के साथ बहुत सी कथा-कहानियाँ सुनाकर हमारा मनोरंजन किया। टोकरी को गोल-गोल घुमाकर उसने जो रोमांच का अनुभव कराया वह अनोखा था। नदी भी विशाल और बहुत ही गहरी उसमें हम छोटे-छोटे भँवर देख सकते थे। सबसे अधिक रहस्यमय थी नदी किनारे की वे अद्‌भुत जो कह रही थी अनेक पौराणिक गाथाएँ।

अरे-अरे कैसे भूल गए हम गणेश मंदिर। विशाल गणेश प्रतिमा। कहते हैं कि गणेशजी ने एक दिन इतने लड्डू खा लिए कि उनका पेट फूल गया और उन्होंने अपनी नाक से अपना पेट बाँध लिया और शिल्पकार ने उसी विशाल उदर की परिकल्पना इस भव्य मूर्ति में साकार कर दी। विशेष बात यह है कि मूर्ति जिस स्थल पर है वहाँ बिल्कुल अँधेरा है, पर उसका निर्माण इस प्रकार किया गया है कि प्रत्येक कोण से उस पर सूर्य का प्रकाश स्पर्श करता है। इसलिए मूर्ति के समीप जाकर देखने पर वह पूरी तौर पर प्रकाशित हो जाती है। फोटो खींचकर देखी सचमुच गणेशजी की प्रतिमा चमचमा रही थी। हंपी के इन खंडहरों में ऐसे अनेक अजूबे छिपे हैं। ये कोई चमत्कार नहीं बल्कि उस जमाने के तकनीकी विकास के अद्‌भुत प्रमाण हैं। वास्तुकला के अद्‌भुत उदाहरण हैं। इंजीनियरिंग की परख करनी हो तो इन अवशेषों में परखा और उससे सीखा जा सकता है। हमारी सभ्यता के विकास के ये प्राचीन अवशेष आज भी बार-बार इतिहास की महान् गाथाओं को दोहरा रहे हैं। सचमुच महान् है हमारा इतिहास, अनमोल है हमारी ये धरोहर। सदियों पहले कला, विज्ञान और तकनीक का यह संगम केवल केवल हमारी ही सभ्यता में देखा जा सकता है। इतिहास, पुराण, कला, शिल्प, विज्ञान, तकनीकी और न जाने क्या-क्या इन अवशेषों में शेष हैं। हमें इन्हें पहचानना है, अभी तो कुछ खोजना है। विश्व विरासत के रूप में स्थापित यह प्राचीन धरोहर अनमोल है, हमारी पहचान है, इन पर हमें गर्व है और इनकी सुरक्षा हमारा धर्म है।

साअ
९९ आनंद लोक
नई दिल्ली-११००४९
दूरभाष : ९३१२८८४१६९

बाल-कहानी

नम्रता की मुस्कान

● दिनेश विजयवर्गीय

सोनपुरा गाँव के सेठ थे सुंदर लाल। वह तरल, सरल स्वभाव के थे। सेठ होकर भी उन्हें अपनी संपन्नता पर कभी गर्व नही था। लोगों के प्रति उनके दिल में सहानुभूति संवेदना का भाव सदा बना रहता। सत्कार्यों में दानी बनकर सहयोग करते। गाँव के लोग भी उन्हें नम्रता भरा सम्मान देते।

गरमी के शुरू में वह पिछले कुछ वर्षों से शहर से जोड़नेवाली सड़क के किनारे घने नीम के पेड़ की छाया में प्याऊ लगवाते। मटकियों का शीतल जल पीकर लोग अपनी प्यास बुझाकर दिल से संतुष्टि का भाव जताते। शीतल जल की यह प्याऊ सोनपुरा गाँव में ही नहीं आसपास के गाँवों में भी इसकी प्रशंसा होती। सभी सेठ के उपकार पर कृतज्ञता प्रगट करते। सड़क से गुजरनेवाले राहगीर प्याऊ का जल पीकर आगे बढ़ते।

एक दिन दोपहरी के बाद का समय था। प्याऊ पर कोई प्यासा राहगीर भी नहीं था। तभी मटकी के मुँह पर ढकी कटोरी मटकी से बोली, "बहिन, तुम्हारा शीतल जल पीकर लोग तुम्हें दिल से धन्यवाद देते हैं। महिलाएँ तो तुम्हारा शीतल जल बच्चों को पिलाने के लिए छोटे जल-पात्रों में जल लेकर उनकी भी प्यास बुझाती है।"

मटकी बोली, "गरमी में साफ-सुथरा शीतल जल किसी अमृत से कम नहीं होता। जो भी व्यक्ति इस सड़क से गुजरता, चाहे वह पैदल हो या किसी ह्वीकल पर उसका प्रयास यही रहता है वह इस प्याऊ का जल पीकर ही आगे का सफर तय करे। मुझे भी खुशी होती है जब वह मेरा शीतल जल पीकर संतुष्टि का भाव प्रस्तुत करता है।"

"बोलो कटोरी बहिन, तुम भी अपनी कुछ बात कहना चाह रही थी न?"

"हाँ! कई दिनों से सोच रही थी। तुमसे अपने दिल की बात कहूँ।" कटोरी ने झिझकते तुम्हारे हुए कहा।

"कहो न बहिन, यहाँ हम एक-दूसरे के सहयोगी हैं। मेरे मुँह पर तुम्हारे ढके रहने से बाहर की सूक्ष्म गंदगी भी जल में प्रवेश नहीं कर पाती। शुद्ध जल को बनाए रखने में तुम्हारा तो प्रशंसनीय योगदान है।"

"बहिन, मुझे भी कई दिनों से तुम्हारे शीतल जल पीने की चाह बनी हुई है। मैं भी तो अपनी प्यास तुम्हारे मीठे शीतल जल से मिटाकर लोगों की तरह संतुष्ट होना चाहती हूँ।" कटोरी ने कई दिनों से दिल में छिपी बात प्रगट करते हुए मटकी से कहा।

सुपरिचित लेखक। राष्ट्रीय पत्र-पत्रिकाओं में कहानी, कविता, बाल-कहानी एवं हास्य-व्यंग्य लेख प्रकाशित। राजस्थान साहित्य अकादमी द्वारा बाल साहित्य का राज्य स्तरीय सम्मान सहित अनेक सम्मानों से सम्मानित।

बस इतनी सी बात। जब मैं सैकड़ों लोगों की प्यास बुझाती हूँ तो भला फिर तुम्हारी प्यास मैं क्यों नहीं बुझाऊँगी? पर मेरी एक बात ध्यान से सुनो। तुम देखती हो कि जो भी कोई पानी पीने आता है तो झुककर रामझारे से निकली जलधारा को पीकर अपनी प्यास बुझाता है। उसमें नम्रता का भाव होता है। जबकि तुम तो झुकना तो दूर मेरे सिर पर सवार हो। तुममें नम्रता जैसा कोई भाव ही नहीं है। अब बताओ बहिन, तुम अब तक शीतल जब का उपयोग कर अपनी प्यास नहीं बुझा सकी तो इसमें तुम्हारा ऊँचे स्थान पर रहने का घमंडी सोच ही बाधित हुआ है?

कटोरी ने पल भर मटकी की सीख भरी बात पर चिंतन किया। उसे लगा कि सच में मैं प्यासी हूँ तो मेरे ऊँचे स्थान पर बने रहने का झूठा गर्व ही है। मटकी बहिन का कथन सही है।

कटोरी ने मटकी से बोला, "बहिन, तुम सही कह रही हो। मुझे नम्रता भरा व्यवहार करना चाहिए था। तुमने मेरी आँखें खोल दीं। मैं व्यर्थ ही अपने ऊँचे स्थान पर झूठा गर्व कर रही थी। अब कटोरी नीचे उतर मटकी के सामने झुककर जी भरकर शीतल जल से बुझाई अपनी प्यास बुझाई और मटकी का खुश होकर आभार जताने लगी। अब उसके चेहरे पर नम्रता की मुस्कान थी। मटकी भी अब खुश थी कि कई दिनों से उसने प्यासी कटोरी की सही ज्ञान देकर प्यास बुझाई।"

२१५, मार्ग-४, रजत कॉलोनी
बूँदी-३२३००१ (राजस्थान)
दूरभाष : ९४१३१२८५१४

पाठकों की प्रतिक्रियाएँ

'साहित्य अमृत' का मई २०२२ अंक मिला। संपादकीय में हिंदी का प्रश्न उठाया है। आपकी चिंता सर्वथा उचित है, परंतु मेरा विश्वास है कि हिंदी के विरोधी हिंदी का कुछ नहीं बिगाड़ सकते। हिंदी की अपनी एक अंतरिम शक्ति है, वह उसी के कारण आगे बढ़ रही है और बढ़ती जाएगी। 'स्मृतियाँ' कहानी पढ़कर लगा, मानो लेखक ने मेरे जीवन की दिनचर्या अंकित कर दी हो। श्रीमती इंदिरा मोहन की कविता 'मौन रहकर बोलता है' काफी अच्छी लगी। 'राही' का उर्वशी पर लेख उनकी पुस्तक का परिचय देता है। रामदरशजी पर डॉ. निश्चल का लेख उनके व्यक्तित्व और कृतित्व का पूर्ण परिचायक है। ब्रेख्त में नाटक-सिद्धांतों को भारतीय नाट्य स्वीकार नहीं कर सकता। पात्र और अभिनेता का तादात्म्य जिन दृश्यों में होता है, वही प्रभावी होते हैं। यह अंक स्वतंत्रता संग्राम के अनेक बलिदानियों का परिचय देता है। 'लँगड़ी' कहानी कम, लेख अधिक लगा। यह कहानी मिजोरम के सामाजिक और सांस्कृतिक वातावरण से मनोरंजक ढंग से परिचित कराती है। अमेरिकी कहानी 'एक सूर्यास्त का ब्योरा' निर्मल वर्मा की कहानी 'कला' का स्मरण करा देती है।

—मथुरेश नंदन कुलश्रेष्ठ, जयपुर (राज.)

'साहित्य अमृत' का अप्रैल अंक मिला। संपादकीय में आपने सही कहा कि श्री राम के आदर्श हम लोगों के जीवन में पहले अधिक रचे-बसे थे किंतु अब नारों ने प्रमुखता पा ली है। नरेंद्र कोहलीजी की कहानी बहुत मार्मिक है, हम भले अपने जीवन का जोड़, घटा, गुणा, भाग अपने अनुसार करें, परिस्थितियाँ एक झटके में उन्हें कितना बेमानी कर देती हैं। प्रकाश मनुजी ने नन्हे नंदू की जिज्ञासा, कौतूहल व चिंता का बहुत भावपूर्ण चित्रण किया है। विपिन पवारजी की कहानी 'इस रिश्ते को क्या नाम दूँ' बहुत रोचक लगी। उन्होंने बहुत विस्तार से एक-एक घटना को कथासूत्र में पिरोया है, पाठक पूरी तरह रम जाता है इस रिश्ते के साथ। भैरूलाल गर्गजी की रचना कवि सम्मेलन के बहाने दिनकरजी से भेंट बहुत अच्छी लगी। 'महुआ डबर' में कादंबरी मेहराजी ने अंग्रेजों की क्रूरता व पाशविकता को उजागर किया है। लाखों देशवासियों के बलिदान को हम लोगों का नमन। 'अमेरिका का हिंदू समाज···पहचान की तलाश' यथार्थ व व्यावहारिक कठिनाइयों का सटीक चित्रण करती है। लघु कथाएँ व कविताएँ सभी अच्छी लगीं, बाल स्वरूप राहीजी की गजलें विशेष रूप से। बाल-कहानी में मधु काँकरियाजी की कहानी क्षमा चाहती हूँ, थोड़ी खटकती है। उन्होंने मछली की पीड़ा को समझाने के लिए नविका द्वारा कबीर को पानी में झुकाना भले कुछ सेकेंड ही, मुझे भयभीत कर गया।

—माला श्रीवास्तव, ग्रेटर नोएडा (उ.प्र.)

'साहित्य अमृत' का मई २०२२ अंक मिला। यह अंक हमेशा की तरह पठनीय है और कुछ रचनाएँ महत्त्वपूर्ण हैं। ओम निश्चल का रामदरश मिश्र का इंटरव्यू, बाल स्वरूप राही का 'निशि दिन राम', गोपाल चतुर्वेदी का व्यंग्य तथा आपका संपादकीय इस अंक की उपलब्धि हैं। आपके संपादकीय में देश में हिंदी की स्वीकार्यता के जो प्रमाण दिए हैं, उन्हें सभी को गंभीरता से लेते हुए उनका पालन करना चाहिए। आपने बच्चों में बाल साहित्य तथा बाल पत्रिकाओं के पढ़ने की समस्या उठाकर उसका हल करने के लिए प्रेरित किया है। बच्चों में पाठ्य-पुस्तकों के अतिरिक्त बाल साहित्य को भी पढ़ना अनिवार्य करना चाहिए और हर स्कूल में बाल पुस्तकालय होने चाहिए, तभी बच्चों का सही मानसिक विकास होगा।

—कमल किशोर गोयनका, दिल्ली

मई २०२२ का अंक समय पर मिल गया। हिंदी राष्ट्रभाषा का दर्जा मिलने के बावजूद भी कुछेक राज्यों में इसे तहेदिल से अपनाया न जा सका। सरकार भी कोई ठोस कदम नहीं उठा सकी। अंग्रेज परदेशी थे, लेकिन अंग्रेजी भाषा को ब्रिटिश शासन काल में १८३५ ई. में इग्लिंश एजुकेशन एक्ट 1835 पारित कर अंग्रेजी भाषा को शिक्षा में अनिवार्य विषय बना दिया गया और देश के सभी राज्यों में इसे तत्काल प्रभाव से लागू किया गया। आजादी के ७५ वर्षों बाद भी यदि अंग्रेजी का वर्चस्व कायम है और हिंदी अपना सम्मानजनक स्थान नहीं पा सकी है, यह दुखद है और लज्जाजनक भी।

—दुर्गा प्रसाद, बेंगलुरु (कर्नाटक)

अप्रैल २०२२ अंक में संपादकीय ने मन को सोचने के लिए दिशा दी, साथ व्यथित भी कर दिया। राम तो हमारे सर्वस्व हैं, आज के दूषित अन्न-जल ने ही, राम जो पूरे विश्व के हैं, उनकी व्याख्या बदल दी है, आपके संपादकीय विचारों को प्रणाम करती हूँ। नरेंद्र कोहलीजी का चला जाना हमारे देश की बहुत बड़ी हानि है। कहानी बहुत पहले पढ़ी थी, याद ताजा हो गई। हम विक्रम संवत् भूलते जा रहे हैं। बहुत अच्छी जानकारी दी है। मादाम कामाजी का स्मरण करा देना आज की स्थिति में एकदम उपयुक्त है। हिंदू समाज की तलाश अमेरिका में अपने आपमें विशिष्ट है। सरदार अजीत सिंह की कर्म निष्ठा को प्रणाम।

—विद्या केशव चिटको, नासिक (महाराष्ट्र)

'साहित्य अमृत' का मई २०२२ अंक प्राप्त कर मन हर्षित हो उठा। अंक का मुखपृष्ठ देख बचपन की यादें ताजा हो गईं। बालपन में मैं भी अपने मित्रों के साथ गरमियों एवं बरसात में जल-क्रीड़ा करता था। वह कितना सुनहरा समय था! काश, वह समय पुन: वापस आता। अन्य अंकों की तरह यह अंक भी पठनीय है। संपादकीय 'सबकी हिंदी' के माध्यम से संपादकजी ने हिंदी के विकास के लिए जो सुझाव दिए हैं, उन्हें हम सभी भारतीयों को आत्मसात् करना चाहिए और भिन्न-भिन्न प्रांतों की सरकारों को भी। हर प्रांत में बच्चों के लिए रोचक हिंदी साहित्य उपलब्ध होने चाहिए। स्मरण 'महामानव थे डॉ. समरजीत जैना' में प्रेमपाल शर्माजी ने डॉ. जैना के महान् व्यक्तित्व एवं कृतित्व का चित्रण बखूबी किया है। यह स्मरण पढ़कर डॉ. जैना के मानवता के लिए किए गए कार्यों की संपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है। अन्य रचनाएँ भी पठनीय एवं जानकारीपरक हैं। एक शानदार अंक के लिए बधाई स्वीकारें।

—अमित सहगल, लखनऊ (उ.प्र.)

वर्ग पहेली (१९५)

अगस्त २००५ अंक से हमने '**वर्ग पहेली**' प्रारंभ की, जिसे ज्ञान-विज्ञान की अनेक पुस्तकों के लेखक **श्री विजय खंडूरी** तैयार कर रहे थे; उनके देहावसान के उपरांत अब **श्री ब्रह्मानंद खिच्ची** इसे तैयार कर रहे हैं। हमें विश्वास है, यह पाठकों को रुचिकर लगेगी; इससे उनका हिंदी ज्ञान बढ़ेगा और पूर्व की भाँति वे इसमें भाग लेकर अपना ज्ञान परखेंगे तथा पुरस्कार में रोचक पुस्तकें प्राप्त कर सकेंगे। भाग लेनेवालों को निम्नलिखित नियमों का पालन करना होगा—

१. प्रविष्टियाँ छपे कूपन पर ही स्वीकार्य होंगी।
२. कितनी भी प्रविष्टियाँ भेजी जा सकती हैं।
३. प्रविष्टियाँ ३० जून, २०२२ तक हमें मिल जानी चाहिए।
४. पूर्णतया शुद्ध उत्तरवाले पत्रों में से ड्रा द्वारा दो विजेताओं का चयन करके उन्हें तीन सौ रुपए मूल्य की पुस्तकें पुरस्कारस्वरूप भेजी जाएँगी।
५. पुरस्कार विजेताओं के नाम-पते अगस्त २०२२ अंक में छापे जाएँगे।
६. निर्णायक मंडल का निर्णय अंतिम तथा सर्वमान्य होगा।
७. अपने उत्तर '**वर्ग पहेली**', **साहित्य अमृत, ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२** के पते पर भेजें।

बाएँ से दाएँ—

१. काश्तकार, किसान (४)
४. इतना होने पर भी (४)
७. अपमान और दुर्गति, बदनामी (उर्दू) (४)
९. ईश्वर का दूत, पैगंबर (२)
१०. छोटा वन (३)
१२. घोर परिश्रम करना, बहुत अधिक कष्ट सहना (३)
१४. बट मारी, छापा (२)
१५. संलिप्त, लिपटा (२)
१७. जिसे जवाब या उपाय न सूझे, उदास, मंद (४)
१९. व्यवहार में सच्चा, ईमानदार (४)
२०. एक पौधा, जिसकी फलियों में काले-सफेद बीज होते हैं (२)
२१. पुष्प-सार, सुगंधसार (२)
२३. कच्चा खरबूजा या ककड़ी (३)
२५. कथन, अग्रभाग, मुँह (३)
२७. गवाह, ज्ञान संबंधी दोहे या पद्य (२)
२९. रहट, कुएँ से पानी निकालने का यंत्र (४)
३१. छुई-मुई, शर्मदार (४)
३२. कद्र करनेवाला, धन और मर्यादावाला, मालिक (४)

ऊपर से नीचे—

१. जमने का भाव, भीड़, मजमा (३)
२. कठपुतली (३)
३. फलों का तरल अंश (२)
४. एक संख्या (३)
५. समय, बेला, तिनका, एक महीना (२)
६. मुंशी, क्लर्क, लिपिक (उर्दू) (३)
८. छोटा जलाशय, बावली (३)
११. प्रतिदिन, रोजाना, हररोज (४)
१३. अश्वनी कुमार (३)
१४. एक प्रकार की घास (२)
१६. अनसुहाता, अप्रिय (४)
१८. राज्याभिषेक, स्त्रियों का एक शिरोभूषण (३)
१९. अज्ञ, सदावर्त, अधिवेशन (२)
२१. संकल्प, विचार (३)
२२. अखाबर, पत्रिका, अश्वारोही सेना (३)
२४. पतली रोटी (३)
२५. किसी शब्द में वर्णों का क्रम, स्पेलिंग (३)
२६. मजदूर की दिनभर की कमाई या काम, दिहाड़ी (३)
२८. झुँझलाहट, कुढ़न (२)
३०. हनन, कत्ल (२)

वर्ग पहेली (१९४) का हल अगले अंक में।

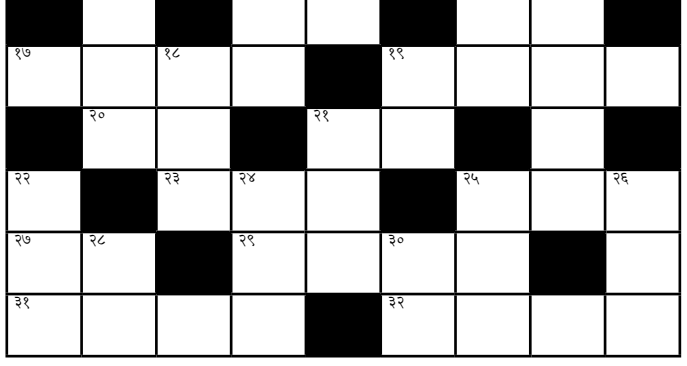

प्रेषक का नाम : .....

पता : .....

.....

.....

दूरभाष : .....

वर्ग पहेली (१९३) का शुद्ध हल

१ आ	२ स	■	३ हा	व	४ का	■	५ बे	ली
६ ना	मा	७ व	ली	■	८ ज	९ वा	नी	■
■	१० हू	क	■	११ ध्या	■	गजा	■	१२ स्था
१३ ला	त	■	१४ म	न	१५ उ	ल	झ	ना
ल	■	■	ह	■	ठा	■	■	प
१६ म	न	१७ फि	र	१८ जा	ना	■	१९ भि	न्न
न	■	रं	■	वा	■	२० शि	क्षा	■
■	२१ ब	गी	२२ चा	■	२३ बि	ल	ट	२४ ना
२५ स्वा	द	■	२६ चा	व	ल	■	२७ न	द

★ पुरस्कार विजेता ★

१. **श्रीमती माला श्रीवास्तव**
डी-३६, सीनियर सिटीजन होम कॉम्प्लेक्स पी-४
ग्रेटर नोएडा-२०१३१५
दूरभाष : ९९५३६४९०९१

२. **श्री दिनकर सहल**
डी-३/३४९८, वसंत कुंज
नई दिल्ली-११००७०
दूरभाष : ९८७१९८०१९०

पुरस्कार विजेताओं को हार्दिक बधाई।

वर्ग-पहेली १९३ के अन्य शुद्ध उत्तरदाता हैं—सर्वश्री सतेंद्र शास्त्री, संतलाल रोहिल्ला (महेंद्रगढ़), शकुंतला (कनीना), जगदीश राय गर्ग (मानसा), विनीता सहल (मुंबई), रामकिशन पंवार (हनुमानगढ़), सुनीता श्रीवास्तव (रायपुर), राम प्रकाश राय (गोरखपुर), शांति स्वरूप (हरिद्वार), आनंद शर्मा, दिनेश खत्री, राखी सिंह (दिल्ली)।

'रुपए का भ्रमण पैकेज' कृति लोकार्पित

७ मई को नई दिल्ली में साहित्य अकादेमी सभागार में प्रसिद्ध लेखिका और भारत सरकार में प्रधान आयकर आयुक्त डॉ. सुधा कुमारी के प्रभात प्रकाशन से प्रकाशित व्यंग्य-संग्रह 'रुपए का भ्रमण पैकेज' का विमोचन सर्वश्री प्रेम जनमेजय, लालित्य ललित, सुरेश कांत, एम.एम. चंद्रा, रणविजय राव तथा सुनीता शानू द्वारा किया गया। कार्यक्रम की अध्यक्षता कर रहे डॉ. प्रेम जनमेजय ने लेखिका के गंभीर दृष्टिकोण, विश्वव्यापी सामाजिक सरोकारों और व्यापक कैनवास की सराहना की। डॉ. सुरेश कांत ने कहा कि व्यंग्य विधा स्वयं अपना लेखक चुनती है और भविष्य को उनसे काफी अपेक्षाएँ हैं। संचालन किया डॉ. लालित्य ललित ने। □

राहुल सांकृत्यायन की जन्मजयंती मनाई गई

८ अप्रैल को प्रयागराज में 'सर्जनपीठ' की ओर से 'अथातो घुमक्कड़ जिज्ञासा' के प्रणेता महापंडित राहुल सांकृत्यायन के १२९वें जन्मदिवस पर 'राहुल सांकृत्यायन की दृष्टि और सृष्टि' विषयक एक अंतर्जालिक राष्ट्रीय बौद्धिक परिसंवाद का आयोजन किया गया। अध्यक्षता हिंदी साहित्य सम्मेलन के प्रधानमंत्री श्री विभूति मिश्र ने की। सर्वश्री धारवेंद्र प्रताप त्रिपाठी, पृथ्वीनाथ पांडेय, आशा राठौर, उदय, विद्याप्रभाकर, कनुप्रिया प्रचंडिया ने अपने विचार रखे। □

'प्रवासी मंच' कार्यक्रम संपन्न

२६ अप्रैल को साहित्य अकादेमी के प्रतिष्ठित कार्यक्रम 'प्रवासी मंच' में यू.के. से पधारीं लेखिका श्रीमती दिव्या माथुर ने अपनी रचनाएँ प्रस्तुत कीं। सुश्री अलका सिन्हा ने उनकी कहानी '२०५०' अपने स्वर में प्रस्तुत की। दिव्याजी ने अपनी स्वरचित कुछ छोटी कविताएँ और गजलें प्रस्तुत कीं। सर्वश्री अनिल जोशी, लक्ष्मी शंकर वाजपेयी, अलका सिन्हा, नारायण कुमार, विज्ञान व्रत, रमा पांडेय, रेखा सेठी, साधना अग्रवाल, नरेश शांडिल्य आदि ने अपने विचार व्यक्त किए। आरंभ में साहित्य अकादेमी के सचिव श्री के. श्रीनिवासराव ने श्रीमती दिव्या माथुर का स्वागत साहित्य अकादेमी की पुस्तकें भेंट करके किया। संचालन साहित्य अकादेमी के संपादक (हिंदी) श्री अनुपम तिवारी ने किया। □

'विश्व पुस्तक दिवस' पर परिसंवाद संपन्न

२३ अप्रैल को साहित्य अकादेमी द्वारा विश्व पुस्तक दिवस के अवसर पर 'मेरे जीवन पर पुस्तकों का प्रभाव' विषयक एक परिसंवाद का उद्घाटन पंजाबी लेखिका श्रीमती अजीत कौर ने किया। विभिन्न क्षेत्रों के प्रतिष्ठित व्यक्तियों सर्वश्री गिरीश्वर मिश्र, ऑस्कर पुजोल, विद्या बिंदु सिंह, सुनील त्रिवेदी, दीपक करंजीकर, कविता द्विवेदी, शुभा शर्मा, के.के. श्रीवास्तव, भूमा वीरवल्ली एवं प्रदीप सौरभ ने अपने वक्तव्य दिए। आरंभ में साहित्य अकादेमी के सचिव श्री के. श्रीनिवासराव ने सभी का स्वागत करते हुए कहा कि पुस्तकें हमारी विविधता की मुख्य प्रवक्ता होती हैं। कार्यक्रम के अंतिम सत्र की अध्यक्षता श्री निर्मलकांति भट्टाचार्जी ने की। संचालन साहित्य अकादेमी के संपादक (हिंदी) श्री अनुपम तिवारी ने किया। □

'सप्तपर्णी सम्मान' श्री संदीप राशिनकर को

मध्य प्रदेश हिंदी साहित्य सम्मेलन, भोपाल द्वारा संयोजित चर्चित पत्रिका 'समकालीन प्रेरणा' द्वारा स्व. उर्मिला तिवारी की स्मृति में स्थापित प्रतिष्ठित सप्तपर्णी सम्मान-२०२१ के प्रतिष्ठित चित्रकार व कलाधर्मी श्री संदीप राशिनकर को देने का निर्णय लिया गया है। □

आई.आई.एम.सी. में 'राजभाषा सम्मेलन' संपन्न

२१ अप्रैल को नई दिल्ली में भारतीय जन संचार संस्थान (आई. आई.एम.सी.) द्वारा नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति के तत्त्वावधान में राजभाषा सम्मेलन संपन्न हुआ। शुभारंभ सत्र की अध्यक्षता कर रहे प्रो. राव ने कहा कि आमतौर पर हिंदी में पाठ्य पुस्तकों की कमी के कारण एम.बी.ए., बी-टेक आदि के विद्यार्थी हिंदी माध्यम अपनाने से कतराते हैं। मुख्य अतिथि डॉ. मीनाक्षी जौली (संयुक्त सचिव, राजभाषा विभाग), मुख्य वक्ता पद्मश्री आलोक मेहता ने अपने संबोधन में भाषाई आत्मनिर्भरता पर बल देते हुए कहा कि हिंदी में ही कार्य करने पर जोर दिया जाए। प्रो. संजय द्विवेदी ने विषय प्रवर्तन करते हुए कहा कि हिंदी को राजभाषा से एक कदम आगे बढ़कर संपर्क भाषा बनाने की जरूरत है।

इस अवसर पर भारतीय जनसंचार संस्थान द्वारा प्रकाशित पत्रिका 'राजभाषा विमर्श' का भी लोकार्पण किया गया। धन्यवाद संस्थान के अपर महानिदेशक श्री आशीष गोयल ने दिया। संचालन लघु पाठ्यक्रम एवं भारतीय सूचना सेवा विभाग में समन्वयक डॉ. विष्णुप्रिया पांडेय ने किया।

तकनीकी सत्र को श्री रघुवीर शर्मा (सहायक निदेशक, राजभाषा) ने संबोधित किया। इस सत्र की अध्यक्षता श्री कुमार पाल शर्मा (उप निदेशक, उत्तर क्षेत्रीय कार्यान्वयन समिति) ने की। धन्यवाद ज्ञापन सह प्राध्यापक डॉ. राकेश उपाध्याय ने दिया। संचालन सुश्री रीता कपूर ने किया। समापन सत्र में हंसराज कॉलेज की प्राचार्या प्रो. रमा मुख्य अतिथि रहीं। सत्र को प्रो. अनुभूति यादव व प्रो. गोविंद सिंह ने विशिष्ट अतिथि के रूप में संबोधित किया। शोध पत्रिका 'संचार माध्यम' का लोकार्पण भी किया गया। धन्यवाद ज्ञापन डॉ. मीता ने और संचालन डॉ. कौंडल ने किया। □

'विजयिनी' का लोकार्पण संपन्न

३ अप्रैल को हिंदी-संस्कृत की विदुषी और संस्कृत विश्वविद्यालय की पूर्व कुलपति डॉ. सुधा पांडे द्वारा रचित नाटिका 'विजयिनी' का

भव्य लोकार्पण ओ.एन.जी.सी. अकादमी, देहरादून के नेहरू सभागार में संपन्न हुआ। हिंदी साहित्य समिति, देहरादून के तत्त्वावधान में आयोजित इस समारोह की मुख्य अतिथि उत्तराखंड शासन की अपर सचिव श्रीमती राधा रतूड़ी थीं, जबकि सारस्वत अतिथि के रूप में वरिष्ठ कवि श्री असीम शुक्ल, पूर्व पुलिस महानिदेशक श्री अनिल रतूड़ी, पूर्व प्राचार्य डॉ. मधु शर्मा एवं विशिष्ट अतिथि के रूप में ओ.एन.जी.सी. के कार्यकारी निदेशक श्री मनोज बड़थ्वाल मंचासीन थे। अध्यक्षता गीतकार डॉ. राम विनय सिंह ने की। श्रीमती डॉली डबराल ने स्वागत उद्‌बोधन किया। □

'संविधान की दिशाएँ' विषय पर व्याख्यान संपन्न

विगत दिनों भोपाल में सप्रे संग्रहालय में व्याख्यान कार्यक्रम में 'भारतीय संविधान' से जुड़े विविध पक्षों पर विद्वान् वक्ताओं के वक्तव्य हुए। अपने उद्‌बोधन में मुख्य अतिथि श्री गिरीश गौतम ने कहा कि भारतीय संविधान कोई कठोर किताब नहीं, बल्कि 'लचीला' है। यही इसकी खूबी भी है। 'भारतीय संविधान और न्यायपालिका' विषय पर मध्य प्रदेश लोकसेवा आयोग के पूर्व अध्यक्ष श्री अशोक कुमार पांडेय ने बड़े विस्तार से सरल शब्दों में अपनी बात कही। पूर्व सांसद श्री रघुनंदन शर्मा ने 'भारतीय संविधान और विधायिका' पर प्रकाश डालते हुए कहा कि इसका गठन इसलिए हुआ, क्योंकि हमारे स्वतंत्रता सेनानियों के पराक्रम और तमाम तरह की स्थितियों के बाद अंग्रेजों ने मान लिया था कि ज्यादा समय तक यहाँ टिक पाना मुश्किल होगा। पूर्व मुख्य आयकर आयुक्त डॉ. राकेश कुमार पालीवार ने 'भारतीय संविधान और कार्यपालिका' पर विचार रखे। उन्होंने संविधान की व्याख्याओं और एक अधिकारी के रूप में कार्य करते हुए मिले अनुभवों को बड़ी बेबाकी से व्यक्त किया। 'भारतीय संविधान और नागरिक' विषय पर सामाजिक कार्यकर्ता श्री सचिन कुमार जैन ने कहा कि संविधान के केंद्र में 'नागरिक' ही है। सप्रे संग्रहालय के संस्थापक-संयोजक श्री विजयदत्त श्रीधर ने मूर्धन्य संपादक श्री रामबहादुर राय के शोध ग्रंथ 'भारतीय संविधान : अनकही कहानी' के महत्त्वपूर्ण अंशों का संदर्भ देते हुए आयोजन के उद्‌देश्य को रेखांकित किया। डॉ. शिवकुमार अवस्थी और श्री विवेक श्रीधर ने अतिथियों का स्वागत किया। आभार प्रदर्शन सप्रे संग्रहालय की निदेशक डॉ. मंगला अनुजा ने किया। □

'महाराणा' कृति लोकार्पित

८ मई को भारत सरकार के जलशक्ति मंत्री श्री गजेंद्र सिंह शेखावत के कर-कमलों से जानेमाने समाजसेवी, पेशे से सर्जन डॉ. ओमेंद्र रत्नू द्वारा लिखित एवं प्रभात प्रकाशन द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'महाराणा' का परिचय कार्यक्रम संपन्न हुआ। इस अवसर पर केंद्रीय मंत्री गजेंद्र सिंह ने कहा कि मुगल काल से लेकर अंग्रेज काल के बाद और आज तक वामपंथी इतिहासकारों ने हमें हमारे पूर्वजों के गौरवपूर्ण इतिहास से दूर रखने का काम किया। महाराणा प्रताप के गौरवपूर्ण इतिहास को वामपंथी इतिहासकारों ने खंडित किया और उसे एक जाति विशेष तक सीमित रखने का प्रयास किया लेकिन महाराणा प्रताप का शौर्य और प्रेरक इतिहास तत्कालीन समय के अखंड भारत के एक व्यक्ति से जुड़ा हुआ था। डॉ. रत्नू ने कहा कि उन्होंने इस पुस्तक को लिखने से पहले चार साल तक सिसोदिया वंश और महाराणाओं जीवन का गहन अध्ययन किया, पूरे मेवाड़ में घूम-घूमकर युद्ध-स्थलों, महाराणाओं के जीवन से जुड़े ऐतिहासिक स्थलों, किलों व महलों में खुद जाकर तथ्य जुटाकर पुस्तक लिखी है। यह कृति महाराणाओं के जीवन के कई ऐसे अनकहे पहलू समाज के सामने रखेगी, जो पूर्व इतिहासकारों द्वारा महाराणा प्रताप व सिसोदिया वंश के बारे में कहे गए कई झूठों पर से परदा उठाएगी।

पूर्व प्रशासनिक अधिकारी श्री संजय दीक्षित, ख्यातनाम इतिहासकार श्री नारायण लाल उपाध्याय व श्री रमणीक मान सिंह ने भी अपने विचार साझा किए। गौरतलब है कि इ-कॉमर्स वेबसाइट पर प्री-लॉन्च में बुक टॉप ट्रेंडिंग में रही और इसकी हजारों प्रतियाँ बुक करा दी गई हैं। संचालन जयपुर डायलॉग के संस्थापक श्री संजय दीक्षित ने किया। □

बिहार हिंदी साहित्य सम्मेलन का दो दिवसीय महाधिवेशन संपन्न

भारत की स्वतंत्रता के अमृत महोत्सव एवं महान् कथाकार फणीश्वर नाथ रेणु की जन्मशती को समर्पित बिहार हिंदी साहित्य सम्मेलन का ४१वाँ दो दिवसीय महाधिवेशन विगत २-३ अप्रैल, २०२२ को सम्मेलन के सभागार में धूमधाम से आयोजित किया गया।

दो दिनों तक अनेक सत्रों में अनेक कार्यक्रम संपन्न हुए। समापन समारोह का उद्‌घाटन न्यायमूर्ति श्रीमती मृदुला मिश्र, कुलपति चाणक्य राष्ट्रीय विधि विश्वविद्यालय का स्वागत भाषण, डॉ. रवींद किशोर सिन्हा, विशिष्ट अतिथि न्यायमूर्ति संजय कुमार, न्यायमूर्ति श्री राजेंद्र प्रसाद, डॉ. राजीव वर्धन आजाद, डॉ. अनिल सुलभ की अध्यक्षता में किया गया। संचालन डॉ. शंकर प्रसाद ने किया तथा धन्यवाद ज्ञापन सम्मेलन के प्रधानमंत्री डॉ. शिववंश पांडेय ने किया। इस अवसर पर कई पुस्तकों और बिहार हिंदी साहित्य सम्मेलन की 'रचना, शोध और आलोचना' की त्रैमासिक पत्रिका का भी लोकार्पण हुआ।

महाधिवेशन के दोनों दिनों के विभिन्न सत्रों में अनेक विद्वानों को सम्मानित किया गया—'आचार्य शिव पूजन सहाय सम्मान' डॉ. उदय प्रताप सिंह को, 'राष्ट्रकवि रामधारी सिंह 'दिनकर' सम्मान' पं. सुरेश नीरव, 'महापंडित राहुल सांकृत्यायन सम्मान' डॉ. राघवन बालशंकर, 'गोपालि संह 'नेपाली' सम्मान' डॉ. कुमार अरुणोदय, 'फणीश्वर नाथ 'रेणु' स्मृति सम्मान' पद्‌मश्री डॉ. जगदीश प्रसाद सिंह, 'रामवृक्ष बेनीपुरी सम्मान' श्री के.एस. भारद्वाज, 'पं राम दयाल पांडेय स्मृति सम्मान' डॉ. राज नारायण शुक्ल, 'केदार नाथ मिश्र 'प्रभात' सम्मान' डॉ. नरेश

कुमार 'विकल', 'डॉ. मृदुला सिन्हा स्मृति सम्मान' डॉ. कल्याणी कबीर, 'महाकवि आरसी प्रसाद सिंह सम्मान' डॉ. देवेंद्र तोमर, 'पं. छविनाथ पांडेय स्मृति सम्मान' श्री राम बालक सिंह, 'आचार्य नलिन विलोचन शर्मा सम्मान' डॉ. तपेश्वर नाथ प्रसाद, 'पं. मोहन लाल महतो 'वियोगी' सम्मान' डॉ. राम प्रवेश सिंह, 'राजा राधिका रमण प्रसाद सिंह सम्मान' श्री प्रभंजन भारद्वाज, 'आचार्य कलक्टर सिंह 'केशरी' स्मृति सम्मान' श्री राजेंद्र राज, 'पं. जनार्दन प्रसाद झा 'द्विज' सम्मान' श्री शंकर कैमुरी, 'लक्ष्मी नारायण सिंह 'सुधांशु' स्मृति सम्मान' डॉ. कृष्ण कुमार 'नाज', 'राम गोपाल शर्मा 'रुद्र' सम्मान' श्री जगत प्रकाश शर्मा, 'आचार्य जानकी वल्लभ शास्त्री स्मृति सम्मान' श्री मधुरेश नारायण, 'बाबा नागार्जुन सम्मान' श्री भगवती प्रसाद द्विवेदी, 'मेजर बलबीर सिंह 'भसीन' स्मृति सम्मान' सरदार महेंदर पाल सिंह ढिल्लन, 'कविवर पोद्दार रामावतार अरुण सम्मान' श्री अशोक श्रीवास्तव 'कुमुद', 'उर्मिला कॉल साहित्य साधना सम्मान' डॉ. राखी उपाध्याय, 'बच्चन देवी हिंदी सेवी सम्मान' प्रो. माला मिश्र, 'आचार्य देवेंद्र नाथ शर्मा स्मृति सम्मान' डॉ. प्रणव शास्त्री, 'अंबालिका देवी सारस्वत-साधना सम्मान' डॉ. अलका आनंद, 'आचार्य श्रीरंजन सूरिदेव स्मृति सम्मान' डॉ. सिद्धेश्वर प्रसाद सिंह, 'प्रकाशवती नारायण सम्मान' डॉ. कल्याणी सिंह, 'रामधारी प्रसाद विशारद सम्मान' प्रो. ओम प्रकाश मंडल, 'कामता प्रसाद सिंह 'काम' सम्मान' श्री उमेश कुमार पाठक 'रवि', 'कुमारी राधा स्मृति सम्मान' डॉ. माला प्रसाद, 'डॉ. कुमार विमल सम्मान' श्री चंद्रभानु आर्य, 'अनूप लाल मंडल स्मृति सम्मान' डॉ. नलिनी रंजन, 'ब्रजनंदन सहाय 'मोहन प्रेमयोगी' स्मृति सम्मान' श्री प्रेमेंद्र कुमार मिश्र, 'हास्य रसावतार पं. जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी सम्मान' श्री ओम प्रकाश पांडेय 'प्रकाश', 'डॉ. राम प्रसाद सिंह लोक-साहित्य-साधना सम्मान' डॉ. अमल सिंह 'भिक्षुक', 'पं. प्रफुल्ल चंद्र ओझा 'मुक्त' सम्मान' श्री सुनील कुमार, 'डॉ. मिथिलेश कुमारी मिश्र साहित्य साधना सम्मान' सुश्री नीतू सुदीप्ति नित्या, 'डॉ. सुभद्रा वीरेंद्र स्मृति सम्मान' सुश्री सोनी सुगंधा, 'विदुषी किशोरी देवी स्मृति सम्मान' डॉ. लक्ष्मी सिंह, 'रघुवीर नारायण स्मृति सम्मान' श्री बाल कृष्ण उपाध्याय, 'डॉ. सीताराम 'दीन' स्मृति सम्मान' श्री अरुण कुमार श्रीवास्तव, 'पीर मुहम्मद मूनिस सम्मान' मो. नसीम अख्तर, 'चतुर्वेदी प्रतिभा मिश्र साहित्य साधना सम्मान' डॉ. अलका वर्मा, 'पं. हंस कुमार तिवारी सम्मान' श्री सुशील ठाकुर, 'डॉ. भगवती शरण मिश्र स्मृति सम्मान' श्री कनक किशोर, 'श्री उपेंद्र महारथी कला-साधना सम्मान' डॉ. दिनेश दिवाकर, 'डॉ. मुरलीधर श्रीवास्तव 'शेखर' स्मृति सम्मान' श्री देवेंद्र सिंह आजाद, 'पं. रामचंद्र भारद्वाज स्मृति सम्मान' श्री ई. गणेशजी बागी, 'डॉ. एस.एन. पी. सिन्हा स्मृति सम्मान' श्री प्रशांत करण, 'रामेश्वर सिंह कश्यप सम्मान' श्री अनिमेश कुमार सिंह, 'डॉ. शांति जैन स्मृति सम्मान' डॉ. अनिता शर्मा, 'महंथ धनराजपुरी सम्मान' श्री धनंजय जयपुरी, 'श्री विजय अमरेश स्मृति सम्मान' डॉ. अकेला भाई, 'डॉ. काशी प्रसाद जायसवाल सम्मान' श्री निरंजन प्रसाद श्रीवास्तव, 'डॉ. दीनानाथ शरण स्मृति सम्मान' डॉ. वीरेंद्र कुमार दत्ता, 'डॉ. वीणा श्रीवास्तव स्मृति सम्मान' कुमारी राधा शैलेंद्र, 'डॉ. वीणा कर्ण स्मृति सम्मान' श्रीमती कात्यायिनी सिंह, 'पं रामनारायण शास्त्री स्मृति सम्मान' श्री अभिलाष दत्ता, 'श्रीमती गिरिजा वर्णवाल स्मृति सम्मान' श्रीमती संगीता सागर, 'श्री बलभद्र कल्याण स्मृति सम्मान' श्री हरिनंदन साह, 'डॉ. उषा रानी सिंह स्मृति सम्मान' श्रीमती अनीता मिश्र 'सिद्धि', 'राज कुमार प्रेमी स्मृति सम्मान' श्री मुशर्रफ परवेज, 'नृत्यर्षि डॉ. नगेंद्र प्रसाद 'मोहिनी' स्मृति सम्मान' नृत्यांगना सुश्री अनु सिंधी, 'श्रीमती शैलजा बाला स्मृति सम्मान' डॉ. मीना कुमारी परिहार 'मान्या', 'साहित्य सम्मेलन कौस्तुभ मणि सम्मान' डॉ. बबिता कुमारी, 'साहित्य शार्दुल सम्मान' डॉ. अमर पंकज को। □

ऑनलाइन कार्यक्रम संपन्न

विगत दिनों बालप्रहरी तथा बालसाहित्य संस्थान अल्मोड़ा, उत्तराखंड द्वारा 'बच्चों का सर्वांगीण विकास और ऑनलाइन कार्यशालाएँ' विषय पर अल्मोड़ा में आयोजित ४००वें ऑनलाइन कार्यक्रम के अध्यक्ष वरिष्ठ बाल साहित्यकार श्री रमेश तैलंग थे। अतिथियों का स्वागत संरक्षक श्री आकाश सारस्वत ने किया। संचालन कक्षा १२वीं की छात्रा मुस्कान तिवारी ने किया। कक्षा १०वीं की छात्रा अनुश्री सिंह तथा कक्षा ७वीं के छात्र चैतन्य बिष्ट ने भी अपने विचार रखे। प्रारंभ में बालप्रहरी के संपादक श्री उदय किरौला ने पिछली गतिविधियों की जानकारी देते हुए सहयोग के लिए अभिभावकों का आभार व्यक्त किया। इस अवसर पर सर्वश्री हूंदराज बलवाणी, सुधा भार्गव, संगीता बलवंत, राजकुमार जैन 'राजन', गौरव बाजपेयी 'स्वप्निल', रामप्रसाद राना, एकात्मता शर्मा, शोभा बिष्ट, शैलजा ठाकुर, नम्रता सिंह, देवसिंह राना, त्रिलोचन जोशी, माया पंत, नंद किशोर जोशी, गंगा आर्या, गौरीशंकर वैश्य, घनश्याम अडोला, अजरा परवीन, त्रिलोचन जोशी, सतीश चंद्र भगत, रविप्रकाश केशरी, श्याम पाटनी, विजय पांडेय, हेमंत चौकियाल, नरेंद्र रौतेला, किरन गुरुरानी, अविका तिवारी, डोरीलाल लोधी, रत्ना सुब्बा, दीक्षा जोशी, प्रेमप्रकाश पुरोहित सहित लगभग पाँच दर्जन शिक्षक, अभिभावक तथा बच्चों ने ऑनलाइन कार्यक्रम में प्रतिभाग किया। □

साहित्य संगम आयोजित

जीरकपुर ढकौली की संस्था साहित्य संगम ट्राइसिटी ने सुरजीत भवन, मोहाली में एक साहित्य समागम का आयोजन किया। प्रो. फूलचंद मानव की अध्यक्षता में पंजाबी कवियत्री श्रीमती सुरजीत कौर बैंस के आग्रह पर यह कार्यक्रम होता है। साहित्य के साथ ही संस्कृति, नृत्य, लोकगीत, संगीत के कार्यक्रम भी प्रस्तुत हुए। सर्वश्री मोरारी लाल अरोड़ा, नीना दीप, योगेश्वर कौर और फूलचंद मानव ने अपनी हिंदी रचनाओं का पाठ किया। □

तीन कविता-संग्रहों का विमोचन संपन्न

छत्तीसगढ़ हिंदी साहित्य मंडल द्वारा रायपुर के वृंदावन सभागार में आयोजित एक गरिमामय कार्यक्रम में आचार्य राजेंद्र प्रसाद पांडेयजी के कविता-संग्रह 'अतिथि देवो भव' (हिंदी) एवं छत्तीसगढ़ी में लिखी कविताओं के दो संग्रहों 'महतारी के हाथ' एवं 'मोर गाँव के बिहान' का विमोचन कार्यक्रम संपन्न हुआ। मुख्य अतिथि साहित्यिक पत्रिका 'ककसाड' के संपादक डॉ. राजाराम त्रिपाठी थे। सर्वश्री मृणालिका ओझा, रामकुमार बेहार एवं शीलकांत पाठक ने अपने विचार व्यक्त किए। सर्वश्री तेजपाल सोनी, रिक्की बिंदास, जे.के. डागर, बच्छावत, यशवंत यदु आदि ने भी अपनी कविताएँ प्रस्तुत कीं। अध्यक्षता आचार्य अमरनाथ त्यागी ने की। विशिष्ट अतिथि श्री अंबर शुक्ला अंबरीश एवं श्रीमती लतिका भावे थे। संचालन श्री सुनील पांडेय ने एवं आभार श्री गोपाल सोलंकी ने व्यक्त किया।

☐

लोकार्पण, त्रिभाषी कवि सम्मेलन व मुशायरा संपन्न

१७ मई को हिंदी लेखक संघ हैदराबाद की ५६९वीं मासिक गोष्ठी में कहानीकार डॉ. प्रेमलता श्रीवास्तव के द्वितीय कहानी-संग्रह 'वह सब झूठ था' का लोकार्पण राजस्थानी स्नातक संघ भवन में संपन्न हुआ। मुख्य अतिथि पूर्व हिंदी विभागाध्यक्ष डॉ. रवि रंजन थे। ई.सी.आई.एल के वरिष्ठ अधिकारी (राजभाषा) डॉ. राजनारायण अवस्थी एवं सम्माननीय अतिथि श्री श्याम चांडक ने लोकार्पित पुस्तक पर अपने विचार व्यक्त किए। वरिष्ठ हिंदी सेवी श्री श्याम सुंदर मूँदड़ा ने कहानियों की विस्तृत जानकारी प्रस्तुत की। डॉ. प्रेमलता श्रीवास्तव को शॉल और स्मृति-चिह्न प्रदान कर सम्मानित किया गया। इस अवसर पर त्रिभाषी (हिंदी, तेलुगु और उर्दू) कवि सम्मेलन व मुशायरा संपन्न हुआ, जिसकी अध्यक्षता उर्दू के शायर सलाहुउद्दीन नैयर ने की जिसमें सर्वश्री रमा बहैड, सुरेश गुगलिया, दीपक चिंडालिया वाल्मीकि, मीर बासित अली रईस, मसरूर आबिदी, अब्दुल अमीद खान, रामदास कृष्णा कामत, जी. परमेश्वर, दिनेश अग्रवाल शशि, डॉ. शेख सादिक पाशा, संतोष कुमार मिश्र 'माधुर्य', अनिल कुमार गुप्ता, सुहास भटनागर, श्याम चांडक, सूरज देशपांडे, विजय बाला स्याल, गोविंद अक्षय, जिद् दत उसलूबी, फरीदुदीन सादिक, प्रेमलता श्रीवास्तव, शायर सलाहुद्दीन नैयर, रत्नकला मिश्र ने काव्य-पाठ किया। ☐

'भारत २०४७ : सामूहिक संकल्पना' पुस्तक लोकार्पित

१३ मई को दिल्ली में दिल्ली विश्वविद्यालय एवं पंचनद शोध संस्थान के संयुक्त तत्त्वावधान में 'कैसा होगा भारत' विषय पर आयोजित संगोष्ठी में प्रसिद्ध शिक्षाविद् प्रो. बृज किशोर कुठियाला द्वारा संपादित एवं प्रभात प्रकाशन द्वारा प्रकाशित दो पुस्तकों 'भारत २०४७ : एक सामूहिक संकल्पना' और 'Bharat 2047 : A Collective Vision' का विमोचन किया गया। इनमें समाज के प्रबुद्ध विचारकों, चिंतकों और बुद्धिजीवियों ने भारत के शताब्दी वर्ष की अपनी सामूहिक संकल्पना को प्रस्तुत किया है। धर्म, विद्या, राजनीति, शिक्षा, भाषा, संस्कृति, विधि, विज्ञान, तकनीकी, कला, पर्यावरण, समाज और राष्ट्र के प्रमुख ३६ विषयों पर आगामी २५ वर्षों की सामूहिक परिकल्पना पर आधारित निबंधों (जिनमें १६ हिंदी में और २० अंग्रेजी भाषा में) को समाहित किया गया है। कार्यक्रम में 'भारत २०४७ : सामूहिक संकल्पना' विषय पर मुख्य प्रस्तुति प्रो. बृज किशोर कुठियाला ने दी। अध्यक्षता करते हुए दिल्ली विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो. योगेश सिंह ने कहा कि भारत आज सुरक्षा, शक्ति, शिक्षा, तकनीकी और विज्ञान के क्षेत्र में उन्नत राष्ट्र है, आज भारत राजनीतिक रूप से भी वैश्विक स्तर पर प्रभावी है। कैंपस के निदेशक प्रो. श्रीप्रकाश सिंह, प्रो. बलराम पाणी व डॉ. विकास गुप्ता भी मंचस्थ रहे। पुस्तक के लेखकों और विश्वविद्यालय के वरिष्ठ आचार्यों ने भी संगोष्ठी में भाग लिया और आम सहमति बनी कि हम पहले भविष्य के भारत के बड़े सपने देखेंगे, फिर उन सपनों को साकार करने के लिए पुरुषार्थ करेंगे। पंचनद शोध संस्थान, दिल्ली प्रांत के समन्वयक श्री संजय मित्तल ने संचालन किया। ☐

दो काव्य-पुस्तकें लोकार्पित

१४ मई को लखनऊ में सिटी मोंटेसरी स्कूल के संस्थापक व शिक्षाविद् डॉ. जगदीश गांधी ने अपने ही विद्यालय की छात्रा सुश्री सुलक्षणा मिश्रा की पुस्तक 'सीप के मोती' एवं 'द अनसंग वर्सेज' का लोकार्पण किया। ये दोनों पुस्तकें क्रमश: हिंदी व अंग्रेजी भाषा में काव्य-संग्रह हैं। इस अवसर पर सी.एस.एस. के पूर्व छात्र व पी.सी.एस. अधिकारी श्री दिव्यांशु पांडेय समेत कई प्रबुद्धजन उपस्थित थे।

☐

'रेखांकन फीचर' की पुस्तक लोकार्पित

१७ मई को अपनी विशिष्ट रेखांकन शैली से राष्ट्रीय ख्याति अर्जित कर चुके चित्रकार श्री संदीप राशिनकर की अभिनव चित्रकृति 'संदीप राशिनकर के विशेष रेखांकन फीचर' की सॉफ्ट कॉपी को चेन्नई की प्रतिष्ठित पत्रिका 'पुष्पांजलि' ने अपने मई अंक की पत्रिका में लोकार्पित किया। इसी विशेष चित्रकृति की पुस्तक का विमोचन पुणे में साहित्य प्रेमी मंडल, नांदेड़ सिटी की उपस्थिति में भी किया गया। ☐

'ये सब फूल तुम्हारे नाम' गजल कृति लोकार्पित

१५ मई को मुरादाबाद में साहित्यिक संस्था 'अक्षरा' के तत्त्वावधान में श्री जिया जमीर के गजल-संग्रह 'ये सब फूल तुम्हारे नाम' का लोकार्पण डॉ. माहेश्वर तिवारी की अध्यक्षता में हुआ। मुख्य अतिथि श्री मंसूर उस्मानी तथा विशिष्ट अतिथि सर्वश्री जमीर दरवेश, मक्खन मुरादाबादी व अनवर कैफी थे। संचालन श्री योगेंद्र वर्मा व्योम द्वारा किया गया। आभार श्री तसर्रुफ जिया ने व्यक्त किया ☐